अंक 4 | मई 2020 | अर्ध-वार्षिक | बेंगलूरु

Azim Premji University

आई वंडर...

रीडिस्कवरिंग स्कूल साइंस

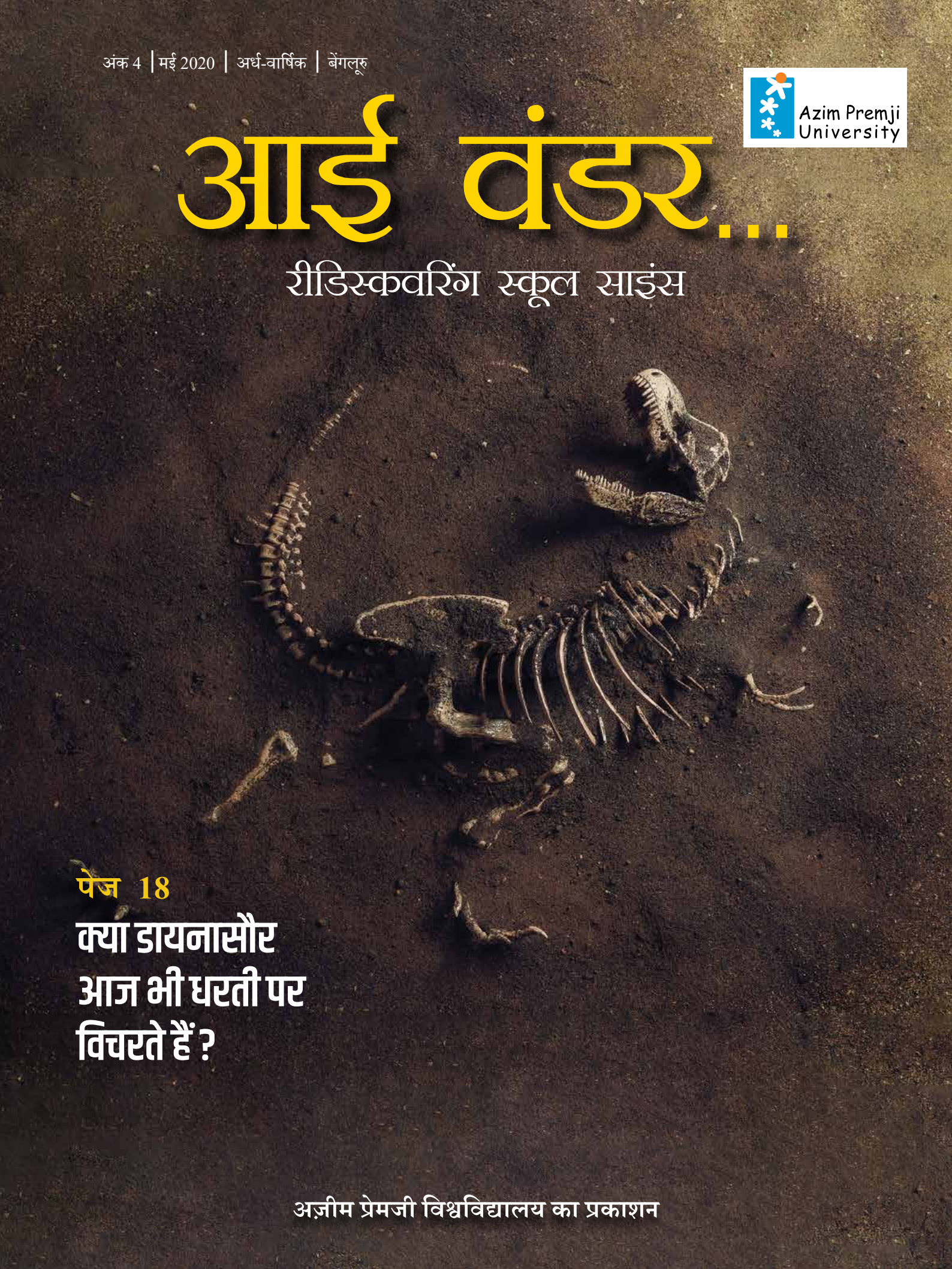

पेज 18

क्या डायनासौर आज भी धरती पर विचरते हैं?

अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय का प्रकाशन

सम्पादन समिति

रामगोपाल (रामजी) वल्लत, सम्पादक
अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय
पीईएस कॉलेज ऑफ़ इंजीनियरिंग कैम्पस
इलेक्ट्रॉनिक्स सिटी, बेंगलूरु
ईमेल : ramg@azimpremjifoundation.org

चित्रा रवि, सम्पादक
अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय
पीईएस कॉलेज ऑफ़ इंजीनियरिंग कैम्पस
इलेक्ट्रॉनिक्स सिटी, बेंगलूरु
ईमेल : chitra.ravi@apu.edu.in

अमोल आनन्दराव काटे
अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन
134,डूडाकन्नेली, सरजापुरा रोड, बेंगलूरु
ईमेल : amol.kate@azimpremjifoundation.org

आनन्द नारायणन
भारतीय अन्तरिक्ष विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संस्थान,
तिरुवनन्तपुरम
ईमेल : anand@iist.ac.in

हृदय कान्त दीवान
अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय
पीईएस कॉलेज ऑफ़ इंजीनियरिंग कैम्पस
इलेक्ट्रॉनिक्स सिटी, बेंगलूरु
ईमेल : hardy@azimpremjifoundation.org

मूर्ति ओवीएसएन
अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय
पीईएस कॉलेज ऑफ़ इंजीनियरिंग कैम्पस
इलेक्ट्रॉनिक्स सिटी, बेंगलूरु
ईमेल : murthy.ovsn@apu.edu.in

नवोदिता जैन
इंडिया बॉयोसाइंस, नेशनल सेंटर फॉर बॉयोलॉजिकल साइंसेज़, बेंगलूरु
ईमेल : navodita@indiabioscience.org

राधा गोपालन
अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय
पीईएस कॉलेज ऑफ़ इंजीनियरिंग कैम्पस
इलेक्ट्रॉनिक्स सिटी, बेंगलूरु
ईमेल : radha.gopalan@gmail.com

सौरभ सोम
सम्पादकीय कार्यालय, अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय
पीईएस कॉलेज ऑफ़ इंजीनियरिंग कैम्पस
इलेक्ट्रॉनिक्स सिटी, बेंगलूरु
ईमेल : saurav.shome@azimpremjifoundation.org

शिव पाण्डेय
अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन
134,डूडाकन्नेली
सरजापुरा रोड, बेंगलूरु
ईमेल : shiv.pandey@azimpremjifoundation.org

सुशील जोशी
सम्पादकीय कार्यालय, अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय
पीईएस कॉलेज ऑफ़ इंजीनियरिंग कैम्पस
इलेक्ट्रॉनिक्स सिटी, बेंगलूरु
ईमेल : rusushil@yahoo.com

वेंकट नागा विनय सूरम
अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन
134,डूडाकन्नेली
सरजापुरा रोड, बेंगलूरु
ईमेल : vinay.suram@azimpremjifoundation.org

विजेता रघुराम
इंडिया बॉयोसाइंस
नेशनल सेंटर फॉर बॉयोलॉजिकल साइंसेज़
बेंगलूरु
ईमेल : vijeta@indiabioscience.org

यास्मिन जयतीर्थ
अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय
पीईएस कॉलेज ऑफ़ इंजीनियरिंग कैम्पस
इलेक्ट्रॉनिक्स सिटी, बेंगलूरु
ईमेल : yasmin.cfl@gmail.com

सम्पादकीय कार्यालय

सम्पादक, अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय
पिक्सेल बी ब्लॉक, पीईएस कॉलेज ऑफ़ इंजीनियरिंग कैम्पस, इलेक्ट्रॉनिक्स सिटी, बेंगलूरु - 560100
फोन : 080-66145136 / 5272 | फैक्स : 080-66145230 । ईमेल : publications@apu.edu.in ।
वेबसाइट : www.azimpremjiuniversity.edu.in

यह अंक मूलत: आई वंडर... (अँग्रेज़ी) मई, 2020 के लेखों का हिन्दी अनुवाद है। यह अनुवाद ई-कॉपी के रूप में अक्टूबर, 2025 में प्रकाशित हुआ है।
इसकी सॉफ्ट कॉपी https://anuvadasampada.azimpremjiuniversity.edu.in/
से डाउनलोड की जा सकती है।

मूल अँग्रेज़ी अंक की सॉफ्ट कॉपी
http://azimpremjiuniversity.edu.in/SitePages/resources-iwonder.aspx
से डाउनलोड की जा सकती है।

हमारे बारे में

आई वंडर... स्कूल शिक्षकों के लिए एक विज्ञान पत्रिका है । हमारा उद्देश्य ऐसे लेखों को प्रकाशित करना है जो शिक्षकों (साथ ही अभिभावकों, शोधकर्ताओं और अन्य इच्छुक वयस्कों) को कक्षा में और उसके बाहर विज्ञान शिक्षण और सीखने के विविध आयामों के बारे में एक सौम्य और चिन्तनशील संवाद में शामिल करें । हम ऐसे लेखों का स्वागत करते हैं जो विज्ञान और विज्ञान शिक्षा पर आलोचनात्मक दृष्टिकोण साझा करते हैं, मूलभूत अवधारणाओं (कैसे, क्यों और आगे क्या) की व्यापक और गहरी समझ प्रदान करते हैं, और ऐसे अभ्यास के उदाहरणों से जुड़ते हैं जो विज्ञान को अधिक अनुभवात्मक और सार्थक तरीकों से सीखने को प्रोत्साहित करते हैं । *आई वंडर...* विद्यार्थियों और विज्ञान के प्रति उत्साही लोगों के लिए भी एक बेहतरीन पठन सामग्री है ।

चित्र सौजन्य

मुखपृष्ठ : पुरातत्वविदों को मिला डायनासौर का जीवाश्म (*Tyrannosaurus rex*) Credits: Rafael Trafaniuc, Shutterstock. URL: https://www.shutterstock.com/image/1542671345.

अन्तिम आवरण : कोरोना वायरस । Credits: Geralt. URL: https://pixabay.com/illustrations/coronacoronavirus-virus-blood-5174671/. License: CC0.

सलाहकार
मनोज पी.
राजाराम नित्यानन्द
एस. गिरिधर
विनोद अब्राहम

हिन्दी अंक सम्पादक
राजेश उत्साही

प्रकाशन समन्वयक
शान्ता के.

प्रकाशन सहयोगी
पुनीता डी.
शाहनाज़ बेगम

चित्रांकन
विद्या कमलेश

पत्रिका डिज़ाइन
Zinc & Broccoli
enquiry@zandb.in

हिन्दी अंक लेआउट
आदर्श प्रा.लि.भोपाल

आभार
विशेष धन्यवाद स्नेहा कुमारी, अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय, बेंगलूरु को उनके अमूल्य योगदान के लिए; साथ ही सत्यजीत मेयर और स्मिता जैन, इंडिया बॉयोसाइंस, नेशनल सेंटर फॉर बॉयोलॉजिकल साइंसेज़, बेंगलूरु को इस अंक को तैयार करने में उनके सहयोग के लिए ।

लाइसेंस
इस पत्रिका के सभी लेख Creative Commons-Attribution-Non Commercial 4.0 International License के अन्तर्गत लाइसेंस प्राप्त हैं ।

कृपया ध्यान दें : इस अंक में व्यक्त किए गए सभी विचार और मत लेखकों के हैं । अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय या अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन इनके लिए किसी भी रूप में ज़िम्मेदार नहीं हैं ।

सम्पादकीय

डार्विन का 'प्राकृतिक चयन द्वारा उद्विकास' का सिद्धान्त जीवन की समृद्ध विविधता और प्रजातियों की उत्पत्ति एवं विकास की हमारी समझ को बनाने में सबसे निर्णायक योगदानों में से एक है। वास्तव में, जीवविज्ञान को उद्विकास के दृष्टिकोण से देखने पर यह और भी अधिक सार्थक हो जाता है। लेकिन वह प्रक्रिया भी महत्त्वपूर्ण है जिसका उपयोग डार्विन ने इस सिद्धान्त तक पहुँचने, उसे परिष्कृत करने और लोकप्रिय बनाने के लिए किया।

डार्विन ने एक परिकल्पना तैयार करने के लिए शास्त्रीय वैज्ञानिक पद्धति – व्यवस्थित अवलोकन और प्रेक्षित प्रतिमानों पर गहन चिन्तन – का प्रयोग किया। उन्होंने अपनी परिकल्पना को संशोधित, परिष्कृत और प्रमाणित करने के लिए प्रयोग और आगे के अवलोकन का उपयोग किया और एक व्यापक सिद्धान्त पर पहुँचे। डार्विन के मामले में, यह पूरी प्रक्रिया प्रकृति को बेहतर ढंग से समझने की उत्कट जिज्ञासा से प्रेरित थी। इसी जिज्ञासा ने उन्हें भू-विज्ञान, प्राणिविज्ञान, वनस्पतिविज्ञान, वर्गीकरणविज्ञान, शरीर रचनाविज्ञान, जीवाश्मविज्ञान और यहाँ तक कि समाजशास्त्र जैसे विविध क्षेत्रों का अन्वेषण करने के लिए प्रेरित किया। उन्होंने इन क्षेत्रों के विशेषज्ञों के कार्यों को पढ़कर सीखा और प्रकृति के प्रत्यक्ष अवलोकनों से इस ज्ञान को और सुदृढ़ किया। विविध क्षेत्रों के ज्ञान को प्राकृतिक दुनिया के अवलोकनों से जोड़ने की इसी क्षमता ने डार्विन को अपनी परिकल्पना तक पहुँचाया।

इस प्रक्रिया का चरम बिन्दु डार्विन का एचएमएस बीगल पर सवार होकर विश्व की परिक्रमा करना था - उन्होंने ये पाँच वर्ष विविध भू-भागों, वनस्पतियों, जीवों और जीवाश्मों के गहन अवलोकन में बिताए। अगले दो दशकों तक, डार्विन ने अपने सिद्धान्त को सिद्ध करने के लिए कड़ी मेहनत से साक्ष्य एकत्र किए और इसके हर सम्भव अन्तराल या आपत्ति को दूर किया। इस प्रक्रिया में, उन्होंने कुत्ता पालने वालों, किसानों, बाग़वानों, प्राणीशास्त्रियों, वनस्पतिशास्त्रियों, वर्गिकीविदों, जीवाश्म विज्ञानियों, भू-वैज्ञानिकों, खोजकर्ताओं और संग्रहालय संरक्षकों जैसे विविध लोगों से मित्रता की और उनसे सीखा। उन्होंने फूलों के प्रजनन व्यवहार को समझने के लिए उनकी खेती की और कबूतरों की कई प्रजातियों का प्रजनन कराकर उनकी वंशावली का अध्ययन किया।

वर्गीकरणविज्ञान और शरीर रचनाविज्ञान को अपनी कमज़ोरियाँ मानते हुए, उन्होंने अपनी यात्रा के दौरान एकत्र किए गए बार्नकल्स का अध्ययन, विच्छेदन और वर्गीकरण करके इन क्षेत्रों की अपनी समझ को बेहतर बनाने का कार्य किया। इस कार्य में आठ वर्ष लगे! उन्होंने तुलनात्मक शरीर रचनाविज्ञान की बेहतर समझ हासिल करने के लिए भ्रूणविज्ञान में भी हाथ आजमाया।

डार्विन के व्यक्तित्व ने उनकी सफलता में उनकी पद्धति जितनी ही महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। उनके दृढ़ संकल्प और दृढ़ता ने उन्हें अपने सिद्धान्त के लिए नए प्रमाणों की ओर ले जाने वाले किसी भी सम्भावित मार्ग को पहचानने और उसका अनुसरण करने में सक्षम बनाया। उन्होंने दुनिया भर के असंख्य लोगों, जिनमें से कुछ भारत, अमेरिका और ऑस्ट्रेलिया जैसे दूर-दराज के देशों से भी थे, के साथ नियमित पत्राचार के माध्यम से नई जानकारी और नमूने प्राप्त किए। 19वीं सदी के मध्य में, पत्राचार का उत्तर पाने के लिए दो साल तक धैर्यपूर्वक प्रतीक्षा करनी पड़ती थी। यह उनका मैत्रीपूर्ण, सहायक और सहयोगात्मक रवैया ही था जिसने डार्विन को दुनिया भर में फैले एक विशाल समर्थन नेटवर्क का निर्माण करने में मदद की।

विज्ञान शिक्षक होने के नाते, हमें डार्विन के जीवन से बहुत कुछ सीखना है ताकि हम अपने विद्यार्थियों को सफल वैज्ञानिक बनने की उनकी यात्रा में मार्गदर्शन कर सकें। हम प्रकृति का अन्वेषण करने के लिए विद्यार्थियों की जिज्ञासा को प्रज्वलित कर सकते हैं, उन्हें जो कुछ वे देखते हैं उस पर गहराई से चिन्तन करने में सक्षम बना सकते हैं, और विभिन्न क्षेत्रों के दृष्टिकोणों के माध्यम से प्राकृतिक घटनाओं का अन्वेषण करने में उनकी सहायता कर सकते हैं। एक विज्ञान शिक्षक, विद्यार्थियों को अन्वेषण की यात्रा का आनन्द लेने की क्षमता खोए बिना अपनी वैज्ञानिक खोज में दृढ़ रहने के लिए प्रोत्साहित करने वाला सबसे अच्छा व्यक्ति है। एक विज्ञान शिक्षक द्वारा निभाई जाने वाली एक और महत्त्वपूर्ण भूमिका विद्यार्थियों में आलोचनात्मक सोच विकसित करना है। उन्हें हर 'तथ्य' के कैसे और क्यों पर सवाल उठाने के लिए लगातार प्रोत्साहित करना। अन्त में, लेकिन एक महत्त्वपूर्ण बात, विज्ञान शिक्षकों को अपने विद्यार्थियों को सहयोगी शिक्षार्थी बनने के लिए मार्गदर्शन करने की आवश्यकता है।

एक महान विज्ञान शिक्षक सम्भवतः एक सफल वैज्ञानिक के निर्माण में सबसे महत्त्वपूर्ण घटक होता है। आख़िरकार, डार्विन के प्रोफ़ेसर जॉन हेन्सलो का शुरुआती प्रोत्साहन न होता, तो उनका उद्विकास का सिद्धान्त शायद कभी अस्तित्व में ही न आता।

रामजी वल्लत

सम्पादक

इस अंक में

उद्विकास पर पुनर्विचार

4 प्राकृतिक चयन द्वारा उद्विकास को समझना
गीता रामास्वामी

11 प्रकृति में पारस्परिकता का विकास कैसे हुआ : चींटी-पौधे के सह-सम्बन्धों का केस
जयश्री चानम

18 क्या डायनासौर आज भी धरती पर विचरते हैं?
श्रेया घोष

विज्ञान की प्रकृति

26 जैव अनुसन्धान के कर्मवीर : मॉडल जीव
दीप्ति त्रिवेदी

विज्ञान प्रयोगशाला

33 पहले से मौजूद मानसिक मॉडल्स को चुनौती देना
विष्णुतीर्थ अग्निहोत्री और अनघ पुरन्दरे

38 आओ झूला झूलें
कविता कृष्ण

बुकलेट

मोना या मोनू?
रोहिणी चिन्ता

अवधारणा निर्माण

- क्या लकड़ी/प्लास्टिक की तुलना में धातु ठण्डी होती है?
- क्या आप एक अँधेरे कमरे में देख सकते हैं?
- क्या भारी वस्तुएँ हल्की वस्तुओं की अपेक्षा तेज़ी-से गिरती हैं?

गतिविधि शीट

- गतिविधि शीट-1 : एक सरल दोलक कैसे बनाएँ?
- गतिविधि शीट-2 : एक दोलक के आवर्तकाल का मापन कैसे करें?
- गतिविधि शीट-3 : क्या किसी दोलक का आवर्तकाल प्रारम्भिक विस्थापन पर निर्भर करता है?
- गतिविधि शीट-4 : क्या आवर्तकाल दोलक की लम्बाई पर निर्भर करता है?
- गतिविधि शीट-5 : क्या आवर्तकाल भार पर निर्भर करता है?
- गतिविधि शीट-6 : सामूहिक चर्चा

विज्ञान शिक्षक काम पर हैं

सौरभ सोम
से साक्षात्कार

आपके आँगन में जीवन

रंग बदलते फूल और
नखरैल परागणकर्ता
अपर्णा कृष्णन और दिव्या उमा

गतिविधि शीट

- गतिविधि शीट-1 : लेंटाना में रंग परिवर्तन
- गतिविधि शीट-2 : लेंटाना में मकरन्द
- गतिविधि शीट-3 : नखरैल तितलियाँ

बड़े सवाल

अंग-पुनर्जनन
की दुनिया
श्रावन्ती उप्पालुरी और हर्षिता कंचमरेड्डी

आँखों देखा
उद्विकास
शम्पा एम. घोष

उदाहरण

- उदाहरण-1 : प्लेनेरिया में पुनर्जनन
- उदाहरण-2 : *स्टेन्टर कोरुलिअस* (Stentor coeruleus) में पुनर्जनन
- उदाहरण-3 : क्या हाइड्रा आपके आस-पास रहता है?
- उदाहरण-4 : एक्सोलोटल *एबिस्टोमा मैक्सिकेनम* (Abystoma mex Icanum) में पुनर्जनन
- उदाहरण-5 : पौधों में पुनर्जनन

इतिहास के झरोखे से

एंटीबॉयोटिक
पदार्थों की उत्पत्ति
रोहिणी करन्दीकर और सुभोजीत सेन

गतिविधि शीट

- गतिविधि शीट-1 : बनें सूक्ष्म जीवविज्ञानी
- गतिविधि शीट-2 : एंटीबॉयोटिक्स की खोज को दोहराएँ
  रोहिणी करन्दीकर, सुभोजीत सेन और लीना फड़के

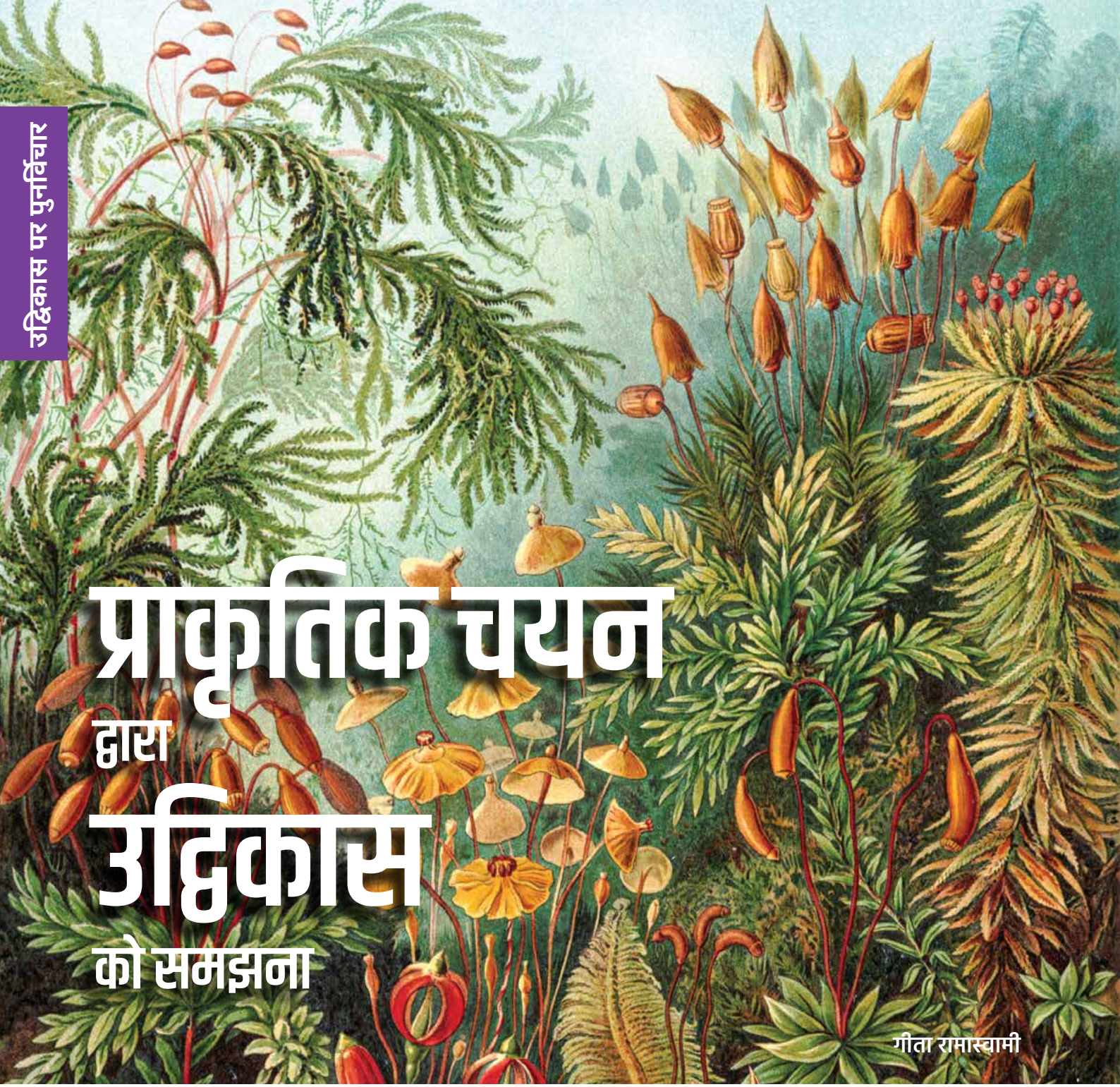

प्राकृतिक चयन द्वारा उद्विकास को समझना

गीता रामास्वामी

सजीव अविश्वसनीय विविधता का प्रदर्शन करते हैं। लेकिन इस विविधता में प्राकृतिक चयन की क्या भूमिका होती है? प्राकृतिक चयन क्या है? और उद्विकास को गढ़ने में पर्यावरण की क्या भूमिका है?

समझने की दृष्टि से उद्विकास एक कठिन अवधारणा है। हमारे अस्तित्व के लिए सबसे शुरुआती स्पष्टीकरण, आमतौर पर परिवार में किसी बुजुर्ग द्वारा दिया जाता है कि हम एक परम शक्ति द्वारा बनाए गए हैं। यह स्पष्टीकरण अकसर अकल्पनीय जन्तुओं और विस्मयकारी प्राकृतिक घटनाओं के वर्णन के साथ होता है जिनकी व्याख्या एक सर्व-शक्तिमान की सनक के रूप में करना आसान लगता है।

अकसर विज्ञान के विद्यार्थियों को प्राकृतिक चयन द्वारा उद्विकास के सिद्धान्त का पहला अनुभव हाई स्कूल में मिलता है। दुर्भाग्य से, इस स्तर पर इस सिद्धान्त की बारीकियों को अकसर बग़ैर स्पष्टीकरण के छोड़ दिया जाता है। अधिकांश विद्यार्थी इस सिद्धान्त को 'योग्यतम की उत्तरजीविता' जैसे शब्दों का पर्यायवाची मानते रह जाते हैं। लेकिन ये शब्द उस सुन्दर प्रक्रिया के साथ न्याय नहीं

बॉक्स-1 : लक्षणों में विविधता उत्पन्न कैसे होती है?

चूँकि किसी जीव का जीनोम उसके सभी लक्षणों के एक ब्लूप्रिन्ट की तरह होता है, इसलिए इसके आनुवंशिक पदार्थ में विविधता से लक्षणों में भी विविधता उत्पन्न होती है। ये विविधताएँ ग़ैर-जानलेवा उत्परिवर्तनों का परिणाम हैं (जानलेवा उत्परिवर्तन तो जीव को मार डालेंगे)।

करते हैं जिसके द्वारा यह सिद्धान्त पृथ्वी पर जीवन की सभी विविधताओं की व्याख्या करता है।

सिद्धान्त की नींव

चार्ल्स डार्विन और अल्फ्रेड रसेल वालेस द्वारा स्वतंत्र रूप से प्रस्तावित, प्राकृतिक चयन द्वारा उद्विकास का सिद्धान्त इस मान्यता पर आधारित है कि जीवों में पाए जाने लक्षण परिवर्तनशील और वंशानुगत हैं। लक्षण मतलब किसी जीव के गुणधर्म या विशेषताएँ।

सजीव दुनिया के संगठन के प्रत्येक स्तर पर लक्षणों में विविधता नज़र आ सकती है। (**बॉक्स-1** देखें)। उदाहरण के लिए, क़द के मानवीय गुण को एक परास के रूप में व्यक्त किया जाता है – लोग लम्बे, छोटे या मध्यम ऊँचाई के हो सकते हैं। विभिन्न जातीय समूहों के लिए यह परास अलग-अलग हो सकता है। उदाहरण के लिए, हो सकता है कि दक्षिण पूर्व एशिया के सबसे ऊँचे लोगों का क़द उत्तरी यूरोप के सबसे ऊँचे लोगों की तुलना में कम हो। इसका मतलब है कि क़द का लक्षण मनुष्यों में अत्यधिक परिवर्तनशील है (**बॉक्स-2** देखें)।

लक्षण वंशानुगत भी होते हैं। ऊँचे क़द के माता-पिता के बच्चों के ऊँचे होने की सम्भावना अधिक होती है। क़द की तरह, कई अन्य लक्षण भी वंशानुगत हो सकते हैं – जैसे आँखों का रंग, त्वचा का रंग, यहाँ तक कि आपके गाल में पड़ने वाले गड्ढे (डिम्पल)! लक्षण एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को जीन के माध्यम से प्रेषित होते हैं (**बॉक्स-3** देखें)। हरेक जीव के प्रत्येक गुण के लिए जीन में अन्तर्निहित कोड होता है। ये कोड सन्तानों को माता-पिता से विरासत में मिलते हैं।

किसी पर्यावरण के लिए सबसे अनुकूल लक्षणों वाले जीव, उसी आबादी में दूसरों की तुलना में जीवित रहने और प्रजनन करने के लिहाज़ से बेहतर होते हैं। इस प्रकार, किसी जीव का पर्यावरण एक छन्ने के रूप में कार्य करता है, जिससे प्रत्येक पीढ़ी में कुछ लक्षणों से युक्त जीवों के पाए जाने की सम्भावना बढ़ जाती है (**बॉक्स -4** देखें)।

प्राकृतिक चयन के मायने क्या हैं?

जब विविधतापूर्ण और वंशानुगत लक्षण पर्यावरण की छलनी से गुजरते हैं, तो अगली पीढ़ी में उत्तरजीविता और प्रजनन के लिए सबसे अनुकूल लक्षण अधिक संख्या में पाए जाते हैं। इस प्रक्रिया को **चयन** कहा जाता है।

किसी जगह के पर्यावरण में बदलाव कैसे चयन का दबाव पैदा करता है, इसका एक उदाहरण मलेरिया और सिकल-सेल एनीमिया के सन्दर्भ में देखा जा सकता है। मलेरिया मच्छरों के काटने से फैलने वाले

बॉक्स-2 : क्या परिवर्तनशील लक्षण सभी सजीवों में पाए जाते हैं?

सही है। स्तनधारियों के अलावा बैक्टीरिया, कवक, पौधों, कीड़ों, पक्षियों में परिवर्तनशील लक्षण देखे गए हैं। यहाँ कुछ उदाहरण दिए जा रहे हैं :

- बैक्टीरिया में प्रतिजैविक (एंटीबॉयोटिक) दवाओं के प्रति सहिष्णुता।
- ऑर्किड की पुष्प नलिकाओं में मकरन्द (परागणकर्ताओं के लिए) किस गहराई पर स्थित है।
- पक्षियों द्वारा एक बार में दिए जाने वाले अण्डों की संख्या और आकार।

क्या आप एक और उदाहरण सोच सकते हैं?

बॉक्स-3 : हम कैसे जानते हैं कि लक्षण वंशानुगत हैं?

लक्षणों की विरासत का पहला वर्णन ग्रेगर मेंडल द्वारा मटर के पौधों पर किए गए प्रयोगों से आया है। जब मेंडल ने कतिपय परिवर्तनशील लक्षणों वाले मटर के पौधों में संकरण करवाया तो ये लक्षण उनकी सन्तति में ऐसी आवृत्ति में प्रकट हुए जिससे इनके वंशानुगत होने की पुष्टि हुई (**चित्र-1** देखें)।

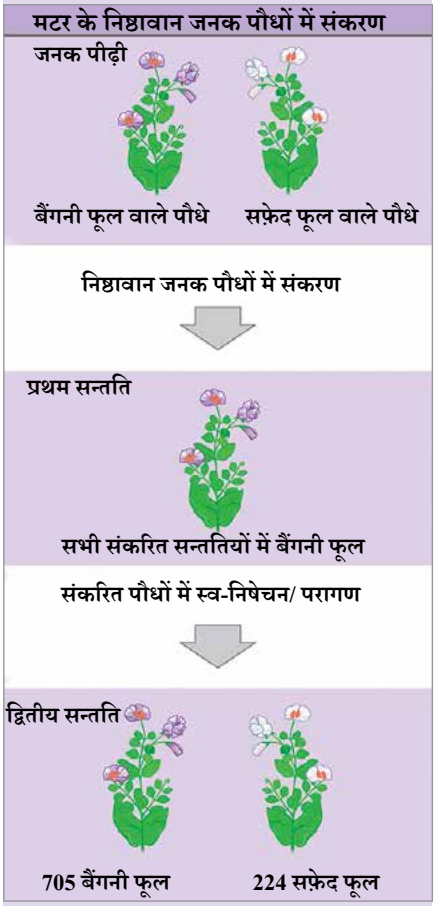

चित्र-1 : मटर के पौधों के साथ मेंडल के प्रजनन प्रयोगों के परिणामों को लक्षणों के वंशानुगत होने के आधार पर ही समझाया जा सकता है।
Credits: CNX OpenStax (http://cnx.org/contents/GFy_h8cu@10.53:rZudN6XP@2/Introduction), Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Figure_12_01_02.jpg. License: CC-BY.

मेंडल ने इन प्रयोगों में जिन तीन लक्षणों का अध्ययन किया, उनमें फूल का रंग (बैंगनी या सफ़ेद), बीज का रंग (पीला या हरा) और बीज की बनावट (चिकनी या झुर्रीदार) थी। क्या आप किसी अन्य के बारे में जानते हैं?

बॉक्स-4 : किस प्रकार 'पर्यावरण' 'चयन के छन्ने' के रूप में कार्य करता है?

किसी भी आबादी में जीवों के अस्तित्व और प्रजनन को प्रभावित करने वाले जैविक और अजैविक घटक मिलकर उसके पर्यावरण का निर्माण करते हैं। उदाहरण के लिए, फूलधारी पौधे के पर्यावरण के कुछ घटक निम्न प्रकार हैं जो चयन के लिए एक छन्ने के रूप में कार्य कर सकते हैं :

- मिट्टी की गुणवत्ता (इसकी पोषक स्थिति, पानी की मात्रा और सूक्ष्मजीव समुदाय),
- वायु गुणवत्ता (इसकी कार्बन डाईऑक्साइड और जल-वाष्प सान्द्रता),
- प्रकाश स्रोत (छाया या सूरज की मात्रा, सम्पर्क की अवधि),
- शिकारियों की उपस्थिति (शाकाहारी और/ या परजीवी) और सहजीवी (परागणकारी और/ या प्रकीर्णनकर्ता)।

इसी प्रकार, हिरण जैसे किसी शाकाहारी के चयन को प्रभावित करने वाले कुछ पर्यावरणीय कारक निम्न हैं :

- भोजन (वह क्षेत्र जिस पर खाने योग्य पौधे पाए जाते हैं) और पानी की सुलभता और गुणवत्ता,
- सहवास के लिए साथियों की उपलब्धता (जो प्राकृतिक अवरोधों जैसे नदियों, पहाड़ों या मौसमी सूखे की वजह से अलग-थलग भी हो सकते हैं),
- परभक्षियों (माँसाहारी, शिकारी) और बीमारियों (बैक्टीरिया, कवक और वायरस के कारण) की उपस्थिति।

हम जानते हैं कि कोई भी जीव स्थिर पर्यावरण में नहीं रहता है। इसका वातावरण स्थान (शीतोष्ण बनाम उष्णकटिबन्धीय, पहाड़ों बनाम घाटियों, घास के मैदानों, जंगलों, समुद्री बनाम स्थलीय) और समय (जैसे गर्मी बनाम सर्दियाँ, वर्ष 1857 बनाम वर्ष 2019, जुरासिक बनाम क्रिटेशियस युग) दोनों के सापेक्ष बदलता है।

क्या आप अपने नज़दीकी वातावरण में कुछ चयन दबावों की पहचान कर सकते हैं? क्या आपने उन्हें स्थान और समय के साथ बदलते देखा है? वे किस तरह बदले हैं?

एक-कोशिकीय परजीवी के कारण होता है। मलेरिया का प्रकोप कुछ भौगोलिक परिस्थितियों (ठण्डे, शुष्क, समशीतोष्ण) की तुलना में कुछ भौगोलिक परिस्थितियों (गर्म, आर्द्र, उष्णकटिबन्धीय) में अधिक होता है। दूसरी ओर सिकल-सेल एनीमिया हीमोग्लोबिन (एक प्रोटीन जो ऑक्सीजन से जुड़कर उसे शरीर की हर कोशिका तक पहुँचाता है) के लिए कोडिंग करने वाले जीन में उत्परिवर्तन के कारण होता है। वैसे लाल रक्त कोशिकाएँ डोनट या उदिनवड़ा के आकार की होती हैं, बीचों-बीच सुराख़ की बजाय एक गड्ढा-सा होता है। यह उत्परिवर्तन उन्हें हँसिया आकार (सिकल या अर्ध-चन्द्राकार) में बदल देता है जिसमें ऑक्सीजन को बाँधने की क्षमता कम होती है (**चित्र-2** देखें)। मज़ेदार बात यह है कि सिकल के आकार की कोशिकाएँ न केवल मनुष्यों के लिए, बल्कि मलेरिया परजीवी के लिए भी ख़राब होती हैं। परजीवी को अपना जीवन चक्र पूरा करने के लिए स्वस्थ, गोल आरबीसी की आवश्यकता होती है। नतीजतन, मलेरिया परजीवी के अधिक प्रकोप वाले क्षेत्रों में, सामान्य आरबीसी वाले मनुष्यों की तुलना में सिकल आकार के आरबीसी वाले मनुष्यों के जीवित रहने और बच्चे पैदा

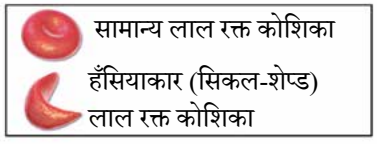

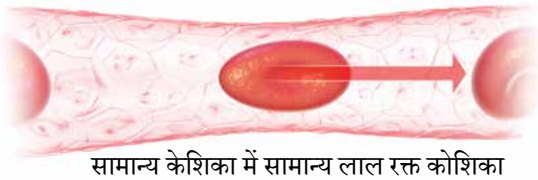

सामान्य केशिका में सामान्य लाल रक्त कोशिका

सिकल सेल एनीमिया

चित्र-2 : एक सामान्य और हँसियाकार लाल रक्त कोशिका का चित्रीय निरूपण।

Credits: BruceBlaus, Wikimedia Commons. URL: https://en.wikipedia.org/wiki/File:Sickle_Cell_Anemia.png. License: CC-BY-SA.

बॉक्स-5 : क्या सभी लक्षणों के विकास की गति समान होती है?

नहीं। किसी लक्षण के विकास की दर इस बात पर निर्भर करती है कि अगली पीढ़ी उसे कितनी जल्दी विरासत में पा सकती है। उदाहरण के लिए, कुछ बैक्टीरिया कुछ ही मिनटों में प्रजनन कर सकते हैं। इसका मतलब यह है कि इस बैक्टीरिया की कई नई पीढ़ियाँ एक ही दिन में पैदा होती हैं और बैक्टीरिया के प्रत्येक लक्षण के कुछ ही दिनों में विकसित होने की सम्भावना होती है। लम्बे समय तक जीवित रहने तथा लम्बी पीढ़ियों वाली प्रजातियों के लिए विकास की दर बहुत धीमी होगी।

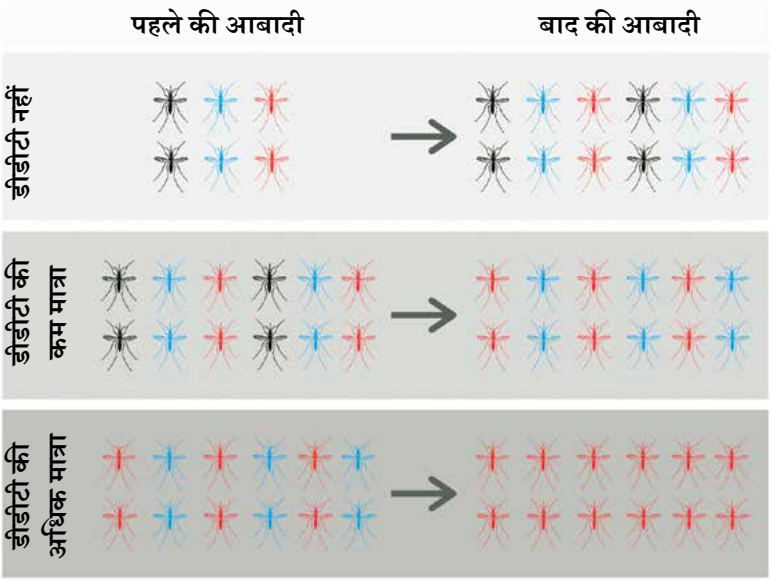

चित्र-3 : डीडीटी प्रतिरोध के लक्षण में विविधता दर्शाते मच्छरों की आबादी पर डीडीटी की अलग-अलग सान्द्रता का प्रभाव। चित्र में काले मच्छर डीडीटी के प्रतिरोध की क्षमता के अभाव वाले मच्छरों का प्रतिनिधित्व करते हैं। नीले रंग वाले मच्छर कम प्रतिरोध वाले मच्छरों का प्रतिनिधित्व करते हैं और लाल वाले डीडीटी के उच्च प्रतिरोध वाले मच्छरों का प्रतिनिधित्व करते हैं। जब कम सान्द्रता वाले डीडीटी का छिड़काव किया जाता है, तो काले मच्छर मर जाते हैं। लेकिन नीले और लाल मच्छर जीवित रहते हैं और प्रजनन करने में सक्षम होते हैं। इससे आबादी में नीले और लाल मच्छरों की आवृत्ति बढ़ जाती है। यदि इस आबादी पर डीडीटी की उच्च सान्द्रता का छिड़काव किया जाता है, तो नीले मच्छर मर जाते हैं। जीवित आबादी में लाल मच्छरों या उच्च प्रतिरोध लक्षणों वाले मच्छरों का आधिक्य हो जाता है। इस बिन्दु से परे डीडीटी की सान्द्रता में वृद्धि से मनुष्यों सहित अन्य जीवों पर नकारात्मक प्रभाव पड़ सकता है।

Credits: Geetha Ramaswami. License: CC-BY-NC.

करने की सम्भावना अधिक हो जाती है। दूसरे शब्दों में, मलेरिया बाहुल्य परिवेश में सिकल आकार वाले आरबीसी के लक्षण का चयन किया जाता है।

इसी तरह, डीडीटी कीटनाशक (डाइक्लोरो डाईफिनाइल ट्राइक्लोरो इथेन) की प्रभावशीलता इस बात का उदाहरण प्रस्तुत करती है कि किस प्रकार पर्यावरण में समय के साथ बदलाव अद्वितीय चयन दबाव बना सकते हैं। यह बेहद ज़हरीला रसायन शुरुआत में शहरी इलाक़ों में मच्छरों को नियंत्रित करने के लिए बहुत प्रभावी था। लेकिन जल्द ही यह देखा गया कि मच्छरों पर पहले जितना नियंत्रण प्राप्त करने के लिए कीटनाशक की उच्चतर सान्द्रता की आवश्यकता होने लगी। क्यों? कल्पना कीजिए कि मच्छरों की आनुवंशिक सामग्री में कीटनाशक प्रतिरोध के लिए एक वंशानुगत, विविधतापूर्ण विशेषता कोडित थी जो मच्छरों को डीडीटी जैसे कीटनाशकों के विरुद्ध शून्य, कम या उच्च सहिष्णुता प्रदान करती थी (**चित्र-3** देखें)। डीडीटी की कम सान्द्रता वाले पर्यावरण में, वे सारे मच्छर मर जाते हैं जिनमें कीटनाशक के विरुद्ध प्रतिरोध बिलकुल भी नहीं है। जो कीटनाशक को सहन कर सकते हैं वे मच्छर जीवित रहकर प्रजनन करते रहते हैं। चूँकि कीटनाशकों के प्रतिरोध का लक्षण वंशानुगत है, अगली पीढ़ी के अधिकांश मच्छरों में प्रतिरोधी जीन का कोई-न-कोई रूप उपस्थित होगा। नतीजतन, उन्हें मारने के लिए कीटनाशक की तुलनात्मक रूप से अधिक सान्द्रता की आवश्यकता होगी। हालाँकि कीटनाशक की ख़ुराक में कोई भी वृद्धि केवल उन्हीं मच्छरों को मार पाएगी जो कि इसके लिए सबसे कम सहिष्णु होंगे।

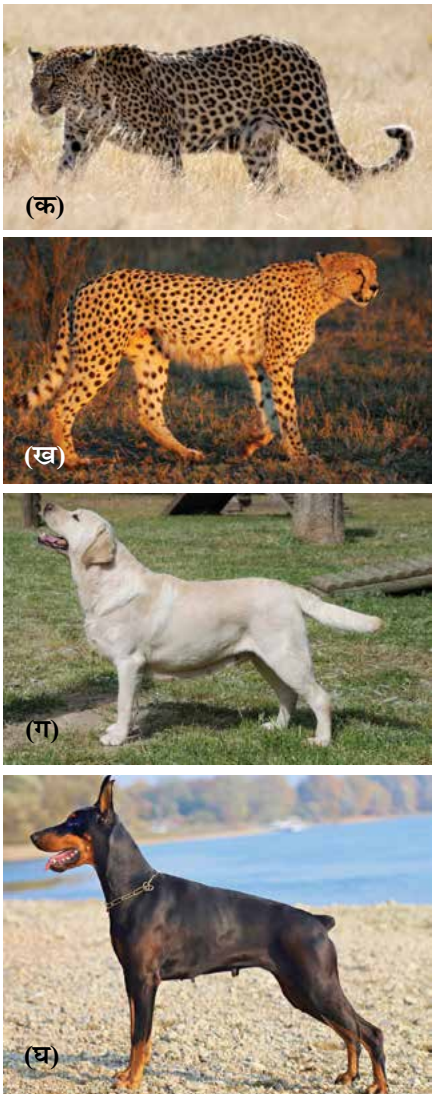

चित्र-4 : 'जीव वैज्ञानिक प्रजाति' की अवधारणा को समझना : तेंदुआ **(क)** और चीता **(ख)** समान दिखते हैं, लेकिन जननक्षम सन्तान पैदा करने के लिए अन्तःप्रजनन नहीं कर सकते। इसलिए, उन्हें अलग-अलग प्रजातियाँ माना जाता है। लैब्राडोर रिट्रीवर **(ग)** और डॉबरमैन पिंसर **(घ)** बहुत अलग-अलग दिखते हैं, लेकिन अन्तःप्रजनन के द्वारा जननक्षम सन्तानें पैदा कर सकते हैं। इसलिए, उन्हें एक प्रजाति का सदस्य माना जाता है।

Credits: (a) Stephen Temple from Cape Town, South Africa, Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:1M2A5681_(45925689112).jpg. License: CC-BY-SA. (b) Wegmann, Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Cheetah_Umfolozi_SouthAfrica_MWegmann.jpg. License: CC-BY-SA. (c) SixtyWeb, Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Yellow_Labrador_Retriever_2.jpg. License: CC-BY-SA. (d) YamaBSM, Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:0Doberman-40172501920.jpg. License: CC-BY.

बॉक्स-6 : क्या मनुष्य वानरों से विकसित हुए हैं?

गूगल पर उद्विकास शब्द से सम्बन्धित कुछ भी खोजने पर जो सबसे आम छवि आती है उससे लगता है कि वानरों से लेकर आधुनिक मनुष्यों तक के लक्षणों की एक रैखिक प्रगति हुई है (**चित्र-5क** देखें)। अकसर, लोग इससे यह समझ बनाते हैं कि उद्विकास ने वानरों को मनुष्यों में बदल दिया है! एक साधारण सवाल इस तर्क में निहित नुक़्स को साबित करता है – यदि वानर मनुष्यों में बदल गए, तो ग्रह पर अभी भी इतने सारे वानर क्यों हैं? क्या वे भी मनुष्य में बदलने की प्रक्रिया में हैं?

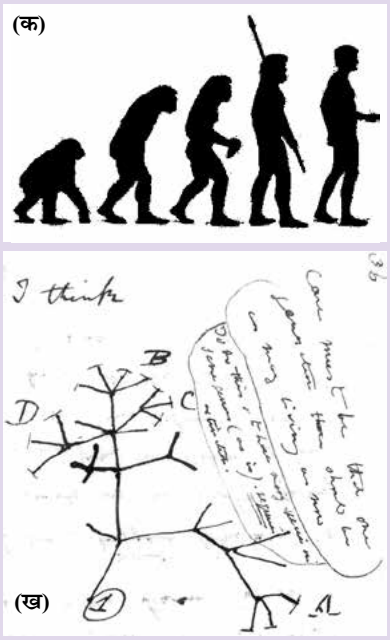

चित्र-5 : उद्विकास का चित्रण। (क) मानव विकास का ग़लत चित्रण, वानर से मनुष्य की सरल-रैखिक प्रगति के रूप में। **(ख)** डार्विन द्वारा पूर्वजों के माध्यम से सम्बन्धित जीवों का वृक्ष के रूप में चित्रण।
Credits: (a) Peter Griffin. URL: https://www.publicdomainpictures.net/en/view-image.php?image=54539&tpicture=human-evolution. License: Public Domain. (b) Charles Darwin. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Darwins_first_tree.jpg. License: Public Domain.

प्रजाति-उत्पत्ति का अधिक सटीक प्रस्तुतीकरण एक वृक्ष के रूप में होता है जो दिखाता है कि कैसे कुछ विशिष्ट लक्षणों से लैस एक सामान्य पैतृक प्रजाति सन्तति प्रजातियों में विभाजित हो जाती है, जिनमें अपने-अपने लक्षणों का समूह होता है (**चित्र-5ख** देखें)। समय के साथ यह प्रक्रिया बार-बार दोहराई गई है, प्रत्येक सन्तति प्रजाति स्वयं सन्तति प्रजातियों के एक और समूह में विभाजित होती रहती है। एक वैकासिक वृक्ष के दृष्टिकोण से देखा जाए, तो यह स्पष्ट हो जाता है कि मनुष्य वानरों से नहीं, बल्कि उन पैतृक प्रजातियों से आते हैं जिन्हें हम वानरों के साथ साझा करते हैं।

बॉक्स-7 : हम कैसे जानते हैं कि दो प्रजातियाँ एक-दूसरे से कितनी निकट हैं?

पूर्व में, एक प्रजाति के बाहरी स्वरूप (आकारिकी) के आधार पर यह अनुमान लगाया जाता था कि वह किसी अन्य प्रजाति से कितनी निकटता से सम्बन्धित है। लेकिन यह तरीक़ा हमेशा विश्वसनीय नहीं होता है – दो प्रजातियों की शारीरिक बनावट में समानता अभिसारी विकास से भी उत्पन्न हो सकती है। यह वह प्रक्रिया है जिससे ग़ैर-सम्बन्धित प्रजातियों में भी समान लक्षणों का विकास हो जाता है। उदाहरण के लिए, पक्षी और चमगादड़ दोनों उड़ सकते हैं; लेकिन चमगादड़ पक्षियों से बहुत अलग वैकासिक इतिहास वाले स्तनधारी हैं।

अपेक्षाकृत आधुनिक तरीक़े इस बात पर ध्यान देते हैं कि वर्तमान समय की प्रजातियों की आनुवंशिक सामग्री समय के साथ कैसे बदली होगी। ये विधियाँ कुछ मान्यताओं पर आधारित हैं, जैसे उत्परिवर्तन की औसत दर, भूगर्भीय घटनाएँ जिन्होंने अतीत में इसे प्रभावित किया होगा आदि। ये विधियाँ वर्तमान प्रजातियों के वैकासिक इतिहास का खुलासा करने में अधिक विश्वसनीय साबित हुई हैं।

कीटनाशक के लिए उच्च सहिष्णुता वाले मच्छर जीवित रह जाएँगे और जीवित रहकर प्रजनन जारी रखेंगे। इसलिए, कीटनाशक की सान्द्रता में प्रत्येक वृद्धि से हर अगली पीढ़ी में उच्च सहिष्णुता के लक्षण की उपस्थिति की आवृत्ति बढ़ती जाएगी। अर्थात, मच्छरों की प्रत्येक नई पीढ़ी को नियंत्रित करने के लिए कीटनाशक की बढ़ती सान्द्रता की आवश्यकता होगी। एक बार जब मच्छरों के प्रभावी नियंत्रण के लिए आवश्यक कीटनाशक की सान्द्रता एक ऐसे स्तर पर पहुँच जाती है, जहाँ मनुष्यों पर इसका ज़हरीला प्रभाव पड़ने लगता है, तो डीडीटी का उपयोग असुरक्षित हो जाता है।

किसी लक्षण के विकास की कुंजी उसके जीन के एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में संचरण में निहित है। अत: विभिन्न जीवों में लक्षण कितनी तेज़ी से विकसित होते हैं, यह इस बात पर निर्भर करता है कि वे कितनी तेज़ी से प्रजनन कर सकते हैं (**बॉक्स-5** देखें)। किसी आबादी में किसी भी सदस्य की प्रजनन सक्षमता इस बात से निर्धारित होती है कि अगली पीढ़ी में उसकी कितनी सन्तानें वयस्क अवस्था तक जीवित रहती हैं। इस अर्थ में, 'योग्यतम की उत्तरजीविता' से आशय उस जीव से नहीं है जो अपनी क्रूरता के कारण लड़ाई में विजयी हुआ हो। वास्तव में, मौजूदा पर्यावरणीय परिस्थितियों में यह उन लक्षणों वाले जीवों की बात है, जो उनके वयस्क अवस्था तक जीवित रहने में और अपने लक्षणों को अगली पीढ़ी तक पहुँचाने में योगदान करते हैं।

विभिन्न प्रजातियों की उत्पत्ति कैसे होती है?

पारिस्थितिक आवश्यकताओं और वैकासिक उत्पत्ति के आधार पर, 'प्रजाति' शब्द को कई तरीक़ों से परिभाषित किया जा सकता है। प्रजातियों की जीव वैज्ञानिक अवधारणा के अनुसार, जीवों के दो समूहों को अलग-अलग प्रजाति माना जाता है यदि वे अन्त:प्रजनन के द्वारा प्रजननक्षम सन्तानें पैदा नहीं कर सकते हैं (**बॉक्स-6** देखें)। यही कारण है कि तेंदुए और चीता, जो माँसाहारी आदतों और चित्तीदार फर में बहुत समान लगते हैं, को दो अलग-अलग प्रजाति माना जाता है। इसके विपरीत, एक डॉबरमैन पिंसर और एक लैब्राडोर रिट्रीवर एक ही प्रजाति के हैं जबकि व्यवहार और दिखने में बहुत भिन्न लग सकते हैं (**चित्र-4** देखें)।

पृथ्वी पर अनुमानित 87 लाख प्रजातियाँ निवास करती हैं (कुछ वर्णित हैं, जबकि कई मनुष्यों के लिए अभी तक अज्ञात हैं)। इन प्रजातियों को जीवों के पाँच बड़े

बॉक्स-8 : क्या उद्विकास प्रजातियों को 'बेहतर' बनाता है?

लोग अकसर मानते हैं कि प्रजातिकरण की एक निश्चित दिशा होती है और उद्विकास प्रगतिदायक है – वह बदतर से बेहतर, सरल से जटिल, कम से अधिक (बुद्धि, कौशल, क्षमता) की ओर बढ़ता है।

लेकिन प्राकृतिक चयन एक सचेत बल न होकर उपलब्ध विकल्पों में से चुनने की एक सम्भाविता-आधारित (stochastic) प्रक्रिया है। यह सही है कि उद्विकास उन जीवों का चयन करता है जो 'एक दिए गए' पर्यावरण के लिए बेहतर अनुकूलित होते हैं, लेकिन पर्यावरण में परिवर्तन की गतिशील प्रकृति को देखते हुए, आज जिसे हम 'बेहतर' समझते हैं, वह कल के लिए नुक़सानदेह भी साबित हो सकता है। हमें अतीत से जीवों के सावधानीपूर्वक संरक्षित अवशेषों (जीवाश्म) में इसके कई उदाहरण दिखते हैं जो आज विलुप्त हैं (**चित्र-6** देखें)। उदाहरण के लिए, एक वैश्विक स्तर की प्राकृतिक आपदा ने सभी ग़ैर-उड़ने वाले डायनासौरों को मिटाकर डायनासौर युग को समाप्त कर दिया था। लेकिन स्तनधारियों सहित जानवरों के कई समूह, जो आपदा से पहले डायनासौर की तुलना में कम सफल थे, उस आपदा के असर से बच निकलने में कामयाब रहे।

चित्र-6 : अन्य सफल प्रजातियों की विलुप्ति के उदाहरण। (1) *लेपिडोडेंड्रोन* वंश के एक पौधे के तने पर एक पर्ण-शल्क का जीवाश्म – यह 30 करोड़ वर्ष से अधिक साल पहले कार्बोनीफेरस युग का एक प्रमुख जीव था। इस वंश के सदस्य वर्तमान पेड़ों की तरह काष्ठीय ऊतक का निर्माण नहीं करते थे, लेकिन छोटे पत्ती-शल्कों की बहुलता और सहारे से ये चौड़ाई और ऊँचाई में काफ़ी बढ़ सकते थे। शायद प्रतिस्पर्धियों के एक अधिक कुशल समूह – जिम्नोस्पर्म (नग्नबीजी) – के उभरने के कारण वे विलुप्त हो गए हैं; जिम्नोस्पर्म आज भी पृथ्वी पर मौजूद हैं। (2) एक विलुप्त समुद्री आर्थ्रोपोड का जीवाश्म, जिसे 'ट्राइलोबाइट' के रूप में वर्गीकृत किया गया है। ये जीव विलुप्त होने से पहले लगभग 30 करोड़ वर्ष (~ 50 से ~ 25 करोड़ वर्ष पूर्व के बीच) तक अपने समुद्री आवासों में ख़ूब फले-फूले थे, इनकी विलुप्ति कारण आज भी अज्ञात हैं।

Credits: (a) Jstuby, Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Lepidodendron_PAMuseum.jpg. License: Public Domain. (b) Juan Carlos Fonseca Mata, Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki File:Trilobite_fossil,_Desert_Museum.jpg. License: CC-BY-SA.

बॉक्स-9 : क्या हम एलोपेट्रिक (भौगोलिक पृथक्करण) प्रजातिकरण का कोई उदाहरण जानते हैं?

लॉफिंग थ्रश नामक पक्षी की एक प्रजाति दक्षिणी भारत में पश्चिमी घाट के इलाक़े में पाई जाती है। वैज्ञानिकों के अनुसार हिमालय में पाए जाने वाले लॉफिंग थ्रश की एक प्रजाति और पश्चिमी घाट वाली प्रजाति का एक साझा पूर्वज है। यह माना जाता है कि 1 करोड़ साल पहले, मध्य और प्रायद्वीपीय भारत में नम जंगलों के कई बड़े-बड़े हिस्से जलवायु परिवर्तन के कारण सूख गए थे। इसकी वजह से पैतृक प्रजाति के कुछ पक्षी पश्चिमी घाट के शेष बचे नम जंगलों में ही फँस गए। लम्बे समय तक पश्चिमी घाट और हिमालय के बीच प्रतिकूल आवास बने रहने के कारण यह आबादी हिमालयी आबादी से प्रजनन की दृष्टि से अलग हो गई। आज, थ्रश की दो आबादियाँ स्पष्ट रूप से अलग-अलग प्रजातियाँ हैं।

समूहों (जगत) के तहत वर्गीकृत किया जाता है – आर्किया, बैक्टीरिया, प्रोटिस्टा, पादप और जन्तु। इस उल्लेखनीय विविधता के बावजूद, हम जानते हैं कि समस्त जीवन 3.5 अरब वर्ष पहले प्रजातिकरण की प्रक्रिया के फलस्वरूप एक ही आदिम पैतृक रूप से उभरा था। पैतृक रूपों के सन्तति प्रजातियों में विभाजन को विविधीकरण के रूप में जाना जाता है (**बॉक्स-7** देखें)। विविधीकरण, मुख्य रूप से, लम्बे समय तक प्रजनन अलगाव के कारण होता है।

एक ऐसी आबादी की कल्पना करें जिसने घने जंगलों वाले भू-भाग में कमोबेश वृक्षों पर रहने के लिए उपयुक्त लक्षण विकसित कर लिए हैं। मान लीजिए, इस आबादी के कुछ सदस्य एक अस्थाई सेतु से बहुत कम पेड़ों वाले दूसरे भू-भाग पर पहुँच जाते हैं। ऐसा सेतु, उदाहरण के लिए, एक अत्यन्त

बॉक्स-10 : क्या हमें समस्थानिक प्रजातिकरण का कोई उदाहरण पता है?

अन्य प्रजातियों के समान, बड़े कान वाले हॉर्सशू चमगादड़, भी प्रतिध्वनिस्थान-निर्धारण (echo-location) द्वारा सम्प्रेषण करते हैं। उनकी आवाज़ की आवृत्ति चमगादड़ के आकार के अनुसार बदलती है। रोचक बात यह है कि किसी चमगादड़ द्वारा सुनी जा सकने वाली आवाज़ की आवृत्ति भी उसके शरीर के आकार पर निर्भर करती है। एक अध्ययन से पता चलता है कि इस प्रजाति के बड़े आकार के चमगादड़ों की आवाज़ शायद छोटे आकार के चमगादड़ की श्रवण सीमा से बाहर होती है, जिसके चलते बड़े चमगादड़ों के लिए छोटे चमगादड़ बहरे होंगे। यदि यह चुनिन्दा बहरापन अलग-अलग आकार के चमगादड़ के बीच अन्तःप्रजनन की सम्भावना को प्रभावित करता है; एक समय के बाद, छोटे आकार के चमगादड़ पहले व्यवहार के लिहाज़ से और बाद में प्रजनन की दृष्टि से विलग हो जाएँगे। परिणाम यह होगा कि एक ही इलाक़े में चमगादड़ों की दो अलग-अलग प्रजातियाँ उभर आएँगी।

ठण्डी जलवायु घटना के दौरान समुद्र पर बर्फ़ जमने से निर्मित हो सकता है। सेतु के पिघलने के बाद, ये सदस्य शेष आबादी से कट जाएँगे। इसका मतलब यह होगा कि दोनों तरफ़ के सदस्यों के पास अब अन्तःप्रजनन का कोई तरीक़ा नहीं होगा – उनके बीच एक बड़ी, अलंघ्य जलराशि होगी। प्राकृतिक चयन अपना काम करेगा – एक भू-भाग पर ज़्यादा-से-ज़्यादा वृक्षवास अनुकूल लक्षणों का चयन तथा दूसरे भू-भाग पर वृक्षवासी लक्षणों का कम-से-कम चयन (**बॉक्स-8** देखें)। यदि ये दो आबादियाँ लम्बे समय तक एक-दूसरे से अलग रहीं (~हज़ारों या लाखों साल), तो वे अन्तःप्रजनन की क्षमता पूरी तरह से खो देंगी और दो अलग-अलग प्रजातियों का निर्माण हो जाएगा (देखें **बॉक्स-9**)। इस प्रक्रिया को, जहाँ कोई प्राकृतिक बाधा आनुवंशिक अलगाव का कारण बनती है, जो एक नई प्रजाति को जन्म देती है, **एलोपेट्रिक प्रजातिकरण** (भौगोलिक पृथक्करण से उत्पन्न प्रजातिकरण) कहा जाता है।

शारीरिक बाधाएँ एकमात्र कारण नहीं हैं जिसकी वजह से दो आबादियाँ समय के साथ आनुवंशिक रूप से अलग-अलग हो जाती हैं। कुछ मामलों में, पर्यावरणीय परिस्थितियाँ इस तरह से स्थानिक हो जाती हैं कि एक ही समय पर आबादी के विभिन्न सदस्यों पर अलग-अलग प्रकार के चयन दबाव कार्य करते हैं (**बॉक्स-10** देखें)। यदि सदस्यों के ये अलग-अलग समूह लम्बे समय तक परस्पर प्रजनन नहीं करते हैं, तो **समस्थानिक प्रजातिकरण (sympatric speciation)** की यह प्रक्रिया एक नई प्रजाति को जन्म दे सकती है।

चलते-चलते

लगातार बदलता पर्यावरण निरन्तर ऐसे लक्षणों का चयन करता है जो जीवों की दूसरों की तुलना में अधिक जीवित रहने और प्रजनन करने की सम्भावना को बढ़ाते हैं। जब यह चयन प्रजनन की दृष्टि से पृथक्कृत समूहों पर कार्य करता है, तो यह प्रजातिकरण का कारण बन सकता है।

इस प्रक्रिया का उपयोग पृथ्वी पर दिखाई देने वाली जीवन की विशाल विविधता की व्याख्या के लिए किया जा सकता है। हर दिन नई-नई प्रजातियों और उनके वैकासिक इतिहास की खोज हो रही है, जो हमें जीवन की उत्पत्ति के रहस्य को उजागर करने की दिशा में एक क़दम और आगे ले जाती हैं।

मुख्य बिन्दु

- प्राकृतिक चयन द्वारा उद्विकास के सिद्धान्त का उपयोग पृथ्वी पर रहने वाले जीवों की विशाल विविधता की व्याख्या के लिए किया जा सकता है।
- यह सिद्धान्त इस तथ्य पर आधारित है कि सभी जीवों में विविधतापूर्ण और आनुवंशिक लक्षण होते हैं।
- किसी जीव के पर्यावरण में परिवर्तन (समय और या स्थान के साथ), कुछ लक्षणों का चयन कर एक छलनी के रूप में कार्य करते हैं।
- जो लक्षण दिए गए पर्यावरण में जीवित रहने और प्रजनन के लिए अनुकूल होते हैं, उनके अगली पीढ़ी के सदस्यों में पहुँचने की सम्भावना अधिक होती है।
- उद्विकास एक रैखिक प्रक्रिया नहीं है जहाँ एक प्रजाति दूसरे में बदल जाती है। इसकी बजाय पृथ्वी के वैकासिक इतिहास में समय-समय पर पैतृक जीवन रूपों का विभाजन वर्तमान जीवन रूपों में हो जाता है।
- प्रजातियों का विभाजन या विविधीकरण पैतृक आबादियों में प्रजनन अलगाव के कारण होता है।
- एक ही प्रजाति के सदस्यों के बीच प्रजनन अलगाव, शारीरिक बाधाओं या अत्यधिक स्थानिक पर्यावरणीय परिस्थितियों के कारण हो सकता है।

Note: Source of the image used in the background of the article title: https://en.wikipedia.org/wiki/File:Haeckel_Muscinae.jpg. Credits: Haeckel Muscinae (Mosses) by Ernst Haeckel, Kunstformen der Natur or Art forms in Nature (1904), plate 72: Muscinae, Wikimedia Commons. License: CC-BY-SA.

गीता रामास्वामी सिटीजन साइंस प्रोजेक्ट *सीजनवॉच* (www.seasonwatch.in) की प्रधान हैं। नेचर कंजरवेशन फ़ाउण्डेशन (NCF), बेंगलूरु में स्थित इस परियोजना का उद्देश्य पादप ऋतुजैविकी के माध्यम से मौसमों को समझना है। उनसे geetha@ncf-india.org पर सम्पर्क किया जा सकता है।

अनुवाद : यशोधरा कनेरिया **पुनरीक्षण :** सुशील जोशी **कॉपी एडिटर :** अनुज उपाध्याय

प्रकृति में पारस्परिकता का विकास कैसे हुआ : चींटी-पौधे के सह-सम्बन्धों का केस

जयश्री चानम

कुछ चींटियों और पौधों की प्रजातियों के एक-दूसरे से ऐसे सम्बन्ध दिखते हैं जो दोनों को लाभान्वित करते हैं। लगातार प्रतिस्पर्धा और अस्तित्व के लिए संघर्ष करती दुनिया में इस प्रकार के असंघर्षशील, अप्रतिस्पर्धी और मित्रवत प्रतीत होते सम्बन्धों की व्याख्या कैसे की जा सकती है?

क्या आपने कभी तितली या मधुमक्खी द्वारा फूलों के परागण की ओर ध्यान दिया है? क्या आप जानते हैं कि इस सेवा के बदले में पौधे कीट को मकरन्द और पराग का भोजन प्रदान करते हैं। हेरोडोटस और अरस्तू के समय से ही दार्शनिकों ने प्रकृति में ऐसी विलक्षण 'मित्रताएँ' देखी हैं। एक अन्य उदाहरण मगरमच्छ के खुले जबड़ों में कुछ खोजती हुई टिटहरी का है। आपके ख़्याल में इसे मगरमच्छ खा क्यों नहीं जाता? क्योंकि यह चिड़िया मगरमच्छ के मुँह से ख़ून चूसने वाली रसीली जोंक को चुन-चुनकर खा जाती है (देखें **चित्र-1**)।

क्या आपको आश्चर्य हो रहा है कि क्यों इस तरह के अवलोकन विलक्षण प्रतीत होते

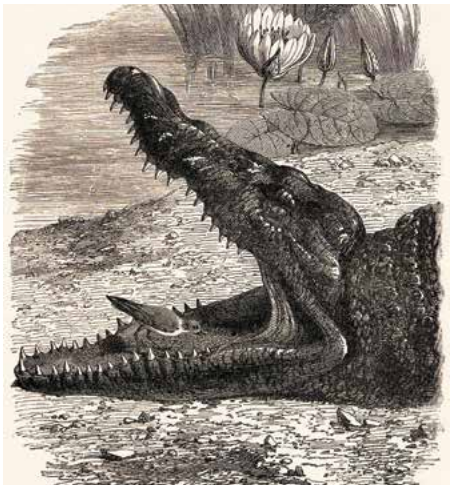

चित्र-1 : टिटहरी जैसी छोटी-सी चिड़िया मगरमच्छ के खुले मुँह से जोंक खाती है।
Credits: Henry Scherren, Popular Natural History (1909), Wikimedia Commons. URL: https://en.wikipedia.org/wiki/File:PloverCrocodileSymbiosis.jpg. License: CC-BY.

बॉक्स-1 : कुछ अन्य प्रकार के अन्तर प्रजातीय सह-सम्बन्ध। इनमें से कुछ को आपने अपने घर या आँगन में देखा होगा –

- प्रतिद्वन्द्विता : एक जीव दूसरे के विरुद्ध हो, जैसे शिकारी-शिकार का सम्बन्ध। उदाहरण के लिए टिड्डा घास खाता है।
- प्रतिस्पर्धा : दो या अधिक जीव भोजन जैसे समान सीमित संसाधनों के लिए प्रतिस्पर्धा करते हैं। उदाहरण के लिए मारे गए शिकार के लिए शेर और लकड़बग्घे में प्रतिस्पर्धा।
- सहभोजिता : केवल एक पक्ष इस सम्बन्ध से लाभान्वित होता है जबकि दूसरा अप्रभावित रहता है। उदाहरण के लिए घरेलू छिपकलियाँ घरों में सुरक्षा पाकर शिकार होने से सुरक्षित रहती हैं, जबकि मनुष्य इनसे ज़्यादा प्रभावित नहीं होते।
- परजीविता : एक पक्ष दूसरे की क़ीमत पर लाभान्वित होता है। उदाहरण के लिए कई तरह के सूक्ष्मजीव पौधों, जन्तुओं और मनुष्यों में बीमारियाँ उत्पन्न करते हैं।

हैं? प्रजातियाँ एक-दूसरे के साथ अनगिनत तरीक़ों से परस्पर क्रिया करती हैं (देखें **बॉक्स-1**) हालाँकि बहुत से ऐसे परस्पर सम्बन्ध प्रतिद्वन्द्विता के होते हैं जिसमें या तो एक प्रजाति अन्य प्रजाति का भोजन बन जाती है या उसे दूसरी प्रजाति के साथ सीमित संसाधनों (जैसे भोजन और आवास) के लिए साथ प्रतिस्पर्धा करनी होती है। ऐसे अन्तर प्रजातीय परस्पर सम्बन्ध को जहाँ दो अन्तर्क्रिया करने वाली प्रजातियाँ एक-दूसरे को लाभान्वित करें **पारस्परिकता** कहते हैं। लेकिन ऐसे सम्बन्ध होते ही क्यों है?

पारस्परिकता की पहेली

जैसा कि वैकासिक जीववैज्ञानिक डॉबज़ान्स्की (1973) का कथन है, "जीवविज्ञान में किसी बात का कोई अर्थ नहीं है, जब तक कि उसे उद्विकास की दृष्टि से न देखा जाए।"

चार्ल्स डार्विन के अनुसार :

"...यदि यह सिद्ध किया जा सके कि किसी एक प्रजाति की रचना का कोई भाग पूरी तरह से किसी अन्य प्रजाति की अच्छाई के लिए बना है तो यह मेरे सिद्धान्त को मटियामेट कर देगा, क्योंकि प्राकृतिक चयन के माध्यम से ऐसा कुछ बन ही नहीं सकता...।" डार्विन के सिद्धान्त के परिणामस्वरूप प्रतिस्पर्धा और शिकार उद्विकास के प्रमुख चालक माने जाने लगे (देखें **बॉक्स-2**)। पहली नज़र में कोई यह मान सकता है कि पारस्परिकता उद्विकास की दृष्टि से सफल नहीं हो सकती। आख़िरकार, प्राकृतिक चयन क्यों ऐसे जीवों का समर्थन करेगा जो अन्य जीवों की मदद करते हैं?

आज हम जानते हैं कि पारस्परिकता इसलिए बरक़रार है क्योंकि ये पारस्परिक दोहन के रूप हैं जिनमें लाभ और लागत का एक बहुत ही नाज़ुक सन्तुलन होता है (देखें **बॉक्स-3**)। इसका मतलब है कि ऐसी मित्रता में प्रत्येक 'देने' के लिए एक 'लेना' है जिससे दिए गए के मूल्य और उससे अधिक की भरपाई हो जाती है। दूसरे शब्दों में दी गई सेवाओं के बदले पारितोषिक दिए जाते हैं। चूँकि ये पारितोषिक महँगे निवेश होते हैं, इसलिए :

- जो जीव किसी सेवा के लिए कम-से-कम पारितोषिक देता है उसके सफल होने की सम्भावना अधिक देने वाले की तुलना में ज़्यादा है। उदाहरण के लिए एक पौधा परागण करने वाले कीट को आकर्षित करने हेतु जितना ज़रूरी है उतने ही मकरन्द का उत्पादन करता है तो वह सम्भवतः अपने अस्तित्व और प्रजनन के लिए उस पौधे की तुलना में अधिक संसाधनों का संरक्षण करता है जो आवश्यकता से अधिक मकरन्द का उत्पादन करता है।
- मित्रता केवल तब तक ही निभेगी जब तक दोनों पक्ष इससे केवल लाभ प्राप्त करें। उदाहरण के लिए, कई पादप प्रजातियों में पुष्प का परागण होते ही मकरन्द का उत्पादन बन्द हो जाता है।
- ऐसी मित्रताएँ केवल तब तक टिकती हैं जब तक कि प्रत्येक पक्ष के लिए लाभ लागत से अधिक हो। किसी भी प्रकार का असन्तुलन, जैसे कि धोखेबाज़ी (जी हाँ, धोखेबाज़ी परिस्थितिकी विज्ञान में यह एक तकनीकी शब्द है!) इस समीकरण को टूटने की कगार पर ले जा सकती है। उदाहरण के लिए कुछ फूल परागणकर्ताओं को आकर्षित करने के लिए मकरन्द का झूठा विज्ञापन करते हैं मगर यह पारितोषिक उन्हें देते नहीं। परागणकर्ता चतुर होते हैं – वे जल्दी ही

बॉक्स-2 : क्या प्रतिस्पर्धा और शिकार उद्विकास के प्रमुख चालक हैं?

अपनी युगान्तरकारी पुस्तक *On the Origin of Species by Means of Natural Selection or the Preservation of Favoured Races in the Struggle for Life* में डार्विन ने प्रतिपादित किया था कि आज संसार में जितने भी जीव उपस्थित हैं उनके पास ऐसे गुण हैं जिन्होंने अतीत में ख़तरों से बच निकलने में इनकी मदद की थी।

ऐसे जीव जो शिकार होने से बचने में माहिर हों, संसाधनों की कमी (जैसे भोजन या सम्भोग साथी) के लिए प्रतिस्पर्धा में अधिक समर्थ हों या बदलते पर्यावरण में अनुकूलित होने में अधिक सक्षम हों उनके जीवित रहने और प्रजनन करने की सम्भावना अधिक होती है। चूँकि उनकी सन्तति को भी ये लक्षण विरासत में मिलना सम्भव है और वे वैसे ही परिवेश में जीने के लिए बेहतर होंगे, इसलिए अपेक्षाकृत अच्छे लक्षण आबादी में फैलेंगे। डार्विन ने इस प्रक्रिया को प्राकृतिक चयन कहा।

आबादी को चुनौतीपूर्ण पर्यावरण में सफलतापूर्वक अनुकूलित होने में मदद करने वाले लक्षणों के लगातार चयन के परिणामस्वरूप कई पीढ़ियों की समयावधि में ऐसी प्रजाति का विकास भी हो सकता है जो अपने पूर्वजों से बहुत भिन्न हो।

ऐसे धोखेबाज़ फूलों की अनदेखी करना सीख जाते हैं।

अर्थात पारस्परिक सम्बन्ध उतने दोस्ताना भी नहीं होते जितनी उनके बारे में कल्पना की जाती है। आश्चर्य नहीं, धोखेबाज़ी काम करती है लेकिन केवल तब तक जब तक कि धोखेबाज़ ईमानदार परस्पर सहयोगियों की आबादी का एक छोटा हिस्सा हों।

बॉक्स-3 : पारस्परिकता दो प्रकार की होती है – अविकल्पी और विकल्पी

अविकल्पी पारस्परिकता में दो भागीदारों का उद्विकास साथ-साथ इतना नज़दीकी होता है कि उनका एक-दूसरे के बिना अस्तित्व नहीं रह सकता। उदाहरण के लिए अंजीर वृक्ष की प्रत्येक प्रजाति एक विशिष्ट ततैया की प्रजाति को आश्रय देती है जो इनका परागण करती है।

विकल्पी पारस्परिकता अधिक अवसरवादी होती है। उदाहरण के लिए कुछ पौधों का परागण मधुमक्खियों और तितलियों की कई प्रजातियों से हो सकता है; और इनमें से कई मधुमक्खियों और तितलियों की प्रजातियाँ कई अलग-अलग प्रजातियों के पुष्पों का परागण करती हैं। ऐसी पारस्परिकताओं में इनमें से कोई भी भागीदार पूरी तरह से दूसरे पर निर्भर नहीं होता है।

चींटी-पौधा सह-सम्बन्ध में पारस्परिकता

दोनों प्रजातियों के लिए लाभदायक अन्तर प्रजातीय सम्बन्धों के लिए 1873 में बेल्जियम के जीववैज्ञानिक पियरे-जोसेफ़ फान बेनेडेन ने 'पारस्परिकता' शब्द दिया था। 1966-67 तक पारस्परिकता के अध्ययन अधिकांशतः प्रकृति के अवलोकनों पर आधारित थे। इस समय एक वैकासिक परिस्थिति विज्ञानी डेनियल जेनझेन ने प्रायोगिक रूप से प्रदर्शित किया कि मध्य अमरीका की कुछ बबूल प्रजातियाँ और चीटियाँ एक-दूसरे पर आश्रित हैं।

बॉक्स-4 : क्या चीज़ डोमेशिया नहीं है?

क्या आपने अपने बग़ीचे में आम के पेड़ पर पत्तियों से बने चींटियों के बड़े-बड़े घोंसले देखे हैं? ये डोमेशिया नहीं हैं। आम पर पत्तियों से बने घोंसले बनाने के लिए बुनकर चींटियों ने पत्तियों की आपस में सिलाई की है जबकि डोमेशिया तैयार आश्रय होते हैं, जो साझेदार पौधे द्वारा चींटियों को उपलब्ध कराए जाते हैं।

आज हम कई और ऐसे पौधों के बारे में जानते हैं, जो चींटियों के साथ पारस्परिक सम्बन्ध बनाते हैं। इनमें से अधिकतर उष्णकटिबन्धीय क्षेत्र के हैं। ऐसी चीटियाँ पौधों की शाक-भक्षियों से सुरक्षा करती हैं। चींटी-पादप कहे जाने वाले ये पौधे चींटियों को बदले में आश्रय और/ या भोजन प्रदान करते हैं :

- जो चींटी-पौधे अपने चींटी साझेदार को प्रतिफल में केवल भोजन प्रदान करते हैं उन्हें चींटी प्रेमी (Myrmecofiles) कहते हैं। यह प्रतिफल ग़ैर-पुष्पीय मकरन्द (EFN) और भोजनकाय के रूप में होता है। ग़ैर-पुष्पीय मकरन्द अपुष्पीय भागों जैसे पत्ती के डण्ठल, पत्ती के फलक और निपत्रों से स्रावित होता है। ठोस भोज्य गोलिकाएँ पर्णकों के सिरों या पत्ती के डण्ठल के आधार से स्रावित होती हैं।
- जो चींटी-पौधे अपने चींटी साझेदार को आश्रय भी प्रदान करते हैं, उन्हें चींटी-पादप (Myrmecophytes) कहते हैं और ये आश्रय डोमेशिया कहलाते हैं। डोमेशिया का निर्माण पत्तियों, काँटों या शाखाओं के स्वतः रूपान्तरण से होता है (देखें **बॉक्स-4**)। उदाहरण के लिए कुछ डोमेशिया शाखाओं से बने होते हैं जो अन्दर की ओर से खोखली और बाहरी तरफ़ फूली हुई होती हैं।

बॉक्स-5 : सह-विकास क्या है?

यह वह प्रक्रिया है जिसमें दो परस्पर अन्तर्क्रिया करती प्रजातियाँ प्राकृतिक चयन के माध्यम से एक-दूसरे के विकास को प्रभावित करती हैं। पारस्परिक सम्बन्धों में यह प्रक्रिया लम्बे समय में मज़बूत साझेदारी को जन्म दे सकती है।

चित्र-2 : *अकेसिया कॉर्निजेरा* की एक शाखा पर काँटे (डोमेशिया) और पर्णकों के शीर्ष पर पीले भोजनकाय दिख रहे हैं। यह पौधा गोटिन्जेन विश्वविद्यालय, जर्मनी के वानस्पतिक उद्यान में था।
Credits: Joyshree Chanam. License: CC-BY-NC.

चूँकि चींटी प्रेमी पादपों पर चींटियाँ निवास नहीं करती हैं, इसलिए वे इन पर समय-समय पर चरने के लिए आती हैं। इसलिए हो सकता है कि वे इनकी रक्षा करती हों या शायद नहीं भी। इसके विपरीत चींटी पादपों पर चींटियों की लगातार उपस्थिति का मतलब है कि हो सकता है वे अपने साझेदार पौधों की शाक-भक्षियों से रक्षा करेंगी। लेकिन क्या केवल यही तरीक़ा है जिसमें इन पारस्परिक सम्बन्धों में भिन्नता हो सकती है? या कोई दूसरे चयन दबाव हैं जो पारस्परिक सम्बन्धों को चलाने वाले लाभ और लागत के नाज़ुक सन्तुलन को प्रभावित कर सकते हैं? आइए तीन उदाहरणों के माध्यम से इस प्रश्न की छानबीन करते हैं।

केस-1 : बुल्स हॉर्न अकेसिया में चींटी-पौधा सह-सम्बन्ध

पारस्परिक सह-सम्बन्धों में सबसे प्रसिद्ध है मध्य अमरीका के वृक्ष *एकेशिया कोर्निजेरा* (*Acacia cornigera*) और *स्यूडोमिरमेक्स* (*Pseudomyrmex*) वंश की चींटियों के बीच सम्बन्ध (देखें **चित्र-2**)। यह वृक्ष चींटियों को बड़े खोखले काँटों के रूप में आश्रय देता है (इसी कारण वृक्ष का सामान्य नाम बुल्स हॉर्न पड़ा है)। यह ग़ैर-पुष्पीय मकरन्द और भोजनकाय दोनों तरीक़ों से भोजन प्रदान करते हैं। इन भोजनकायों को थॉमस बेल्ट के सम्मान में बेल्टियन बॉडीज कहा जाता है, जिन्होंने 1800 के दशक में सबसे पहले इन पर ध्यान दिया था। निवासी चीटियाँ रात-दिन पेड़ की गश्त करती हैं और आक्रामक रूप से शाक-भक्षियों से इसकी रक्षा करती हैं। उदाहरण के लिए इन्हें पत्तियों को खाने वाले बड़े कीटों और इल्लियों को काटते और दूर भगाते देखा गया है। इन चींटियों को वहाँ से ऐसी बेलों को काटते हुए भी देखा गया है जो पोषक वृक्ष के चारों ओर लिपटने की कोशिश करती हैं।

यह चींटी-पौधा सह-सम्बन्ध अविकल्पी पारस्परिकता का उदाहरण तो है ही, सह-विकास भी है (देखें **बॉक्स-5**)। जेनज़ेन के अध्ययन दर्शाते हैं कि यदि प्रायोगिक तौर पर *स्यूडोमिरमेक्स* चींटियों को हटा दिया जाए तो पोषक वृक्ष शाक-भक्षियों के प्रति घातक रूप से असुरक्षित हो जाता है। इसलिए इसकी ओर आकर्षित होने वाली चीटियाँ जितनी अधिक आक्रामक होंगी उतनी ही अच्छी तरह से वृक्ष शाक-भक्षियों से सुरक्षित रहेगा। पोषक वृक्ष जितना ज़्यादा पारितोषिक (आश्रय और भोजन) प्रदान करेगा, वह चींटियों के लिए उतना ही अधिक आकर्षक हो जाएगा। कोई चींटी जितनी अधिक आक्रामक होगी उसके द्वारा पोषक वृक्ष पर आश्रय और भोजन तलाशने वाली अन्य चींटियों को खदेड़ देने की सम्भावना अधिक रहेगी। इन पारस्परिक चयन दबावों के माध्यम से ही सह-विकास ने अविकल्पी पारस्परिकता को बनाए रखने में मदद की है।

चित्र-3 : *हम्बोड्शिया ब्रुनोनिस* चींटियों को आश्रय और भोजन दोनों उपलब्ध करवाता है। **(क)** स्वयं खुलने वाली दरार के साथ डोमिशियम। **(ख)** पत्तियों पर ग़ैर-पुष्पीय मकरन्द।
Credits: Joyshree Chanam. License: CC-BY-NC.

चित्र-4 : *हम्बोड्शिया ब्रुनोनिस* के डोमेशियम के अन्दर वृक्षीय केंचुआ (Perionyx pullus)।
Credits: Joyshree Chanam. License: CC-BY-NC.

केस-2 : हसिगे मारा में चींटी-पौधा सह-सम्बन्ध

एक और मज़ेदार चींटी-पौधा सह-सम्बन्ध *हम्बोड्शिया ब्रुनोनिस (Humbodtia brunonis)* में देखा गया है। इसे कन्नड़ में *हसिगे मारा* कहते हैं और यह पश्चिमी घाट में वर्षा वनों की उत्तर से दक्षिण में फैली एक

पतली पट्टी का एक स्थानिक वृक्ष है।

अकेसिया कार्निजेरा की तरह *हसिगे मारा* भी अपने चींटी साझेदारों को प्रवेश द्वार युक्त फूली हुई खोखली शाखाओं के रूप में डोमेशिया और पत्तियों और पुष्प कलिकाओं के निपत्रों पर बने ग़ैर-पुष्पीय मकरन्द से भोजन प्रदान करता है (देखें **चित्र-3**) हालाँकि यह पारस्परिकता बुलहॉर्न एकेसिया से कुछ महत्त्वपूर्ण मामलों में भिन्न होती है :

1. इस प्रजाति के कुछ ही सदस्य डोमेशिया उपलब्ध करवाते हैं। इसलिए *हसिगे मारा* को अर्ध-चींटी पादप कहना बेहतर है।
2. इस वृक्ष प्रजाति के वितरण के पूरे क्षेत्र में कई चींटी प्रजातियाँ (क़रीब 16) इनके डोमेशिया में निवास करती देखी जाती हैं।
3. केवल एक चींटी प्रजाति (*Technomyrmex albipes*) ही वृक्ष को संरक्षण प्रदान करती पाई गई है।
4. इस वृक्ष प्रजाति के डोमेशिया में चींटियों के अलावा अन्य अकशेरुकी प्राणियों भी पाए जाते हैं।

इनमें से सबसे मज़ेदार है एक विशिष्ट *'वृक्ष केंचुआ' (Perionyx pullus)* जो केवल इस वृक्ष के डोमेशिया में ही देखा गया है (देखें **चित्र-4**)।

एक स्वाभाविक प्रश्न है कि क्या शाक-भक्षियों से सुरक्षा का इस चींटी-पौधा सह-सम्बन्ध पर कोई प्रभाव है? *हासिगे मारा* पर उसके पूरे वितरण क्षेत्र में किए गए अध्ययन से हमें ज्ञात हुआ कि दक्षिण की ओर के वृक्षों पर सुरक्षात्मक चीटियाँ अपेक्षाकृत ज़्यादा पाई गईं। इन वृक्षों पर तुलनात्मक रूप से बड़ी संख्या में डोमेशिया भी मिले। उन्होंने मकरन्द का भी ज़्यादा उत्पादन किया जिसमें अमीनो अम्लों की सान्द्रता भी अधिक थी। यह महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि एक पूर्व अध्ययन सुझाता है कि रक्षात्मक चींटी प्रजातियाँ अमीनो अम्ल से युक्त ग़ैर-पुष्पीय मकरन्द को ज़्यादा प्राथमिकता देती हैं; इसके विपरीत सुरक्षा प्रदान नहीं करने वाली प्रजातियाँ किसी भी ग़ैर-पुष्पीय मकरन्द का भोजन के रूप में उपयोग कर लेती हैं बशर्ते कि वह मीठा हो। यह कोई अचरज की बात नहीं थी कि हमने दक्षिण के वृक्षों पर शाक-भक्षियों का दबाव भी सर्वाधिक पाया। चींटियों की उपस्थिति ने

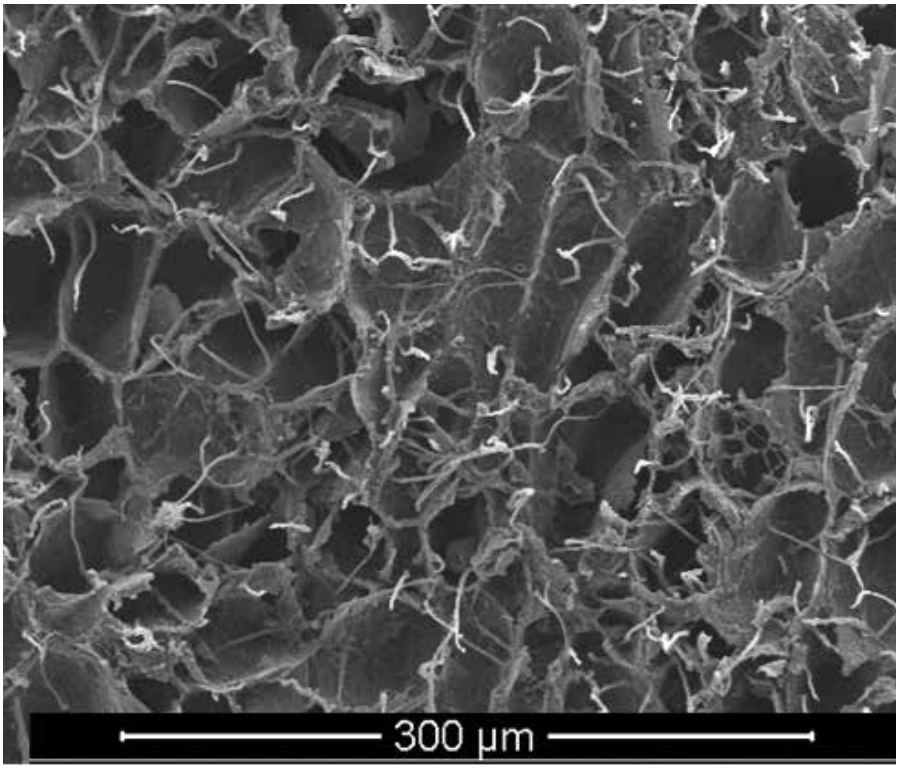

चित्र-5 : *हम्बोड्शिया ब्रुनोनिस* के डोमेशियम की अन्दरूनी भित्ती पर कवक तन्तुओं के अस्तर का एक SEM चित्र।
Credits: Joyshree Chanam. License: CC-BY-NC.

चित्र-6 : एक पौधे पर माहुओं को पालती चींटियाँ।
Credits: Joyshree Chanam. License: CC-BY-NC.

इन वृक्षों पर शाक-भक्षण में महत्त्वपूर्ण कमी की थी, जो इनकी रक्षात्मक भूमिका की पुष्टि करती हैं। इसके विपरीत उत्तरी क्षेत्र के वृक्षों के बीच शाक-भक्षियों का ख़तरा और उनसे सुरक्षा के लिए चींटियों की आवश्यकता भी अपेक्षाकृत कम थी।

किन्तु हमारी सबसे मज़ेदार खोज यह थी कि डोमेशिया धारी शाखा को लगभग 1/5 भाग नाइट्रोजन सुरक्षात्मक और असुरक्षात्मक चींटियों से मिली। यह उत्तर के वृक्षों में डोमेशिया और ग़ैर-पुष्पीय मकरन्द की कम उपस्थिति की व्याख्या करता है क्योंकि वहाँ शाक-भक्षियों का दबाव इतना कम है कि चींटियों द्वारा सुरक्षा में निवेश करना शायद बहुत महँगा हो। पौधों के लिए नाइट्रोजन अत्यन्त महत्त्वपूर्ण पोषक पदार्थ है और उष्णकटिबन्धीय वर्षा वनों की मिट्टी (जहाँ *हासिगे मारा* उगता है) में नाइट्रोजन की उपलब्धता कम रहती है। इससे केंचुए की उपस्थिति की भी व्याख्या हो जाती है। हमने पाया कि किसी भी समय डोमेशियाधारी शाखाओं में लगभग 90% नाइट्रोजन केंचुओं की विष्ठा से प्राप्त होती है। केंचुए की अपघटित होती विष्ठा से निकलने वाली नाइट्रोजन को वृक्ष डोमेशिया की भित्ति के माध्यम से अवशोषित करता है। स्कैनिंग इलेक्ट्रॉन सूक्ष्मदर्शी (SEM) चित्रों में दिखता है कि डोमेशिया की अन्दरूनी दीवार पर कवक तन्तुओं का अस्तर होता है, जो चींटियों और केंचुए की विष्ठा का विखण्डन करने में सहायक हो सकता है (देखें **चित्र-5**)। इसका मतलब यह हुआ कि *हासिगे मारा* पर अरक्षात्मक अकशेरुकी प्राणी पारस्परिक हैं न कि मुफ़्तख़ोर या परजीवी जैसा कि हम पहले मानते थे। पोषक पौधे को भोजन और आश्रय के बदले में इन निवासियों से पोषण प्राप्त होता है। पोषण आधारित पारस्परिकता का यह कोई पहला ज्ञात उदाहरण नहीं है, यह दर्शाता है कि इस तरह की पारस्परिकता का विकास सुरक्षा आधारित पारस्परिकता के साथ-साथ या इसकी अनुपस्थिति में भी हो सकता है।

केस-3 : अपारस्परिक चींटी-पौधा सह-सम्बन्ध

क्या चीटियाँ हमेशा पौधों के साथ सुरक्षा या पोषण आधारित पारस्परिक सम्बन्ध बनाती हैं? यह सत्य नहीं है। आप अपने बग़ीचे में एक अलग प्रकार का सह-सम्बन्ध देख सकते हैं – जो कि वास्तव में *हासिगे मारा* उदाहरण से एक क़दम अधिक जटिल है।

यदि आपने थोड़ी-बहुत बाग़वानी की हो तो आपको ऐसी अप्रिय स्थिति का सामना करना पड़ा होगा कि आपके पौधों पर छोटे-छोटे कीटों (जैसे माहू, शल्क कीटों और मीली बग्स) का आक्रमण हुआ है। ये कीट अपने सिरिन्ज जैसे मुखांगों (स्टाइलेट) से पौधे के फ्लोएम से रस चूसते हैं। जैसा कि आप जानते हैं फ्लोएम में उपस्थित रस पोषकों से भरपूर भोजन है जो प्रकाश संश्लेषण द्वारा बना है। इसका स्थानान्तरण पौधे के विभिन्न भागों में वृद्धि और प्रजनन के लिए ऊर्जा प्रदान करने हेतु किया जाता है। रस चूषक जन्तु स्वयं रस में से अमीनो अम्ल को अपने पास रख लेते हैं और इसकी अधिकांश शर्कराओं को उत्सर्जित कर देते हैं। उत्सर्जित शर्करा मीठी बूँदों के रूप में होती हैं जो हनीड्यू कहलाता है। हनीड्यू के नाम और स्वाद में मिठास का आभास होता है मगर याद रहे यह माहू का मल है।

प्रायः आपको इन संक्रमित पौधों पर कुछ चींटियाँ भी दिखाई देंगी। अगर आप सोचते हैं कि ये रस चूषक जन्तुओं से आपके पौधों की सुरक्षा करती हैं तो एक बार फिर से सोचिए! इनमें से कई चींटी प्रजातियाँ रस चूषकों के साथ पारस्परिक गठबन्धन बनाती हैं। चींटियाँ हनीड्यू प्रेमी हैं, कोई बूँद उत्सर्जित होते ही ये उसे चाटने लगती हैं। इस दावत के बदले चीटियाँ रस चूषक कीटों की देखभाल और साफ़-सफ़ाई ठीक उसी तरह करती हैं जैसे ग्वाले अपनी गायों की करते हैं (देखें **चित्र-6**)। चींटियों के द्वारा इस तरह की साज-सम्भाल के अभाव में रस चूषकों की बस्तियों के चारों ओर जो हनीड्यू इकट्ठा हो जाता है, वह कवक-संक्रमण को आमंत्रित करता है जो कीटों और उनके पोषक पौधों पर काले धब्बों के रूप में अपनी उपस्थिति दर्शाता है। अन्ततः इस तरह की कीट-बस्तियाँ और उनके पोषक कवक-संक्रमण से मर जाते हैं।

जो सुरक्षा चींटियाँ रस चूषकों को प्रदान करती हैं वह पोषक पौधों तक नहीं पहुँचती। लगातार फ्लोएम को नुक़सान और रस चूषकों स्टायलेट से बने खुले घाव पौधे को अन्य रोगजनकों के प्रति दुर्बल बनाते हैं। इसके विपरीत, अपने उत्तरी क्षेत्र में *हासिगे मारा* वृक्ष का कम अमीनो अम्ल वाला ग़ैर-पुष्पीय मकरन्द भी चींटियों को रस चूषकों के पालन से दूर कर देता है। कारण यह हो सकता है कि चीटियाँ हनीड्यू की अपेक्षाकृत जटिल शर्कराओं की बजाय

बॉक्स-6 : शिक्षकों के लिए सुझाव

विद्यार्थियों को बग़ीचे में परिभ्रमण पर ले जाइए ताकि वे चींटियों को आकर्षित करने वाले पौधों की पहचान कर सकें। ख़ासतौर पर सामान्य फूलधारी पौधों को देखें, जैसे *पैसिफ्लोरा* प्रजातियाँ (राखी के फूल) जिनकी पत्ती के डण्ठल पर ग़ैर-पुष्पीय मकरन्द ग्रन्थियाँ होती हैं।

- क्या चीटियाँ उन पर भोजन प्राप्त करने आती हैं?
- क्या ग़ैर-पुष्पीय मकरन्द नई पत्तियों पर ही उत्पन्न होता है जिन पर शाक-भक्षियों का अधिक ख़तरा है? या इसका उत्पादन परिपक्व और कठोर हो गई पत्तियों पर भी होता है? ऐसा क्यों?

उन चींटियों को भी देखिए जो पौधों पर माहुओं या रस चूषक कीटों को पालती हैं। यदि आपको इन पौधों पर काजल जैसे काले धब्बे दिखाई दें, तो यह तय करने के लिए ध्यानपूर्वक अवलोकन करें कि क्या इन धब्बों के लिए रस चूषक कीट और उनके द्वारा बनाया गया मधुरस दोषी है।

ग़ैर-पुष्पीय मकरन्द की सरल शर्कराओं को पसन्द करती हैं।

चलते-चलते

प्रकृति में पारस्परिक सम्बन्ध बहुतायत में पाए जाते हैं। 'अस्तित्व के लिए संघर्ष', जो प्रायः आक्रामकता और प्रतिस्पर्धा से संचालित होता है और जीवों को अनुकूलित और विकसित होने की ओर धकेलता है, के बीच कुछ जीवों ने – 'इस हाथ दे, उस हाथ ले' पर आधारित सम्बन्धों में भाग लेने की क्षमता विकसित की।

चूँकि इनके द्वारा दोनों साझेदारों की उत्तरजीविता और प्रजनन के अवसरों में सुधार होता है, इसलिए प्राकृतिक चयन पारस्परिकताओं को वरीयता देता है। उदाहरण के लिए *एकेशिया कॉर्निजेरा* एक आक्रामक चींटी प्रजाति को भोजन और आश्रय प्रदान करता है, बदले में उसे शाक-भक्षियों से सुरक्षा मिलती है। दूसरी तरफ़ *हम्बोड्शिया ब्रुनोनिस* कई प्रजाति की चींटियों और कुछ अकशेरुकियों को भोजन और आश्रय उपलब्ध करवाता है, बदले में इसे सुरक्षा और पोषण दोनों मिलते हैं। इस मामले में पोषक पौधे द्वारा प्रदान किए गए पारितोषिक की गुणवत्ता और मात्रा इस बात पर निर्भर है कि उसे शाक-भक्षियों से कितना अधिक ख़तरा है। इसके विपरीत फ्लोएम भोजी कीटों और उनकी परिचारक चींटियों का प्रकरण इस बात का उदाहरण है कि किस प्रकार दो प्रजातियों के बीच कुछ पारस्परिक सह-सम्बन्ध एक तीसरी प्रजाति की क़ीमत पर सम्भव हो सकते हैं।

ये पारस्परिकता के महज़ कुछ उदाहरण हैं, जो हमारे आस-पास बहुतायत में हैं (देखें **बॉक्स-6**)। क्या आप अपने पड़ोस में पारस्परिक सह-सम्बन्धों की पहचान कर सकते हैं? आपको ज़रूरत होगी थोड़ी-सी जिज्ञासा और जीवन को क़रीब से देखने के लिए कुछ समय की।

मुख्य बिन्दु

- पारस्परिकताओं को प्राकृतिक चयन द्वारा भी वरीयता दी जाती है क्योंकि यह पारस्परिक दोहन के स्वरूप हैं, जिसमें दोनों साझेदारों में लाभ लागत का नाज़ुक सन्तुलन निहित होता है।
- पारस्परिक सम्बन्धों में शामिल साझेदार एक-दूसरे के विकास को परस्पर प्रभावित कर सह-विकसित हो सकते हैं।
- चींटी-पौधा सह-सम्बन्ध पारस्परिकता के कुछ मज़ेदार उदाहरण प्रस्तुत करते हैं। पौधे चींटियों को भोजन और/ या आश्रय प्रदान करते हैं। बदले में चीटियाँ सुरक्षा और/ अथवा पोषण उपलब्ध करवाती हैं।
- दो प्रजातियों के बीच कुछ पारस्परिकताएँ एक तीसरी प्रजाति की क़ीमत पर होती है।
- भारत में केवल *हम्बोड्शिया ब्रुनोनिस* चींटी पादप (या ऐसा पौधा जो अपने चींटी साझेदार को भोजन और आश्रय प्रदान करता है) है जिसका भलीभाँति अध्ययन किया गया है। यदि आप के स्थान पर मैं होती तो पहली फ़ुर्सत में इसे देखने पश्चिमी घाट पहुँच जाती।

Note: Source of the image used in the background of the article title: https://www.flickr.com/photos/viamoi/1468093483. Credits: Stuart Williams, Flickr.
License: CC-BY.

जयश्री चानम एक परिस्थितिविज्ञानी हैं जो पौधों-कीट के सह-सम्बन्धों में रुचि रखती हैं। उन्होंने अपनी डॉक्टर उपाधि भारतीय विज्ञान संस्थान (IISc) बेंगलूरु से प्राप्त की और वर्तमान में पोस्ट डॉक्टरल शोध राष्ट्रीय जीव विज्ञान केन्द्र (NCBS) बेंगलूरु में कर रही हैं। उनसे joyshreechanam@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है।

अनुवाद : भोलेश्वर दुबे **पुनरीक्षण :** सुशील जोशी **कॉपी एडिटर :** अनुज उपाध्याय

क्या डायनासौर आज भी धरती पर विचरते हैं?

श्रेया घोष

हालाँकि 6.55 करोड़ साल पहले घटी व्यापक विलुप्ति की घटना में डायनासौर वंशवृक्ष की अधिकांश शाखाओं का सफ़ाया हो गया था, फिर भी उनके कुछ प्रत्यक्ष वंशज आज भी जीवित हैं। हम इन जन्तुओं के बारे में रहस्यमय ढंग से इनके जीवित बच पाने और अतीत के डायनासौर के साथ इनके रिश्ते के बारे में क्या जानते हैं?

दक्षिण-पूर्वी मेक्सिको के एक छोटे-से क़स्बे चिक्सुलब प्यूएर्टो की आबादी कुछेक हज़ार ही है। इस उनींदा बस्ती पर एक सरसरी नज़र ही जतला देती है कि यह एक शान्तिपूर्ण समुदाय है जो विशाल युकॅटन प्रायद्वीप में यहाँ-वहाँ छितरे अनेक समुदायों में से एक है। लेकिन, चिक्सुलब के धरातल के कोई एक किलोमीटर नीचे, बिल्लौरी पत्थरों की रेखाओं में लिखे और पिघली चट्टानों में इसके अनोखे हिंसक इतिहास के प्रमाण दफ़न हैं। जिस ज़मीन पर आज चिक्सुलब प्यूएर्टो खड़ा है वह पृथ्वी पर जीवन के इतिहास की सबसे प्रलयंकर घटना का केन्द्र रही थी।

कोई 6.55 करोड़ साल पहले, एक पहाड़ बराबर चट्टान अन्तरिक्ष से आकर धरती से टकराई। इस टक्कर की विस्फोटक शक्ति एक सौ ट्रिलियन टन टीएनटी से भी ज़्यादा थी (**चित्र-1**) – हिरोशिमा पर गिराए गए परमाणु बम की ऊर्जा से एक अरब गुना ऊर्जा मुक्त हुई थी। इस चट्टान के प्रहार के चलते उस जगह पर लगभग 180 किमी व्यास का एक गोलाकार गड्ढा बन गया था जो आज के चिक्सुलब के केन्द्र में है (**चित्र-2**)। इस सबके चलते इतनी गर्मी पैदा हुई कि चारों ओर मीलों तक, तमाम जीवन-रूप, भाप बनकर उड़ गए, हर दिशा में भूकम्प-पर-भूकम्प आए, बड़ी-बड़ी सुनामी आईं। इसके बाद, वातावरण

चित्र-1 : आज के दक्षिण-पूर्वी मेक्सिको में गन्धक-प्रचुर युकॅटन प्रायद्वीप के उष्णकटिबन्धीय, उथले समुद्रों में प्रहार करते एक क्षुद्र ग्रह का काल्पनिक चित्रण।

Credits: Donald E. Davis, NASA/JPL-Caltech, Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Chicxulub_impact_-_artist_impression.jpg. License: Public Domain.

में छाए मलबे और धूल की चादर ने एक बरस से भी ज़्यादा समय तक सूरज की रोशनी को रोक दिया और एक नाभिकीय शीत ऋतु छा गई जिसमें पौधों का विकास रुक गया और शिकार व शिकारी, दोनों भूख से मर गए (**बॉक्स-1**)।

और यह सब घटा, जब धरती पहले ही प्रचण्ड ज्वालामुखियों और वैश्विक जलवायु परिवर्तन की तीखी मार सह चुकी थी। क्रिटेशिअस-टर्शिअरी (के-टी) महा-विलुप्ति के नाम से जानी जाने वाली इस घटना के चलते उस समय हमारी धरती पर मौजूद कोई दो-तिहाई प्रजातियाँ नष्ट हो गई थीं (कुछ आकलनों के अनुसार तो इसमें

बॉक्स-1 : पृथ्वी के इतिहास में क्षुद्र ग्रहों की सबसे बड़ी भिड़न्तें

चिक्सुलब क्षुद्र ग्रह भिड़न्त अपेक्षाकृत जानी-मानी रही है। एक तो यह ज़्यादा हाल के समय की है और ठीक उसके बाद महा-विलुप्ति की घटना हुई थी। लेकिन पृथ्वी के उथल-पुथल भरे इतिहास में यह उतनी असाधारण घटना भी नहीं। यह धरती पर हमें ज्ञात तीसरा सबसे बड़ा क्षुद्र ग्रह प्रहार है। हमारी धरती का चेहरा-मोहरा ही बदल देने वाले अतीत में घटे अन्य दो बड़े 'प्रहार' हैं –

(1) दक्षिण अफ़्रीका में स्थित 'द व्रेडेफर्ट क्रेटर' को धरती पर दूसरा सबसे पुराना और सबसे बड़ा ज्ञात आघातजनित गड्ढा माना जाता है। आज से कोई 2 अरब साल पहले, लगभग 10 किमी चौड़े एक ऍस्टेरॉइड ने हमारी प्यारी धरती को चोट पहुँचाई थी। नतीजतन, 300 किमी से ज़्यादा लम्बा-चौड़ा गड्ढा बन गया। उस समय धरती पर जीवन एक-कोशिकीय होता था। उस जीवन पर इस महाआघात के प्रभाव के बारे में हम ज़्यादा नहीं जानते।

(2) ऑण्टॅरिओ, कनाडा का सड्बरी क्रेटर लगभग 1.8 अरब साल पहले एक ऍस्टेरॉइड के आघात से बना था। यह साइज़ में लगभग चिक्सुलब क्रेटर के बराबर है। आगे चलकर, यह आघातीय क्रेटर निकल, ताँबा, प्लैटिनम और सोने जैसे खनिजों से सम्पन्न पिघली चट्टानों से भर गया। नतीजतन, यह इलाक़ा उत्खनन और खेती के लिए ख़ूब लाभकारी बना।

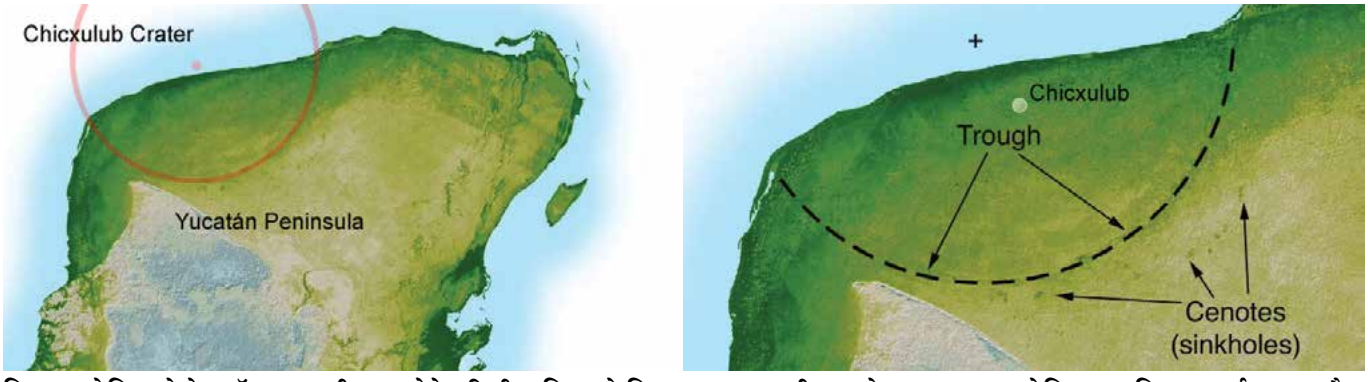

चित्र-2 : मेक्सिको के युकॅटन प्रायद्वीप का शेडेड रिलीफ चित्र जो चिक्सुलब आघातीय गड्ढे का एक सूक्ष्म लेकिन असन्दिग्ध प्रदर्शन करता है।

Credits: NASA/JPL-Caltech, modified by David Fuchs, Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Yucatan_chix_crater.jpg. License: Public Domain.

बॉक्स-2 : के-टी महाविलुप्ति ने मानव विकास को कैसे प्रभावित किया?

चिक्सुलब आघात के दुष्परिणाम को क्रिटेशिअस-टर्शिअरी (के-टी) महा-विलुप्ति के नाम से जाना जाता है क्योंकि पृथ्वी के इतिहास में यह क्रिटेशिअस और टर्शियस भूगर्भीय युगों के बीच की विभाजन रेखा है। ऐसा माना जाता है कि इस आघात के कारण हुए वैश्विक पर्यावरणीय बदलावों के नतीजतन पृथ्वी का लगभग तीन-चौथाई जीवन (पौधे, पशु और सूक्ष्म-जीव) नष्ट हो गया था।

दिलचस्प बात यह हुई कि स्तनधारियों समेत कुछ जीव समूह, जो बीते युग में प्रभावशाली डायनासौरों की विराटता के चलते दब गए थे, डायनासौर के विलोप के बाद व्यापक विविधीकरण और जनसंख्या वृद्धि से गुज़रे। कहीं-न-कहीं, हम मानव अपने अस्तित्व के लिए चिक्सुलब ऍस्टेरॉइड संघात के ऋणी हैं!

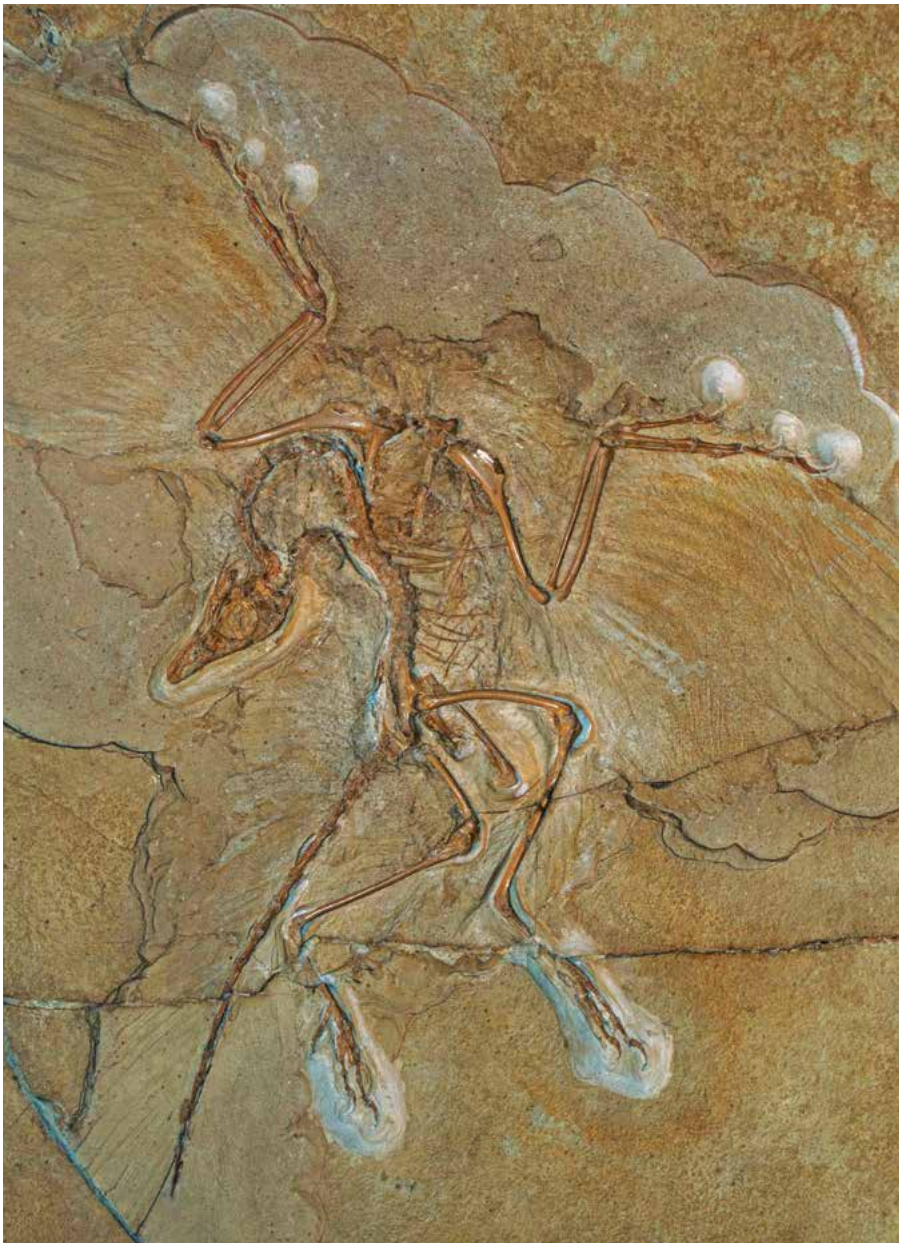

चित्र-3 : *आर्किओप्टेरिक्स* का 'बर्लिन प्रादर्श'।
Credits: Emily Willoughby, Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Berlin_Archaeopteryx.jpg. License: CC-BY-SA.

पृथ्वी के समूचे जीवन का 80 फीसद विलुप्त हुआ था)। इनमें सरीसृपों का वह समूह भी शामिल था जिसकी विविध डील-डौल की एक हज़ार से ज़्यादा प्रजातियाँ जगलों में विचरतीं थीं। डायनासौर युग ख़त्म हो गया था (**बॉक्स-2**)।

लेकिन इस के-टी महाविलुप्ति में सारे डायनासौर ख़त्म नहीं हुए। एक समूह आज तक बचा हुआ है – हमारे कँगूरों, कगारों और आलों में, अपने नीड़ों का निर्माण करते हुए, सड़क किनारे के ढाबों, ठेलों से अपना खाना चुराते हुए और सुबह-सवेरे कलरव से हमें जगाते हुए।

पक्षी हमारे ग्रह के अन्तिम जीवित डायनासौर हैं। यह उन्हीं की कहानी है।

आर्किओप्टेरिक्स के प्राचीन डैने

यह बात हमेशा से मालूम नहीं थी कि पक्षी डायनासौर से सम्बन्धित थे। 1870 के मध्य दशक में जैकब नीमायर ने जर्मनी के आइकस्टाट नगर की ब्लुमनबर्ग नामक खदान में एक विचित्र जीवाश्म पाया। गाय ख़रीदने के लिए पैसे की जुगाड़ में उसने उस फॉसिल को एक स्थानीय सराय मालिक को बेचना तय किया। इस तरह कुछ और सौदों से गुज़रने के बाद अन्ततः 1881 में बर्लिन के प्राकृतिक इतिहास संग्रहालय ने वह जीवाश्म 20,000 गोल्डन मार्क (जर्मनी की यूरो-पूर्व मुद्रा) जैसी शाही रक़म चुका कर ख़रीद लिया। आगे चलकर इस जीवाश्म को 'बर्लिन स्पेसीमेन' कहा गया। इस जीवाश्म में एक जीव का कंकाल व कपाल भलीभाँति संरक्षित हैं। इस जीवाश्म में फैले हुए डैने और अस्थिमय पूँछ हैं और इसके दोनों 'हाथों' के सिरों पर तीन-तीन नखर हैं (**चित्र-3**)। नीमायर ने जो खोजा था और गाय ख़रीदने के लिए बेचा था, आज तक वह *आर्किओप्टेरिक्स* के सबसे परिपूर्ण नमूनों में से एक है। इसका नाम ग्रीक शब्दों, 'archaīos' यानी प्राचीन और 'pteryx' यानी डैने से मिलकर बना है। आधुनिक पक्षियों की उत्पत्ति की गुत्थी को लेकर यह हमारा पहला सुराग़ था।

चित्र-4 : उत्तरकालीन ज्युरासिक युग के जर्मनी में रात के समय *आर्किओप्टेरिक्स लिथोग्राफ़िका* द्वारा एक अल्प-वयस्क कॉम्प्सोग्नॅथस (Compsognathus longipes) का पीछा करने का चित्रण।

Credits: Durbed, Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Archaeopteryx_lithographica_by_durbed.jpg. License: CC-BY-SA.

आर्किओप्टेरिक्स का वर्णन सबसे पहले 1861 में जर्मन जीवाश्म-विज्ञानी क्रिश्चियन एरिक हर्मन फॉन मायर द्वारा एक अकेले जीवाश्मित पंख के आधार पर किया था। उसी साल जर्मनी में लांगेनालथाइम के निकट की एक खदान से पहला कंकाल मिला था। मज़े की बात यह है कि नीमायर के समान ही इस नमूने के अज्ञात आविष्कारक ने यह चीज़ एक स्थानीय डॉक्टर को फीस के रूप में दे दी थी। उस डॉक्टर ने फिर वह कंकाल लन्दन के प्राकृतिक इतिहास संग्रहालय को बेच दिया। तो, वह क्या बात है जो 16 करोड़ साल पुराने इस प्रागैतिहासिक पक्षी को अनोखा बनाती है?

आर्किओप्टेरिक्स में सरीसृपनुमा और कुछ पक्षीनुमा शारीरिक विशेषताओं का एक लगभग आदर्श मिश्रण था। एक विशाल कौए की साइज़ के इस प्राणी की लम्बी पूँछ थी और किसी सरीसृप की भाँति तीखे दाँतों वाले जबड़े थे। लेकिन साथ ही पिच्छों से ढँके विशाल डैने और आधुनिक पक्षियों के समान

बॉक्स-3 : नई प्रजातियों के उद्विकास को डार्विन ने कैसे समझाया?

उद्विकास सम्बन्धी डार्विन के सिद्धान्त के अनुसार, क्रमिक परिवर्तन की प्रक्रिया और निरन्तर चयन के चलते नई प्रजातियाँ जन्म लेती हैं। किसी एक आबादी के अलग-अलग प्राणी कई छोटे-छोटे मामलों में एक-दूसरे से भिन्न होते हैं – इसे विविधता कहते हैं। ये अन्तर अलग-अलग प्राणियों की आनुवंशिक बनावट में भिन्नताओं के कारण होते हैं।

पर्यावरणीय परिस्थितियाँ परिवर्तित होने पर कुछ विशिष्टताओं से लैस या कुछ ख़ास आनुवंशिक बनावट वाले प्राणियों की उत्तरजीविता के अवसर बढ़ जाते हैं। इसी के चलते, इन 'ख़ास बनावट वाले' प्राणियों के लिए प्रजनन करने और अपनी अगली पीढ़ी को अपने जीन्स सौंपने की सम्भावनाएँ भी बढ़ जाती हैं। नतीजतन, आनुवंशिक स्तर पर, पीढ़ी-दर-पीढ़ी कुछ 'ख़ूबियाँ' ज़्यादा प्रचलन में आ जाती हैं। समय गुज़रने के साथ, ऐसी अनोखी आनुवंशिक विशिष्टताएँ हासिल करने वाले प्राणी इस क़दर बदल जाते हैं कि फिर वे अपनी ही प्रजाति की अन्य आबादियों के साथ सम्भोग नहीं कर सकते। इस परिघटना को प्रजनन-सम्बन्धी अलगाव कहते हैं। विभिन्न विशिष्टताओं के धीमी गति से संचय के साथ मिलकर यह अलगाव एकदम नई प्रजातियों को जन्म दे सकता है।

इसीलिए जब हम किसी प्रजाति के वैकासिक इतिहास के पुनर्निर्माण की कोशिश करते हैं, तो अमूमन हम उन अन्य प्रजातियों को देखते हैं जिनके साथ वह अधिक-से-अधिक समानताएँ साझा करती है। इसमें निहित मान्यता यह है कि दो एक-सरीखे समूहों का हालिया अतीत में एक साझा पूर्वज ज़रूर होना चाहिए। इन पूर्वज प्रजातियों की कोई आबादी किसी एक बिन्दु पर आकर बँट गई होगी और तब से उसने लाखों-करोड़ों सालों के अन्तराल में धीरे-धीरे ऐसे परिवर्तन संग्रहित किए होंगे जिनके चलते दो पूरी तरह से अलग प्रजातियाँ जन्मी होंगी।

चित्र-5 (क) : एक कलाकार द्वारा यूटारैप्टर नामक एक थेरोपॉड डायनासौर का चित्रण। (ख) एक थेरोपॉड डायनासौर के साँचे में ढाले गए यह पदचिन्ह ऊटा के मोनेव स्थल से मिले हैं और बीवाययू पुराजीव विज्ञान संग्रहालय में रखे हैं।

Credits: (a) Emily Willoughby, Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Utahraptor_updated.png. License: CC-BY-SA.
(b) Etemenanki3, Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Theropod_track_BYU.jpg. License: CC-BY-SA.

तीन उँगलियों वाले हाथ भी थे (**चित्र-4**)। इसके बारे में वैकासिक जीवविज्ञान के जनक चार्ल्स डार्विन ने लिखा था, "शायद ही कोई अन्य हालिया खोज इस बात को ज़्यादा सशक्त ढंग से दर्शाती है कि हम इस दुनिया के पूर्ववर्ती रहवासियों के बारे में कितना कम जानते हैं। (*ऑन दी ओरिजिन ऑफ स्पीशीज़*, चौथा संस्करण, 1886)।"

नए सिद्धान्त और पुराने सिद्धान्त

सबसे पहले अँग्रेज़ जीव वैज्ञानिक और डार्विन के सिद्धान्त के प्रबल समर्थक थॉमस हक्सले ने ही पक्षियों व थेरोपॉड्स के कंकालों के बीच समरूपताओं पर ध्यान दिया था। थॉमस हक्सले डार्विन के सिद्धान्त के इतने प्रखर समर्थक थे कि कई लोग उन्हें डार्विन का बुलडॉग कहते थे। थेरोपॉड्स एक क़िस्म के डायनासौर हैं जिनकी हड्डियाँ पोली होती हैं और जिनकी हर बाँह और टांग पर तीन-तीन उँगलियाँ होती हैं (**चित्र-5**)। अपने इस अवलोकन के आधार पर हक्सले ने सुझाया था कि हो सकता है पक्षियों का उद्विकास थेरोपॉड्स डायनासौर से हुआ होगा (**बॉक्स-3**)।

लेकिन ख़ासतौर से 1926 में डैनिश शरीर-रचना विज्ञानी गेर्हार्ड हाइलमॅन की प्रभावशाली पुस्तक के प्रकाशन के साथ यह सिद्धान्त जल्द ही प्रचलन से बाहर हो गया। पक्षियों और उनके अन्य निकट सम्बन्धियों की कंकाली विशिष्टताओं के विस्तृत तुलनात्मक विश्लेषण के आधार पर हाइलमॅन इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि जानवरों के किसी अन्य समूह की बजाय पक्षी थेरोपॉड डायनासौर के ज़्यादा क़रीब हैं। लेकिन कुछ शारीरिक अन्तर ऐसे हैं जो इस बात की सम्भावना को निरस्त कर देते हैं कि पक्षियों का उद्विकास डायनासौर से हुआ होगा। इन अन्तरों में विशेष रूप से पक्षियों में पाई जाने वाली जुड़ी हुई हंसली का डायनासौर में नदारद होना है। विकल्प के तौर पर, हाइलमॅन ने सुझाया कि पक्षियों और डायनासौर का एक साझा पूर्वज रहा होगा – थेकोडोंट। यह सिद्धान्त (और उनकी क़िताब) इतना लोकप्रिय हुआ कि अगली आधी सदी तक इस विषय के लगभग हर विशेषज्ञ ने 'थेकोडोंट परिकल्पना' को स्वीकार कर लिया।

आख़िरकार 1970 के उत्तरार्ध में तमाम स्रोतों से मिले प्रमाणों के एक साथ आने के चलते डायनासौर→पक्षी सिद्धान्त पुनर्जीवित हुआ। इस पुनरुत्थान में शारीरिकी व जीवाश्म–आधारित अध्ययनों के अलावा क्लैडिस्टिक्स मानक नए नवेले विज्ञान ने भी अपनी अहम भूमिका निभाई। क्लैडिस्टिक्स वर्गीकरण का वह तरीक़ा है जिसमें जीवों का समूहीकरण इस आधार पर किया जाता है कि हाल के कितने समय तक वे एक पूर्वज साझा करते थे। आज पक्षियों का डायनासौर उद्गम और तद्नुसार 'जीवित डायनासौरों' का उनका दर्जा व्यापक रूप से मान्य है।[1]

तो ऐसा कौन-सा प्रमाण था जिसके चलते बात बनी? कई स्रोतों से मिले जीवाश्मों, ख़ासकर, चीन के जेहोल बॉयोटा से मिले जीवाश्मों से पता चला कि शुरुआती पक्षियों और थेरोपॉड डायनासौर के कुछ समूह अनेक लक्षण साझा करते थे। इनमें वे विशिष्टताएँ शामिल हैं जिन्हें हम वर्तमान पक्षियों की ख़ासियत मानते हैं और जो उन्हें

चित्र-6 (क) : बसन्त ऋतु में उत्तरपूर्वी चीन के एक प्रान्त लिआओनिंग में जंगल की तलाश में घूमते माइक्रोरैप्टर्स के एक युगल का एक कलाकार द्वारा किया गया चित्रण।

Credits: Durbed, Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Microraptor_by_durbed.jpg. License: CC-BY-SA.

चित्र-6 (ख) : माइक्रोरैप्टर का एक ग्राफ़िक चित्रण। माइक्रोरैप्टर गुई का एक जीवाश्म (पैमाने का नाप 5 सेमी)। इसमें संरक्षित पिच्छ (सफ़ेद तीर) नज़र आ रहे हैं और प्रादर्श के आस-पास सफ़ेद आभामण्डल जहाँ पिच्छ अनुपस्थित हैं (काले तीर)।

Credits: David W. E. Hone, Helmut Tischlinger, Xing Xu, & Fucheng Zhang, Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Microraptor_gui_holotype.png. License: CC-BY.

आज जीवित जानवरों के कमोबेश तमाम दूसरे समूहों से अलग करतीं हैं। इन लक्षणों में आते हैं – पिच्छ (फेदर), विशबोन (मुर्गे आदि की छाती में V आकार की हड्डी), अण्डे सेना, दो पैरों पर चलना, यहाँ तक कि उड़ना भी (**बॉक्स-4**)।

बॉक्स-4 : कौन-सी चीज़ पक्षियों को ख़ास बनाती है?

बहुत-सी विशेषताएँ जिन्हें हम मात्र पक्षियों का लक्षण मानते हैं दरअसल इतनी अनोखी भी नहीं हैं। कुछेक उड़ानविहीन सहोदरों के अलावा ज़्यादातर पक्षी उड़ सकते हैं – लेकिन उड़ तो चमगादड़ भी सकते हैं और कीटों की अनेक प्रजातियाँ भी। पक्षियों की सख़्त चोंचें होती हैं जिनका उपयोग वे चुगने, घोंसला बनाने के अलावा कई अन्य कामों में करते हैं। लेकिन चोंचें तो कुछ ख़ास क़िस्म के कछुओं की भी होती हैं, यहाँ तक कि कुछ स्तनधारियों जैसे कि डक-बिल प्लैटिपस की भी। अण्डे देना भी केवल पक्षियों की ख़ासियत नहीं है, अधिकांश मछलियाँ और सरीसृप बच्चे ऐसे ही जनते हैं।

तो फिर पक्षियों की मौलिक विशिष्टताएँ क्या हैं? सबसे पहली और एकदम स्पष्ट ख़ासियत तो उनके पिच्छ हुए। अभी जीवित जानवरों के किसी दूसरे समूह के पिच्छ, असली पिच्छ नहीं होते। पक्षियों के पिच्छ नाना प्रकार के काम करते हैं – वे उड़ान में मददगार होते हैं, वे आवरण का काम करते हुए बचाते हैं और शृंगार तो वे होते ही हैं। दिलचस्प बात यह है कि हालाँकि इस विशेषता को पक्षियों की अद्वितीय विशेषता माना जाता है लेकिन हमेशा से ऐसा नहीं था – पक्षी-समान और ग़ैर-पक्षी डायनासौर पर भी पिच्छ पाए गए हैं।

पक्षियों की अन्य, लेकिन कम स्पष्ट, विशेषताओं में शामिल हैं उनकी हल्की-फुल्की और पोली हड्डियाँ जो उड़ने में मदद करती हैं और अण्डे सेना । लेकिन जहाँ तक अण्डे सेने (अण्डों का ऊष्मायन और उन्हें शारीरिक गर्मी देना) की कला है, तो यह कुछ ख़ास सरीसृपों और उभयचरों में और प्लैटिपस जैसे अण्डे देने वाले स्तनधारियों में भी पाई जाती है।

बॉक्स-5 : अध्यापकों के लिए टूलकिट – तुलनात्मक शारीरिकी सीखना

1. विद्यार्थियों को दो समूहों में बाँटें – पक्षी और डायनासौर
2. अब 'पक्षी समूह' को शोध करके पक्षियों के विशिष्ट और दिलचस्प गुणों को सूचीबद्ध करने के लिए कहें और ठीक इसी तरह 'डायनासौर समूह' को डायनासौर के लिए ऐसा करने को कहें।
3. अब दोनों समूहों को अपनी-अपनी सूचियाँ प्रस्तुत करते हुए उनकी समानताओं और भिन्नताओं को पहचानने के लिए कहें।

चलिए, उदाहरण के तौर पर पिच्छों की बात करें। पक्षियों के पिच्छ ऐसी जटिल संरचनाएँ होते हैं जिनसे उनकी उड़ान की वायुगतिकी में मदद मिलती है। ये कई अन्य कार्य भी करते हैं, जैसे शरीर के तापमान का नियमन, अण्डे सेना और प्रजनन-साथी को आकर्षित करना। शुरुआती थेरोपॉड डायनासौर के कुछ जीवाश्मों में रोमनुमा तन्तु मिलते हैं

बॉक्स-6 : हम जीवाश्मों की आयु कैसे जान पाते हैं?

शौक़िया जीवाश्म-विज्ञानी के लिए जीवाश्म पा लेना रोमांचक हो सकता है। लेकिन उस जीवाश्म की ठीक-ठीक उम्र पता करना अलबत्ता टेढ़ी खीर हो सकता है। वैज्ञानिक लोग जीवाश्मों की उम्र का निर्धारण दो प्रमुख विधियों से करते हैं – सापेक्ष काल-निर्धारण और निरपेक्ष काल-निर्धारण। सापेक्ष काल-निर्धारण में जीवाश्मों की तुलना ऐसी चीज़ से की जाती है जिसकी उम्र पहले ही से पता होती है, मसलन, उस चट्टान की परत जिसमें वह पाया गया है। जबकि निरपेक्ष काल-निर्धारण में जीवाश्म में या (ज़्यादा करके) उस जीवाश्म के आस-पास की चट्टानों में बहुत छोटी मात्रा में रेडियोधर्मी खनिजों का इस्तेमाल कर उनकी आयु का अनुमान लगाते हैं।

जिन्हें आद्य-पिच्छ (प्रोटो-फेदर्स) कह सकते हैं। आगे चलकर, थेरोपॉड्स के पंख ऐसे लगने लगे जो पक्षियों के पंखों से बहुत ज़्यादा मिलते-जुलते हैं। मज़ेदार बात तो

चित्र-7 (क) : चीन में मिला शुरुआती क्रिटेशियस काल का एक बड़ा, छोटी बाँह और पंख वाला ड्रोमिओसॉरिड जो पिच्छों की उपस्थिति का संकेत देता है।
Credits: Junchang Lü & Stephen L. Brusatte, Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Zhenyuanlong.jpg. License: CC-BY.

चित्र-7 (ख) : न्यूयॉर्क के अमेरिकन म्यूज़ियम ऑफ़ नैचुरल हिस्ट्री में रखे ड्रोमिओसॉरस जीवाश्म का साँचे में ढला नमूना NGMC 91 (उपनाम 'डेव') जो शुरुआती पक्षी-समान हुलिया दर्शाता है।
Credits: Dinoguy2, Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Sinornithosaurus_Dave_NGMC91.jpg. License: CC-BY-SA.

बॉक्स-7 : अध्यापकों का टूलकिट – उद्विकासी दूरी समझना

1. 20 से 30 शरीर-रचना सम्बन्धी विशिष्टताओं का एक बेतरतीब सेट बनाएँ (जैसे कि लम्बी पूँछ, पाँच उँगलियाँ, नीले पंख आदि)।
2. अब हरेक विशिष्टता के छोटे इंडेक्स कार्ड्स बनाएँ। हरेक की चार-चार प्रतियाँ बनाएँ।
3. विद्यार्थियों को 5-10 छोटे समूहों में बाँटें और हरेक समूह को इनमें से पाँच कार्ड निकालने के लिए कहें।
4. अब विद्यार्थियों को अपने द्वारा चुने गए कार्ड्स पर छपी आकृतियों से एक काल्पनिक प्राणी बनाने को और फिर उसे उनका मनचाहा नाम देने को कहें।
5. अब सारे विद्यार्थियों को उनके द्वारा इस तरह बनाए गए अलग-अलग काल्पनिक प्राणियों की विशेषताओं की तुलना करने को कहें ताकि पता चले कि वे काल्पनिक प्राणी एक-दूसरे से किस तरह से सम्बन्धित हैं।
6. अब विद्यार्थियों से इन काल्पनिक प्राणियों को परस्पर जोड़ने वाला एक उद्विकासी पेड़ बनाने को कहें।

यह है कि, अनेक ग़ैर-पक्षी डायनासौर भी पिच्छों से ढँके होते थे, जैसा कि कई सारे जीवाश्म-अध्ययनों से पता चला है। पिच्छ-युक्त पंख के चलते उनमें से कुछ मसलन माइक्रोरैप्टर्स को हवा में दक्षता से तिरने में मदद मिली होगी। माइक्रोरैप्टर्स पंखों से ढँके चार डैनों वाले डायनासौर हैं जिनके पिच्छ आधुनिक पक्षियों के पिच्छों से बिल्कुल भी अलग नहीं दिखते (**चित्र-6**)। अन्य (स्पष्ट रूप से न-उड़ने वाले) डायनासौर में पिच्छों ने एक सर्वथा अलग ही काम किया होगा। इस सबसे यह संकेत मिलता है कि पिच्छों का विकास शायद उड़ने की बजाय किसी अन्य काम के लिए हुआ था – शायद इन रंगीन परों का इस्तेमाल प्रजनन-साथियों को लुभाने, शिकारियों और प्रतिस्पर्धियों को डराने-धमकाने के लिए किया जाता था। यह तो बाद में हुआ कि उन्हें जानवरों को उड़ने में सहायक के तौर पर तैनात किया गया और अन्ततः वे उड़ने के लिए विशेषीकृत हो गए।

पिच्छों के अलावा पक्षियों में असाधारण संवेदी क्षमताएँ होती हैं। इनमें उनके मस्तिष्क के बड़ी साइज़ वाले अग्र भाग से काम में मदद मिलती है। उनका अग्र-मस्तिष्क उड़ान के लिए ज़रूरी त्वरित संवेदना प्रोसेसिंग और निर्णय प्रक्रिया में सहायक होता है। वैज्ञानिकों को प्रमाण मिले हैं कि पक्षियों के कुछ डायनासौर पूर्वजों के भी अपेक्षाकृत बड़े अग्र-मस्तिष्क होते थे, जिससे संकेत मिलता है कि उनके मस्तिष्क पहले से ही उस अवस्था में आने लगे थे जिसने उड़ान को सम्भव बनाया। दूसरे शब्दों में वे 'उड़न-सज्जित' थे। पक्षियों की चयापचय दर भी तेज़ होती है जिसके चलते उन्हें विशाल मात्रा में ऊर्जा मिलती है जो उड़ान के लिए ज़रूरी है। जहाँ सरीसृप तो ठण्डे ख़ून वाले (सही मायनों में विषमतापी) होते हैं, लेकिन पक्षी समतापी होते हैं; और प्रमाण सुझाते हैं कि डायनासौर इन दोनों के बीच कहीं रहे होंगे (**बॉक्स-5**)।

जीवाश्मों के रिकॉर्ड में वास्तविक पक्षी लगभग 15 करोड़ साल पहले, यानी चिक्सुलब क्षुद्र ग्रह टकराव के कोई 8.5 करोड़ साल पहले मिलते हैं (**बॉक्स-6**)। वैज्ञानिकों को अकसर इन शुरुआती पक्षियों के जीवाश्मों को ग़ैर-पक्षी डायनासौर के जीवाश्मों से अलग पहचानने में कठिनाई होती है। इससे पता चलता है कि कभी-कभी दो शाखाएँ कितनी एक-सी दिख सकती हैं (**बॉक्स-7**)। पक्षियों के शुरुआती पुरखे 10 करोड़ सालों तक तो अपने डायनासौर बन्धुओं के साथ रहे, लेकिन समय के साथ ऐसे छोटे-छोटे क्रमिक बदलाव भी आते गए जिनके चलते दोनों काफ़ी अलग हो गए। उस समय पक्षियों के सबसे नज़दीकी रिश्तेदार थे – छोटी काया वाले, पिच्छयुक्त, बड़े मस्तिष्क वाले ड्रोमिओसॉरिड और ट्रूडॉण्टिड जैसे थेरोपॉड डायनासौर। ये अन्य डायनासौर की बजाय पक्षियों सरीखे ज़्यादा दिखते थे (**चित्र-7**)।

प्रलय से बच निकलना

अब सवाल यह उठता है कि आख़िर डायनासौर युग का अन्त करने वाली महा-विलुप्ति की उस घटना से पक्षी बच कैसे पाए? हमारा पहला सुराग़ इस तथ्य में है कि इस प्रलय से सारे पक्षी तो नहीं बच पाए। चिक्सुलब प्रहार के बाद की घटनाओं में अधिकांश पक्षी प्रजातियाँ विलुप्त हुईं और उनका एक बहुत छोटा अंश ही उस महाविलुप्ति से बच निकला। अब इस बारे में तो हम महज़ कयास ही लगा सकते हैं कि वे कौन-सी वजहें थी जिनके चलते पखेरुओं की ये मुट्ठी भर प्रजातियाँ बची रहीं।

एक हालिया परिकल्पना में यह माना गया है कि पक्षी-परिवार की जीवित-शाखाएँ ऐसे पक्षियों से बनीं हैं जिनमें सख़्त चोंच का उद्विकास हुआ, जो ख़ासतौर से अन्न के दाने या बीज खाने के लिए बनी हैं; इन्होंने जबड़ों और दाँतों की जगह ले ली।[2] इस प्रहार के आघात में अधिकांश पत्ते, फल और छोटे शिकार नष्ट हो गए होंगे, पर ज़्यादा सख़्त होने के कारण बीज बचे रहे। हो सकता है, बीजों पर ज़िन्दा रह सकने की उनकी क्षमता ने इन पक्षियों को भूखों मरने से बचा लिया हो। लेकिन, कुछ वैज्ञानिक इस परिकल्पना को इस आधार पर ख़ारिज करते हैं कि उस समय पक्षियों के कुछ ऐसे पूर्वज भी अस्तित्व में थे जिनकी चोंच नहीं थीं, दाँत थे और जिनके बारे में ज्ञात है कि वे बीज खाते थे। इसके अलावा, यह परिकल्पना इस बात की व्याख्या भी नहीं करती कि क्योंकर अन्यों के मुक़ाबले चोंच वाले पक्षियों की कुछ ख़ास प्रजातियों (ख़ासकर छोटे पक्षियों) के बचने की ज़्यादा सम्भावना नज़र आती है।

एक अन्य परिकल्पना कहती है कि दरअसल, ये शुरुआती पक्षी जिन प्राकृतवासों में रहने के अनुकूल बने थे, वही उनके जीवित बचे रहने के सबसे बड़े कारक बने।[3] चिक्सुलब प्रहार के नतीजतन, बड़े पैमाने पर वैश्विक वन-विनाश के प्रमाण हैं – अनुमान है कि

शुरुआती आघात के झटकों ने ही 1500 किमी अर्धव्यास के दायरे में खड़े सारे पेड़ धराशाई कर दिए थे। इसके बाद, एक लम्बे समय तक, आघात के चलते उठी धूल और वातावरण में मुक्त हुए खनिजों के चलते प्रकाश-संश्लेषण बाधित हुआ होगा जिसके नतीजतन बार-बार अम्लीय-बारिशें हुईं होंगी। सो इन तमाम कारकों पर ग़ौर करने के बाद इस बात की सम्भावना लगती है कि ऐसे में पेड़ों पर रहने वाले जीवों की एकदम जान पर बन आई होगी। उस काल से बच निकले पक्षी आज के मुर्गे-मुर्गियों जैसे थे – ज़मीन पर रहने वाले और छोटी साइज़ वाले।

चलते-चलते

यह अभी भी साफ़ नहीं है कि आख़िर पक्षी चिक्सुलब प्रहार से किस तरह बच निकले। लेकिन आज वे इस ग्रह पर मौजूद जन्तुओं के सबसे क़ामयाब समूहों में शुमार हैं। अपनी 10 हज़ार से भी ज़्यादा अलग-अलग प्रजातियों के साथ आज पक्षियों ने धरती के लगभग हर कोने को अपना ठिकाना बनाया हुआ है। अपनी ताकतवर उड़ान मांसपेशियों के बूते वे हज़ारों किलोमीटर की दूरियाँ तय कर लेते हैं और वह भी कभी-कभी समुद्र सतह से 9,000 मीटर से भी ज़्यादा ऊँचाई पर उड़कर।

तो अगली बार, जब आप खिड़की से बाहर एक कौए को अपनी ओर मुँह बिचकाते देखें तो याद रखें कि कभी इसी के पुरखों का राज रहा है धरती पर और आज भी, उसकी जीन्स में वही ठाट ज़िन्दा है।

मुख्य बिन्दु

- अधिकांश डायनासौर का ख़ात्मा करने वाले विनाशकारी क्षुद्र ग्रह प्रहार से कुछ कुल बच निकले।
- हमारे आज के पक्षी, इन जीवित बचे डायनासौर कुलों की एक शाखा – थेरोपॉड्स के प्राकृतिक वंशज हैं।
- थेरोपॉड्स के बचे रहने को बीजरूपी आहार (जो प्रहार के बाद इफ़रात में उपलब्ध था) को खा सकने की उनकी क्षमता से जोड़ा जा सकता है।
- क्षुद्र ग्रह के प्रहार से पक्षियों के थेरोपॉड पुरखे अपनी छोटी साइज़ के कारण और पेड़ों की बजाय ज़मीन पर रहने की अपनी प्रवृति के चलते भी बच सके होंगे; क्षुद्र ग्रह के प्रहार में सारे-के-सारे पेड़ ज़मींदोज़ हो गए थे।
- आज हम उड़ने या पंख जैसी जिन विशेषताओं को पक्षियों से जोड़ते हैं, उनमें से कई तो दरअसल उनके डायनासौर पूर्वजों में भी मौजूद रहीं थीं।

Note: Source of the image used in the background of the article title: https://pxhere.com/en/photo/690156. License: CC0.

References:

1. Brusatte, S. L., O'Connor, J. K., & Jarvis, E. D. (2015, October 5). The origin and diversification of birds. Current Biology. Cell Press.
2. Larson, D. W., Brown, C. M., & Evans, D. C. (2016). Dental disparity and ecological stability in bird-like dinosaurs prior to the end-cretaceous mass extinction. Current Biology, 26(10), 1325–1333.
3. Field, D. J., Bercovici, A., Berv, J. S., Dunn, R., Fastovsky, D. E., Lyson, T. R., & Gauthier, J. A. (2018). Early Evolution of Modern Birds Structured by Global Forest Collapse at the End-Cretaceous Mass Extinction. Current Biology, 28(11), 1825-1831.e2.

श्रेया घोष विज्ञान-लेखक और IndiaBioscience की सम्पादक हैं। उनसे shreya@indiabioscience.org पर सम्पर्क किया जा सकता है।

अनुवाद : मनोहर नोतानी **पुनरीक्षण :** सुशील जोशी **कॉपी एडिटर :** अनुज उपाध्याय

जैव अनुसन्धान के कर्मवीर : मॉडल जीव

दीप्ति त्रिवेदी

आधुनिक विज्ञान इतिहास के दो सौ सालों में, मॉडल जीवों ने मानव शरीर-क्रिया विज्ञान, कोशिका जैविकी और रोगों के बारे में हमारी समझ में बड़ा योगदान दिया है। लेकिन मॉडल जीव क्या होते हैं? किन आविष्कारों में उन्होंने योगदान दिया है? उनसे जुड़े कुछ नैतिक पहलू और सीमाएँ क्या हैं?

आकार, साइज़, आवास और पर्यावरण से अन्तःक्रियाओं की प्रकृति के लिहाज़ से जीवधारी बहुत अलग-अलग होते हैं। इस व्यापक विविधता के बावजूद सारे जीवों में कुछ गुण साझा होते हैं। मॉडल जीवों का उपयोग कमोबेश इसी ज्ञान से हुआ कि सभी जीवों का उद्विकास एक साझा पूर्वज से हुआ है। 19वीं सदी के उत्तरार्ध में चार्ल्स डार्विन और अन्य द्वारा प्रस्तावित उद्विकास के सिद्धान्त के अनुसार सारे जीव एक समयगत उद्विकासी वृक्ष की शाखाएँ हैं (**चित्र-1**)। इसका मतलब यह था कि ये जीव बहुत सारे जैविक गुण साझा करेंगे। 20वीं सदी में विभिन्न मॉडल जीवों से प्राप्त आँकड़ों ने इस बात को सही सिद्ध किया है – हम जानते हैं कि आनुवंशिक सामग्री विरासत में प्राप्त करने, ऊर्जा का उपयोग करने और अपने मूल घटक बनाने में सारे जीव काफ़ी हद तक एक ही तरीक़े से काम करते हैं।

उनके साझा उद्गमों का मतलब यह भी है कि दूर की रिश्तेदारी वाली प्रजातियों की बनिस्बत परस्पर ज़्यादा क़रीबी प्रजातियों में समरूपता साझा करने की सम्भावनाएँ ज़्यादा होंगी। इसीलिए, एक प्रजाति के जीवों की जैविकी की पड़ताल, उद्विकासीय हिसाब से क़रीबी अन्य प्रजातियों के जीवों को समझने का वैकल्पिक जतन हो सकती है। शोधकर्ताओं द्वारा (प्रायोगिक अनुसन्धान के लिहाज़ से उनकी अनुकूलता के आधार पर) इस उद्देश्य के लिए चुने गए विशिष्ट जीवों को मॉडल या सन्दर्भ जीव कहते हैं।

अनेक बैक्टीरिया, कवक (फफून्द, कुकुरमुत्ते), कीट, कीड़े, मछलियाँ, पौधे और स्तनपाई, दुनिया भर में मॉडल जीवों के बतौर इस्तेमाल किए जाते हैं। ये जीव न केवल अपनी प्रजाति के बारे में गहन ज्ञान प्राप्त करने में मददगार होते हैं, बल्कि क़रीबी सम्बन्धित प्रजातियों, वंशों और जगतों का गहरा ज्ञान अर्जित करने में भी सहायक होते हैं।

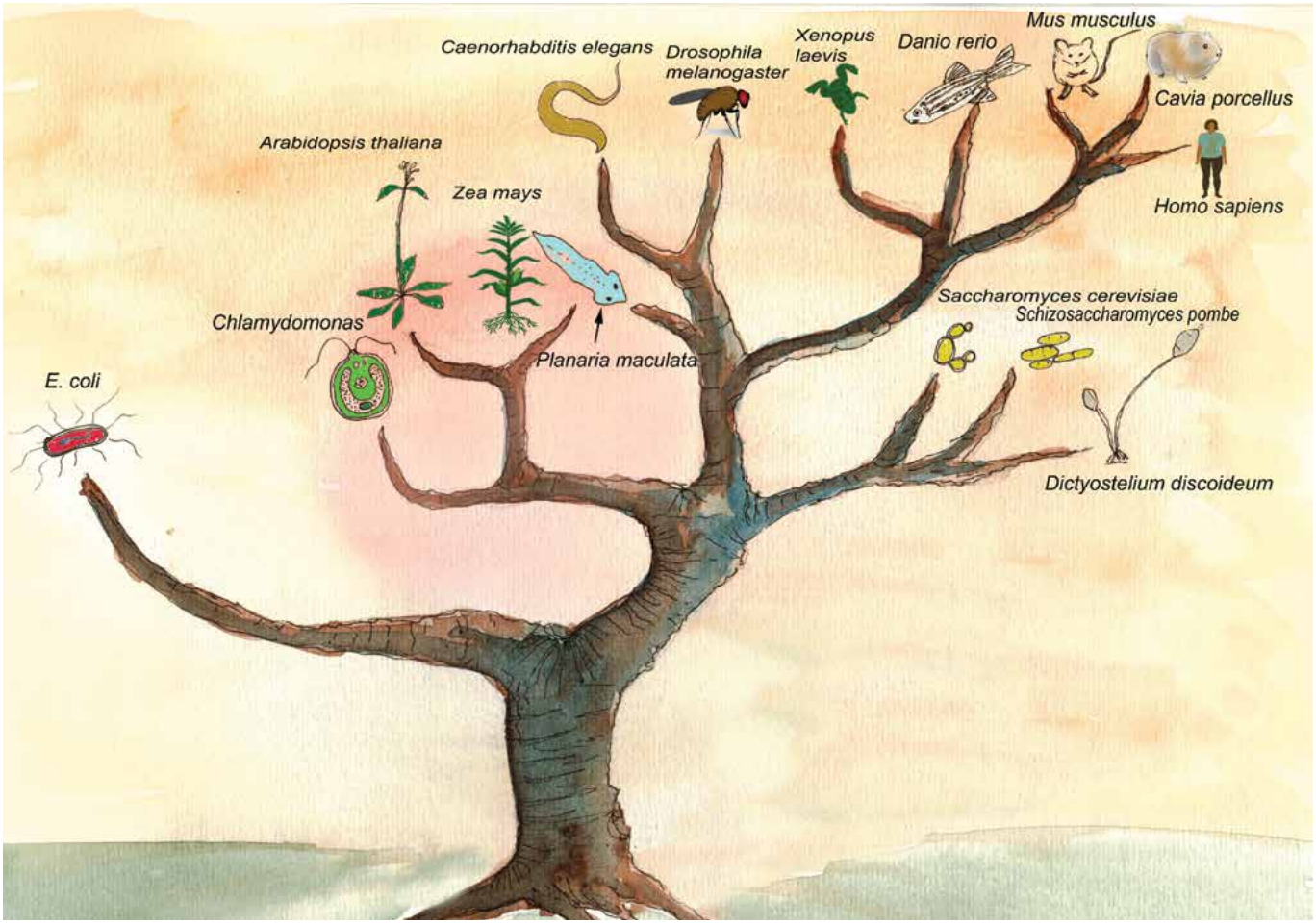

चित्र-1 : एक उद्विकासीय वृक्ष जो विभिन्न मॉडल जीवों के परस्पर-सम्बन्धों और मनुष्यों के साथ उनके सम्बन्धों को दर्शाता है। उद्विकासीय इतिहास में दो प्रजातियाँ एक-दूसरे के जितने क़रीब होंगी उतनी अधिक जैव-रासायनिक, कार्यिकीय, शारीरिक व आनुवंशिक की समरूपताएँ साझा करेंगी।

Credits: Deepti Trivedi. License: CC-BY.

इनका इस्तेमाल किए बग़ैर मानव शरीर रचना, जैव-रासायनिकी, शरीर-क्रिया विज्ञान, उद्विकास और आनुवंशिकी की हमारी समझ के सन्दर्भ में विभिन्न वैज्ञानिक प्रगति सम्भव नहीं होती। दरअसल, मानव जैविकी सम्बन्धी सारा अनुसन्धान अगर मॉडल जीवों पर न होकर मनुष्यों पर ही होता तो, जैव-अनुसन्धान पिछड़ जाता और ज़्यादा महँगा भी हो जाता।

मॉडल जीव का चुनाव

अपने शोध के लिए कोई मॉडल जीव चुनने से पहले एक वैज्ञानिक निम्नलिखित बिन्दुओं पर विचार करता है –

1. **शोध का सवाल** : चुने हुए मॉडल जीव में हमारे शोध-प्रश्न को सम्बोधित करना सम्भव होना चाहिए। उदाहरण के लिए, प्रकाश संश्लेषण की क्रियाविधि का अध्ययन शैवालों या पौधों में तो किया जा सकता है, पर जन्तुओं में नहीं।
2. **व्यावहारिकता** : चयनित जीव में विशिष्ट प्रकार का अनुसन्धान व्यावहारिक होना चाहिए। मसलन, क्रमिक विकास (evolution) या जनसंख्या गतिकी का अध्ययन आप उन जीवों में नहीं करना चाहेंगे जो बढ़ने और प्रजनन करने में सालों लगाते हैं। साथ ही, हम यह भी चाहेंगे कि अनुसन्धान से प्राप्त सबक़ ज़्यादा-से-ज़्यादा व्यापक तौर पर लागू होते हों। अन्य व्यावहारिक पहलुओं में पैसे की उपलब्धता, लॉजिस्टिक्स (संचालन एवं क्रियान्वयन) के मसले और जगह (स्पेस) तथा मॉडल जीव को विकसित करने और उनके रखरखाव में आसानी आदि शामिल होते हैं। उदाहरण के लिए, पेंग्विनों को मॉडल की तरह प्रयोग में लाने वाला कोई प्रोजेक्ट यदि भारत में किया जाए तो काफ़ी ताम-झाम लगेगा और रखरखाव पर काफ़ी पैसा ख़र्च हो सकता है।
3. **विधियाँ** : डिज़ाइन किए गए प्रयोग चयनित जीव पर करने योग्य होने चाहिए। मौजूदा उपलब्ध तरीक़ों को देखते हुए, कुछ ख़ास क़िस्म के जीवों पर कुछ प्रयोग करना, निहायत कठिन काम हो सकता है। मिसाल के लिए, मॉडल जीव में ना-मौजूद कुछ ऐसे

बॉक्स-1 : मॉर्गन ने फल-मक्खी जैसे साधारण जीव को ही क्यों एक मॉडल-जीव चुना?

मॉर्गन एक ऐसे मॉडल जीव की तलाश में थे जो उद्विकास का ऐसा नज़ारा पेश करे जिसे वे अपनी आँखों से देख सकें। वे डार्विन के सिद्धान्त पर पूरी तरह यक़ीन नहीं करते थे और देखना चाहते थे कि जीव किस तरह से उद्विकसित होते हैं (और असल में वे उद्विकसित होते भी हैं या नहीं)। इसके मायने यह थे कि मॉर्गन के एक मॉडल जीव में निम्नलिखित विशेषताएँ होनी चाहिए :

1. छोटा जनन काल : इसके चलते वे अपेक्षाकृत कम समय में कई पीढ़ियों में लक्षणों के हस्तान्तरण पर नज़र रख सकते थे।
2. बनावटी परिवेश में विकसित हो सकना : डार्विन का काम करोड़ों सालों तक फैले क़ुदरती परिस्थितियों में किए गए अवलोकनों पर आधारित था। लेकिन मॉर्गन की जिज्ञासा यह थी कि क्या उद्विकास को एक प्रयोगशाला की परिस्थिति में देखा जा सकता है। इसके अलावा, मॉर्गन मानकर चल रहे थे कि उद्विकासीय परिवर्तनों की गति (frequency) बहुत कम होगी। इसलिए उनके मॉडल जीव की एक विशेषता यह थी उसे एक प्रयोगशाला की सीमित जगह में आसानी से और अपेक्षाकृत सस्ते में बड़ी संख्या में विकसित किया जा सके।
3. उपलब्ध विधियों द्वारा उसका अध्ययन कर पाना : मॉर्गन अपने पास उपलब्ध उपकरणों के द्वारा ही उद्विकासीय परिवर्तन होते (अगर होते भी हैं तो) देखना चाहते थे। शुरुआती 20वीं सदी में अनेक ऐसी परिष्कृत विधियाँ, उपकरण उपलब्ध नहीं थे जो आज हमें मुहैया हैं। मॉर्गन के पास बस कुछेक साधारण सूक्ष्मदर्शी ही थे। बहुत सोच-विचार के बाद उन्होंने ड्रॉसोफिला मलॅनोगास्टर को अपना मॉडल जीव चुना। यह नन्ही फल-मक्खी आसानी से बड़ी संख्या में तैयार हो जाती है और महज़ 10 दिन में ही अण्डे से वयस्क रूप धारण कर लेती है। मॉर्गन ने फल-मक्खियों पर जो आनुवंशिक अध्ययन चन्द महीनों में किए, अगर इन्सानों पर किए जाते तो सैकड़ों साल लग जाते और ख़ूब महँगे भी होते और उन्हें पूरा करने के लिए एक समूचे देश की आबादी की भागीदारी चाहिए होती! और-तो-और, ऐसे अध्ययन से प्राप्त आँकड़े और जानकारियाँ बहुत ज़्यादा जटिल और दुरूह होतीं जिन्हें ठीक से समझने में भी नानी याद आ जाती। और यदि ऐसा अध्ययन करना सम्भव होता, तो उसके परिणाम वही होते जो फल-मक्खी पर किए गए अध्ययन से मिले।

उत्परिवर्तनों के प्रभावों का अध्ययन करने के लिए अव्वल तो हमें उनमें ये उत्परिवर्तन निर्मित करने होंगे। इस सन्दर्भ में कुछ ख़ास प्रकार के मॉडल जीव ज़्यादा अनुकूल होते हैं क्योंकि उनमें उत्परिवर्तनों को निर्मित करने की विधियाँ और ज़रूरी संसाधन उपलब्ध हैं।

4. **उद्विकासी संरक्षण** : कुछ विशिष्ट परिघटनाएँ प्रजातियों के आर-पार संरक्षित नहीं रहतीं। इसलिए, उन परिघटनाओं को बेहतर ढंग से समझने के लिए एकदम क़रीबी रिश्तेदार प्रजातियों का अध्ययन करना ज़रूरी हो सकता है। मसलन, वैसे तो कीटों में स्तन विकास और कैंसर का अध्ययन नहीं हो सकता, इन परिघटनाओं में महत्त्वपूर्ण भूमिका

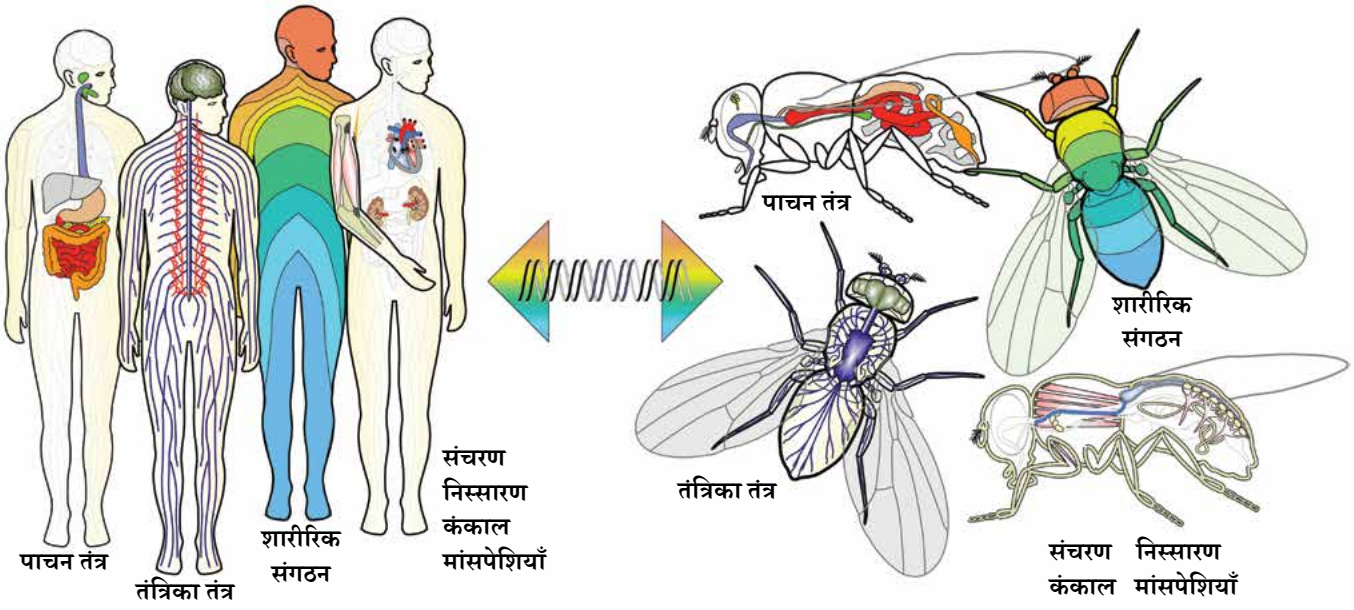

चित्र-2 : ड्रॉसोफिला अनेक समरूपताएँ हम मनुष्यों से साझा करती है।

Credits: A. Prokop from the Manchester Fly Facility, Faculty of Biology, Medicine & Health of The University of Manchester. URL: https://droso4schools.files.wordpress.com/2015/06/fig2-organs.jpg. License: Used with permission of the rights owner.

बॉक्स-2 : आनुवंशिक इंजीनियरिंग के लिए जैविकी को एक तंत्र से दूसरे तंत्र में ले जाना

अलग-अलग जीवों की एक ही प्रक्रिया पर किए गए बुनियादी अनुसन्धान से न केवल हमारी समझ की कमियाँ दूर होती हैं, बल्कि इससे ऐसी प्रौद्योगिकियों का विकास भी हो सकता है जिनके द्वारा इस प्रक्रिया के माध्यम से अन्य जीवों में फेरबदल किए जा सकते हैं। इसका एक उदाहरण, आनुवंशिकी इंजीनियरिंग के लिए बैक्टीरिया जैविकी का इस्तेमाल है।

मनुष्यों की ही तरह बैक्टीरिया भी वायरसों से संक्रमित होते हैं। संक्रमित बैक्टीरिया मर भी सकते हैं या फिर संक्रामक वायरस से लड़कर जीवित भी रह सकते हैं। ऐसे में उत्तरजीवी बैक्टीरिया संक्रामक वायरस के डीएनए अनुक्रम को 'याद' रख, उसके विरुद्ध प्रतिरोधक शक्ति विकसित कर लेते हैं – होता यह है कि वायरस डीएनए अनुक्रम के अंश बैक्टीरिया जीनोम (जीन-पुंज) में लिख लिए जाते हैं। अगली बार, जब वही वायरस उन्हें संक्रमित करता है तो वे उसे पहचान लेते हैं और बहुत तेज़ी से उसके डीएनए अनुक्रम को तहस-नहस कर देते हैं। इस प्रक्रिया के बल पर, बैक्टीरिया उस वायरस का मुक़ाबला पहली बार के मुक़ाबले ज़्यादा प्रभावी ढंग से कर पाता है।

बैक्टीरिया कोशिकाओं द्वारा किसी बाहरी डीएनए शृंखला को पहचानकर उसे विछिन्न कर देने की क्षमता का अध्ययन ख़ूब विस्तार से किया गया है। इन कामों को करने वाले विशिष्ट बैक्टीरिया जीन्स और प्रोटीन्स (Cas9 proteins) को पृथक कर लिया गया है। इन प्रोटीनों को किसी भी जीव के विशिष्ट डीएनए अनुक्रम को विभक्त करने के लिए इस्तेमाल किया जा सकता है। CRISPR-Cas9 नामक टेक्नॉलॉजी के एक हिस्से के रूप में उनका इस्तेमाल अलग-अलग जीवों में विशिष्ट उत्परिवर्तन पैदा करने के लिए किया जाता है। आनुवंशिक बीमारियों के इलाज में इनकी काफ़ी सम्भावनाएँ हैं।

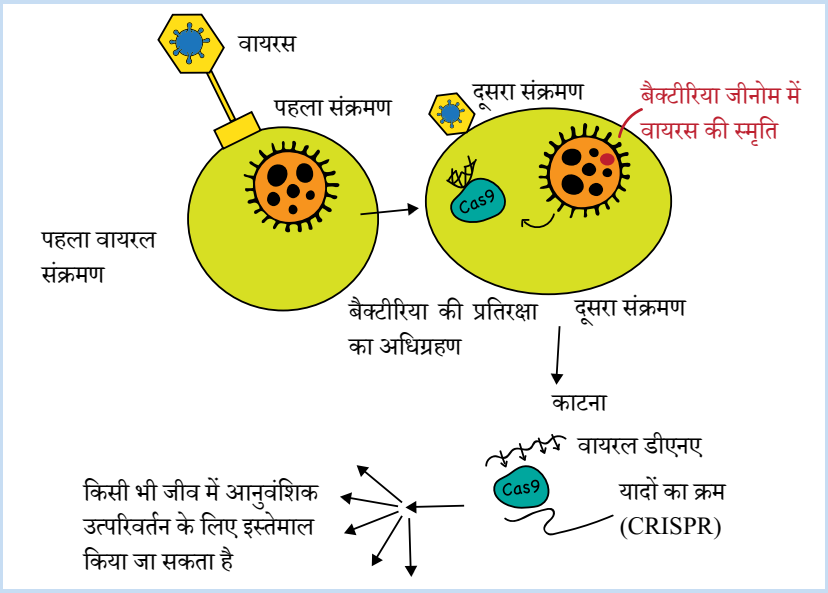

चित्र-3 : CRISPR Cas9 प्रौद्योगिकी।

Credits: Deepti Trivedi. License: CC-BY.

निभाने वाले आणविक मार्ग कीटों में संरक्षित रहते हैं। इसलिए कीट मॉडलों से हमें आणविक अन्तःक्रियाओं की ऐसी समझ मिल सकती है जो इनका जेनेटिक आधार हैं।

मॉडल जीवों के उदाहरण

(क) ड्रॉसोफिला : आनुवंशिकी के अध्ययन हेतु बतौर एक मॉडल जीव : अमरीकी उद्विकासी जीवविज्ञानी थॉमस मॉर्गन वे पहले व्यक्ति थे जिन्होंने ड्रॉसोफिला मलॅनोगास्टर नाम की एक फल-मक्खी का उपयोग एक मॉडल जीव के तौर पर किया था (**बॉक्स-1**)। थॉमस, उनके साथियों और बाद के कई अन्य वैज्ञानिकों की बदौलत हमारी रसोइयों में पके फलों, ख़ासकर, केलों पर मँडराने वाले कीड़े अब जाने-माने मॉडल जीव हैं।

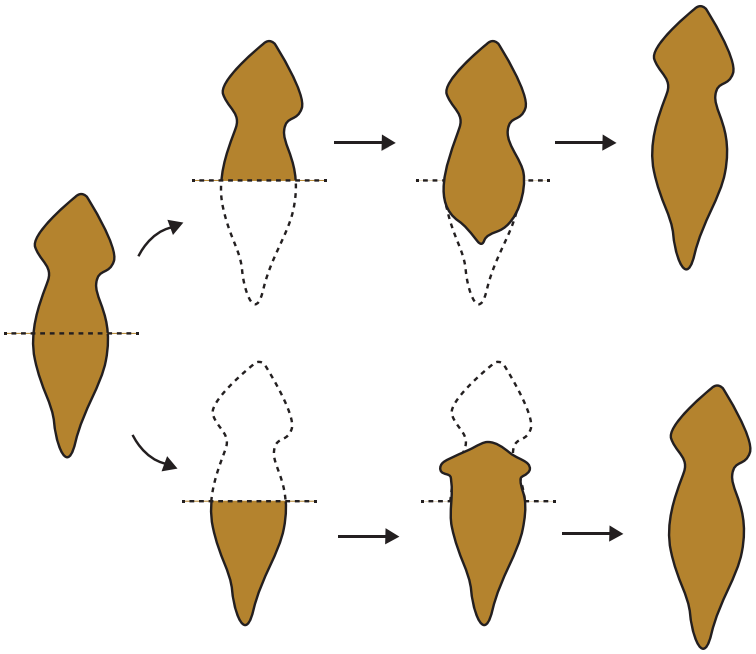

चित्र-4 : प्लैनेरियन का उनकी पुनर्योजी क्षमता के लिए अध्ययन किया गया है।

Credits: Adapted from https://www.shutterstock.com/image-vector/science-cartoon-teaching-about-regeneration-planaria-1389132521.

दिलचस्प बात तो यह है कि फल-मक्खी पर मॉर्गन साहब के अध्ययनों, अनुसन्धानों का उद्विकास से ज़्यादा लेना-देना नहीं था। इसके बावजूद, उन्होंने और उनके सहकर्मियों ने गुणसूत्र आधारित वंशानुक्रम के अति-विवादित सिद्धान्त के सन्दर्भ में अकाट्य प्रमाण जुटाए – ऐसा ज्ञान सजीवों के विभिन्न जगतों के लिए प्रासंगिक है। उन्होंने दर्शाया कि जीन्स गुणसूत्रों पर एक रैखिक क्रम में रहते हैं, जेनेटिक चिह्नांकन की मदद से जीन्स के बीच की दूरी की गणना की जा सकती है और जीन्स में उत्परिवर्तनों के चलते फीनोटाइप्स (प्रकट गुणधर्मों) में परिवर्तन होते हैं। फल-मक्खियाँ बहुत सारी समानताएँ हमसे साझा करती हैं। इसे देखते हुए, ड्रोसोफिला जीव वैज्ञानिक शरीर की बनावट व विकास के आनुवंशिक आधार, जैविक घड़ी, प्रतिरक्षा तंत्र और घ्राण चेतना को समझने के लिए इन कीट मॉडलों पर उपयोग करते रहे हैं (**चित्र-2**)। ये सब अनुसन्धान नोबेल पुरस्कारों से नवाज़े गए हैं।

(ख) मॉडल जीवों की भूमिका में बैक्टीरिया : अपने आप में ख़ुद बैक्टीरिया का अध्ययन करने की कई व्यावहारिक और तकनीकी वजहें हैं।

पहला और शायद सबसे महत्त्वपूर्ण कारण यह है कि बैक्टीरिया इन्सानों, जानवरों और पौधों में कई बीमारियों के कारक हैं। इसीलिए बैक्टीरिया का अध्ययन इस आशा में किया जाता है कि उनके कारण होने वाली बीमारियों पर नियंत्रण पाने के बेहतर तरीक़े खोजे जा सकें, जैसे ज़्यादा प्रभावी एंटीबॉयोटिक दवाएँ और टीके आदि। दूसरे, अनेक महत्त्वपूर्ण अध्ययनों में बैक्टीरिया का इस्तेमाल मॉडलों के बतौर हुआ है और उन्होंने सजीवों में वृद्धि, प्रतिलिपिकरण (replication), जेनेटिक सूचनाओं के प्रतिलेखन (transcription) और लिप्यान्तरण (translation) को लेकर हमारी समझ बनाने, बढ़ाने में योगदान दिया है। इसके अलावा, यूकॅरिओट्स में आनुवंशिक इंजीनियरिंग के लिए बैक्टीरिया परिघटनाओं का इस्तेमाल हुआ है (**बॉक्स-2**)।

(ग) पुनर्जनन एवं प्रौढ़ता को समझने के लिहाज़ से एक स्पेशल मॉडल के बतौर प्लैनेरिअन जन्तु : जब गिरने पर खरोंच लगती है तो क्या होता है? चोट-खरोंच तो कुछ ही दिन में ठीक हो जाती है, चोटिल ऊतक की जगह नई त्वचा कोशिकाएँ आ जाती हैं। और जल्द ही आपको यह भी नहीं याद रहता कि चोट लगी कहाँ थी। लेकिन अगर आप किसी दुर्घटना में अपनी एक उँगली या पूरी-की-पूरी बाँह ही गँवा दें तो? क्या इन अंगों के फिर लौट आने की कोई सम्भावना है?

इसकी तुलना प्लैनेरियन जन्तुओं से कीजिए – ये चपटे कृमि शरीर के खोए हुए हिस्सों/अंगों का पुनर्जनन करने की अद्भुत क्षमता दिखाते हैं। उदाहरण के लिए, लम्बाई में या आड़े में विभाजित प्लैनेरियन दो अलग-अलग जीवों में पुनर्जनित हो जाएगा। और अगर पर्याप्त समय दिया जाए तो प्लैनेरियन का सौवाँ हिस्सा भी एक पूरी तरह से विकसित जीव बन जाएगा!

उनकी यही अद्भुत पुनर्जनन क्षमता, प्लैनेरियन्स को कई जैविक प्रक्रियाओं की पड़ताल का एक मॉडल तंत्र बनाती है, जिनमें से कुछ मानव स्वास्थ्य व रोग के लिहाज़ से बहुत महत्त्वपूर्ण हैं। उदाहरण के लिए, प्लैनेरियन्स का इस्तेमाल ऐसे जीन्स की पहचान करने में होता है जो शरीर के हिस्सों का पुनर्निर्माण करते हैं। ज़ाहिर है, असीमित पुनर्जनन क्षमता के चलते, ये

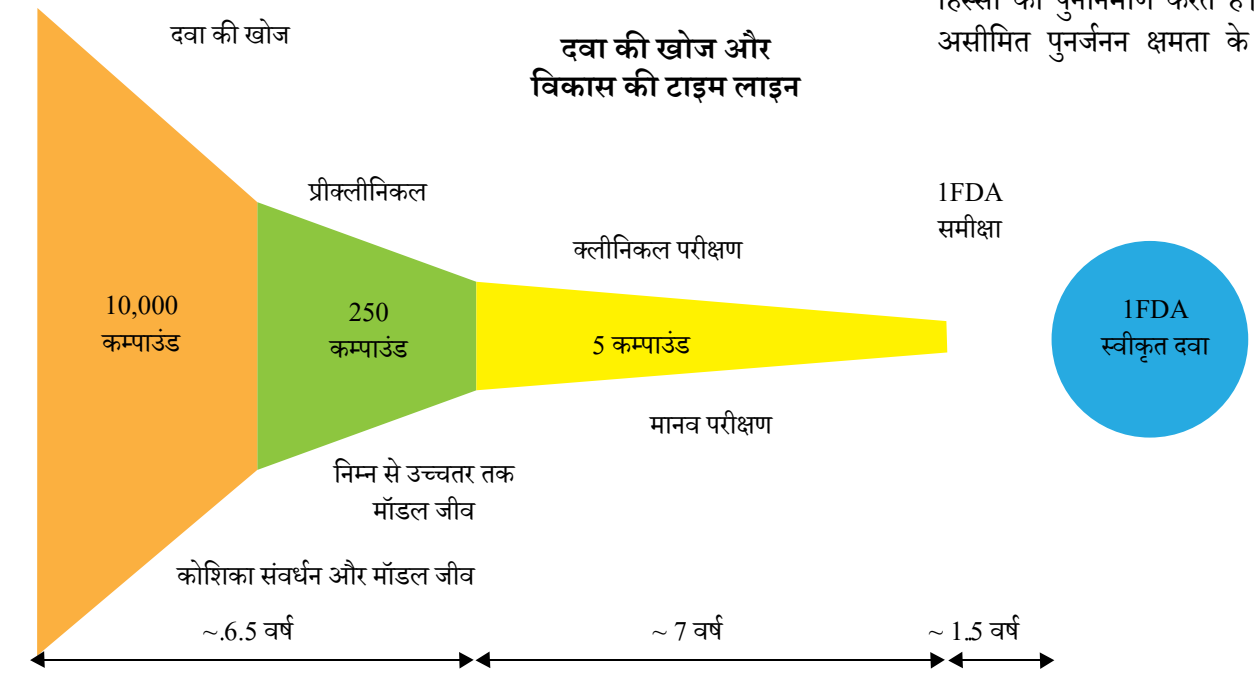

चित्र-5 : दवा खोज की प्रक्रिया का योजना चित्र।
Credits: Deepti Trivedi. License: CC-BY.

प्रभावी रूप से 'अमर' कृमि, बुढ़ाने के अध्ययनों के लिए एक उत्तम मॉडल बन जाते हैं। मसलन, अध्ययन बताते हैं कि इन कृमियों के गुणसूत्र के सिरे सुरक्षित रहते हैं, जिससे लगता है कि यह सुरक्षा बुढ़ाने की प्रक्रिया को रोक सकती है।

दवाओं की खोज में मॉडल जीवों की भूमिका

अकसर, बीमार पड़ने पर हमें दवाएँ दी जाती हैं ताकि हम ठीक हो जाएँ। लेकिन क्या आपने कभी सोचा है कि आख़िर एक रोग विशेष की दवाएँ बनाई कैसे जाती हैं? दवाओं की खोज एक टेढ़ी खीर है। हर रोग का एक शरीर-क्रियात्मक (कार्यिकीय) आधार होता है – या तो वह कोई संक्रमण होता है या फिर कोई आनुवंशिक गड़बड़ी, एलर्जी या ऐसी चोट/ ज़ख़्म जो कोशिका और आणविक स्तर पर हमारे शरीर के कामकाज में विघ्न पहुँचाती है। अकसर, इसके चलते, हमारे शरीर के अन्दर, आणविक क्रिया-मार्ग या तो अति-सक्रिय हो आते हैं या फिर मन्द पड़ जाते हैं। ये आणविक मार्ग ही दवाओं के लक्ष्य होते हैं जो ख़ास तरह के एंज़ाइमों को अवरुद्ध या सक्रिय कर आणविक मार्गों का सामान्य कामकाज बहाल करती हैं। चूँकि अनेकानेक कोशिकीय व आणविक मार्ग प्रजातियों के आर-पार संरक्षित रहे हैं, मॉडल जीवों का प्रयोग इन विशिष्ट एंज़ाइमों को अवरुद्ध करने या सक्रिय करने की क्षमता को लेकर करोड़ों यौगिकों का परीक्षण करने में होता है। इन प्रारम्भिक परीक्षणों में सफल हुए यौगिकों को फिर दवाओं के रूप में उनकी सम्भावनाओं की जाँच के लिए उच्चतर प्राणियों (क्रमश: निम्नतर स्तनपाई प्राणियों, प्राइमेट्स और मानवों में) में उनका परीक्षण होता है ताकि उन्हें बाज़ार में लाने से पहले उनकी प्रभावित करने की क्षमता और विषाक्तता को जाँचा-परखा जा सके।

नैतिकता सम्बन्धी पहलू

मनुष्य, पशुओं और पौधों समेत अन्य सजीवों का उपयोग अपने लाभ के लिए करते आए हैं और ऐसा करते हुए मनुष्य ने उन सजीवों की बहुत परवाह नहीं की। दरअसल, अनुसन्धान में जन्तुओं का उपयोग प्राचीन यूनान तक देखने को मिलता है। जीवित जन्तुओं पर सबसे पहले प्रयोग करने वालों में अरस्तू (384-322 BCE) और इरॅसिस्ट्रॅटस (304-258 BCE) के नाम आते हैं। लेकिन, हालिया सालों में, मानव लाभ के अनुसन्धानों में अन्य प्राणियों पर प्रयोग करने पर कई नैतिक सवाल उठाए गए हैं।

मॉडल प्राणियों का इस्तेमाल इस मान्यता पर टिका है कि मनुष्यों समेत समस्त जीव एक-दूसरे के दूर के रिश्तेदार हैं और इसीलिए अपनी कोशिकीय व आणविक संरचना में वे कई समरूपताएँ साझा करते हैं। इसी तर्क के आधार पर इस बात की काफ़ी सम्भावना है कि हमारे ये सजीव मॉडल भी ठीक हमारी तरह दर्द और पीड़ा महसूस करते होंगे।

सारे अनुसन्धान का फोकस इन दो में से कम-से-कम एक परिणाम पर तो रहता है – नई चिकित्सकीय खोज या ज्ञान की बढ़ोतरी। बढ़े हुए ज्ञान के चलते मानव तन और मन को लेकर हमारी समझ बढ़ती है और लम्बे समय में अन्तत: नई चिकित्सकीय खोजों में परिणित हो सकती है। लेकिन, सिर्फ़ ज्ञान बढ़ाने की दृष्टि से किए गए अनुसन्धान के लाभ के आधार पर उसमें प्रयुक्त जानवरों को होने वाली पीड़ा को जायज़ नहीं ठहराया जा सकता। इस क़िस्म के किसी अनुसन्धान का औचित्य इस बात पर निर्भर करेगा कि उस रिसर्च प्रोजेक्ट में प्रयुक्त मॉडल जीवों की पीड़ा की तीव्रता कितनी है और उनकी मानसिक जटिलता कितनी है।

इन नैतिक मसलों को सम्बोधित करने के लिहाज़ से, मॉडल प्राणियों पर किए जाने वाले ज़्यादातर वैज्ञानिक अनुसन्धानों पर संस्थागत नैतिकता समितियों का नियमन और नियंत्रण होता है। ये समितियाँ, अन्य सरोकारों सहित किसी अनुसन्धान परियोजना के औचित्य की भी समीक्षा करती हैं। वे यह भी सुनिश्चित करने की कोशिश करती हैं कि ऐसे प्रत्येक प्रोजेक्ट में रसल और बर्च द्वारा निर्धारित तीन पहलुओं (अँग्रेज़ी के तीन R) का ठीक से पालन हो रहा है कि नहीं (रसल और बर्च यूएसए के यूनिवर्सिटीज़ फ़ेडरेशन ऑफ़ एनिमल वेलफेयर द्वारा नियुक्त दो वैज्ञानिक थे जिनका काम था लैब तकनीकों में नैतिक पहलुओं का व्यवस्थित अध्ययन) –

Refinement यानी परिमार्जन/परिष्कार : अनुसन्धान के तरीकों में दर्द और पीड़ा को यथासम्भव न्यूनतम करते जाना चाहिए।

Reduction यानी घटाना : वैज्ञानिक परिणाम, शोध की क्वालिटी और जन्तु कल्याण से कोई समझौता किए बग़ैर हरेक प्रयोग में प्रयुक्त जन्तुओं की संख्या को कम करते जाना चाहिए।

Replacement यानी प्रतिस्थापन : सचेत, सजीव कशेरुकी जन्तुओं को पूरी तरह से, आंशिक रूप से प्रतिस्थापित करके या अपेक्षाकृत कम करके अचेतन पदार्थों का इस्तेमाल करना।

बैक्टीरिया, ख़मीर और कीटों समेत अधिकांश निम्न स्तर के जीवों पर प्रयोग करने के लिए अभी तो नैतिकता समितियों से हरी झण्डी नहीं लेनी पड़ती है।

सीमाएँ

हालाँकि मॉडल जीवों में बुनियादी खोजें की तो जा सकती हैं, लेकिन सब-की-सब मनुष्यों के मामलों में खरी नहीं उतरतीं। मसलन, मॉडल जीवों पर परीक्षण में सफल रहने वाली अनेक दवाएँ इन्सानों पर काम नहीं करतीं। इसका कारण है कि अनेक प्रक्रियाएँ या तो मॉडल जीवों में होती ही नहीं हैं या मनुष्यों और मॉडल जीवों में अलग-अलग ढंग से काम करती हैं। ऐसे में, इन्सानों में इस्तेमाल की अनुमति से पहले परीक्षण के फाइनल राउंड के लिए ऐसे मॉडल जीव चुने जाते हैं जो उद्विकासीय रूप से हमारे ज़्यादा क़रीब हों।

चलते-चलते

बुनियादी जीवविज्ञान समझने के लिए

मॉडल जीवों पर प्रयोग किए जाते रहे हैं, जिनके चलते अनेक महत्त्वपूर्ण आविष्कार हुए हैं। नतीजतन, विविध विषयों के मूलभूत कामकाज में क्रान्तिकारी बदलाव आए हैं। जैसे मेडिसिन, सर्जरी, मनोचिकित्सा और पारिस्थितिकी। आज मॉडल जीवों के इस्तेमाल को पहले नियामक एजेंसियों के समक्ष न्यायसंगत ठहराना पड़ता है। ये एजेंसियाँ सुनिश्चित करती हैं कि इन प्रयोगों में अनुसन्धान के लिए मानसिक रूप से जटिल प्राणी कम-से-कम संख्या में इस्तेमाल हों और उन्हें कम-से-कम पीड़ा पहुँचे।

मुख्य बिन्दु

- मॉडल प्राणी वे प्राणी होते हैं जिन पर वैज्ञानिक जीवविज्ञान के सामान्य सिद्धान्त समझने के लिए अपने अनुसन्धानों में प्रयोग करते हैं।
- विज्ञान के विभिन्न क्षेत्रों में मॉडल जीवों का इस्तेमाल होता आया है; जैसे आनुवंशिकी, परिवर्धन, शरीर-क्रिया विज्ञान, तंत्रिका विज्ञान, जैव-चिकित्सा अनुसन्धान और दवा-आविष्कार।
- किसी परियोजना के लिए मॉडल जीवों का चयन निम्नलिखित आधारों पर होता है – अनुसन्धान का प्रश्न, अनुसन्धान की विशिष्ट विधियाँ, व्यावहारिक सरोकार और मॉडल प्राणियों व लक्षित प्राणियों के बीच समरूपताएँ।
- नैतिकता समितियाँ सुनिश्चित करती हैं कि किसी अनुसन्धान परियोजना के अभीष्ट परिणाम मॉडल प्राणियों पर प्रयोगों को न्यायसंगत ठहरा पाएँ और तीनों R का अनुपालन हो रहा है।
- मॉडल जीव हमारा ज्ञान बढ़ाते हैं और हमारे पर्यावरण के बारे में व हमारे अपने बारे में हमारी समझ में योगदान देते हैं। लेकिन, हर मॉडल जीव की अपनी सीमाएँ होती हैं।

Note: Source of the image used in the background of the article title: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Drosophila-melanogaster-Nauener-Stadtwald-03-VII-2007-10.jpg. Credits: Botaurus, Wikimedia Commons. License: Public Domain.

दीप्ति त्रिवेदी बेंगलूरु लाइफ़ साइंस क्लस्टर की 'फ्लाई फॅसिलिटी' की प्रभारी हैं। यहाँ वे नन्ही-नन्ही फल-मक्खियों पर काम करती हैं जिसने जीवविज्ञान अनुसन्धान में क्रान्ति ला दी है। अगर आप स्कूल व कॉलेज स्तर पर 'ड्रॉसोफिला' के प्रयोगों सम्बन्धी और ज़्यादा जानकारी चाहते हैं तो दीप्ति से fly@ncbs.res.in पर सम्पर्क कर सकते हैं।

अनुवाद : मनोहर नोतानी **पुनरीक्षण :** सुशील जोशी **कॉपी एडिटर :** अनुज उपाध्याय

पहले से मौजूद मानसिक मॉडल्स को चुनौती देना

विष्णुतीर्थ अग्निहोत्री और अनघ पुरन्दरे

बच्चे वास्तविक जीवन की घटनाओं के 'मानसिक मॉडल्स' के साथ विज्ञान की कक्षा में प्रवेश करते हैं। यह मॉडल्स उनके रोज़मर्रा के अनुभवों के आधार पर विकसित होते हैं। कोई चुनौती न मिले तो यह मानसिक मॉडल उसी रूप में वयस्क अवस्था तक क़ायम रह सकते हैं। क्या यह मॉडल वैज्ञानिक रूप से सही होते हैं? त्रुटिपूर्ण मॉडल्स को पहचानकर उनको वैज्ञानिक दृष्टि से सटीक मॉडल्स से प्रतिस्थापित करने में हम विद्यार्थी की कैसे मदद कर सकते हैं?

हम अपने आस-पास की दुनिया के अवलोकन से काफ़ी कुछ सीखते हैं। दो साल का एक बच्चा बार-बार खाने को ऊपर फेंककर (जो शायद हमें ठीक न लगे) यह सीख सकता है कि खाना हमेशा नीचे ही गिरता है। इसी प्रकार, वयस्क भी बार-बार अपने अवलोकनों से सीखते हैं कि पर्याप्त उच्च तापमान (लेकिन बहुत ज़्यादा भी नहीं) पर *डोसा* तवे पर नहीं चिपकेगा। दैनिक अवलोकनों से सीखा गया ऐसा सहज ज्ञान उपयोगी होता है और अकसर हमारे जीवन के लिए ज़रूरी होता है। क्या यह वैज्ञानिक रूप से सही होता है? चलिए, रोज़मर्रा की कुछ घटनाओं का उदाहरण लेकर इस बात को जाँचते हैं।

एक ही कमरे में धातु का सिक्का, लकड़ी की चम्मच से अधिक ठण्डा होता है

हम शर्त लगा सकते हैं कि आप में से कई लोग उपरोक्त कथन को सत्य मानते हैं (सर्दियों के ठण्डे दिनों में आप यह बिल्कुल पसन्द नहीं करेंगे कि कोई चुहलबाज़ आपकी कमीज़ के अन्दर सिक्का डाल दे!)। लेकिन

हमारे शरीर से धातु में ऊष्मा के चालन की दर के कारण, समान तापमान पर होते हुए भी धातु का सिक्का, लकड़ी की चम्मच की अपेक्षा अधिक ठण्डा महसूस हो सकता है।

Credits: piqsels.com. URL: https://www.pikrepo.com/ftjzy/person-holding-pile-of-coins. License: CC0.

वास्तव में धातु के सिक्के और लकड़ी की चम्मच का तापमान बराबर ही होगा, बशर्ते उनमें से किसी एक को गर्म करके या फ्रिज़ से निकालकर या कमरे के बाहर से नहीं लाया गया हो। ऐसा कैसे सम्भव है? आख़िरकार छूने पर तो धातु का सिक्का लकड़ी की चम्मच से ज़्यादा ठण्डा महसूस होता है!

चलिए, आपको एक संकेत देते हैं – यदि आप सहारा मरुस्थल में 55°C पर तप रहे किसी कमरे में होते तब आप धातु के सिक्के को लकड़ी की चम्मच की तुलना में अधिक गर्म महसूस करते। मानव शरीर एक बहुत अच्छा थर्मामीटर नहीं है। जब हम धातु के सिक्के को छूते हैं तो हमारे शरीर से सिक्के (एक बेहतर चालक) में ऊष्मा के चालन की दर, लकड़ी की चम्मच (एक बुरा चालक) की तुलना में अधिक होती है। ऊष्मा की इस हानि को ही हम 'ठण्डा महसूस होना' समझते हैं। अगर आप थर्मामीटर का उपयोग करते तो आपको सिक्के व चम्मच दोनों का तापमान बराबर मिलता (**बॉक्स-1** देखें)।

बॉक्स-1 : यह रोचक वीडियो देखिए जिसमें एक अनुसन्धानकर्ता कई लोगों के साथ यह 'प्रयोग' कर रहा है :

https://youtu.be/vqDbMEdLiCs

इसमें जो भी हो रहा है, उसकी व्याख्या आप कैसे करेंगे?

यह कोई अचरज की बात नहीं है कि आठवीं कक्षा के बच्चों के सामने जब ऐसा ही एक काल्पनिक प्रयोग (देखें **अवधारणा निर्माण : क्या लकड़ी/प्लास्टिक की तुलना में धातु ठण्डी होती है?**) प्रस्तुत किया गया, तब 86% विद्यार्थियों ने बताया कि यदि धातु की चम्मच और लकड़ी/प्लास्टिक की चम्मच को गर्म पानी में आधे दिन तक डुबोकर रखा जाए तो धातु की चम्मच, लकड़ी/प्लास्टिक की चम्मच की तुलना में अधिक गर्म होगी (**तालिका-1** देखें)।

थोड़ी देर अँधेरे में रहने के बाद हमें वस्तुएँ दिखने लगती हैं

एक बार फिर आप उक्त कथन के साथ ख़ुशी-ख़ुशी सहमत हो जाएँगे। इसी प्रकार, जब माध्यमिक स्कूल के बच्चों के सामने एक काल्पनिक प्रयोग (देखें **अवधारणा निर्माण : क्या आप अँधेरे कमरे में देख सकते हैं?**) प्रस्तुत किया गया तो देखने में आया कि कई बच्चे भी इस बात को सही मानते हैं। हम इस कथन को सही क्यों मानते हैं?

क्या आपको वे बहुत सारे मौक़े याद हैं जब 'अँधेरे' कमरे में प्रवेश करने के तुरन्त बाद

हम किसी वस्तु को तभी देख पाते हैं जब उससे परावर्तित प्रकाश हमारी आँखों पर पड़ता है।

Credits: piqsels.com. URL: https://www.piqsels.com/en/public-domain-photo-zbbol. License: CC0.

आपको कुछ भी नहीं दिखाई दिया था? आपको यह भी याद होगा कि उस कमरे में कुछ समय बीत जाने के बाद जब आपकी आँखों ने ख़ुद को स्थिति के अनुरूप समायोजित कर लिया, तब आप कुछ चीज़ें देख पा रहे थे। है ना? हममें से कई लोग इन्हीं यादों के आधार पर उक्त कथन का जवाब देते हैं। क्या किसी पूर्णतया अँधेरे कमरे में भी ऐसा ही होगा? हममें से कुछ ही लोगों ने दैनिक जीवन में पूर्णतया अँधेरे कमरे का अनुभव किया होगा (हर कमरे में कहीं-न-कहीं से थोड़ा-सा प्रकाश ज़रूर आ रहा होता है, जैसे कि चाँद से या सड़क के बल्ब से)। यही कारण है कि हम अपेक्षाकृत 'अँधेरे' कमरे में अपने अनुभवों को सही मानने लगते हैं कि कुछ समय बाद जब हमारी आँखें उस अँधेरे के साथ समायोजन कर लेंगी तब हम वस्तुओं को देख पाएँगे, हो सकता है कि थोड़ी धुँधली दिखें लेकिन देख ज़रूर पाएँगे। हम शायद यह भी मान लेंगे कि अपेक्षाकृत अधिक अँधेरे में इस समायोजन में अधिक समय लगेगा। हालाँकि वास्तविकता में,

तालिका-1 : कौन ज़्यादा गर्म है?

आधे दिन तक गर्म पानी में रखने पर कौन अधिक गर्म होगा?	विकल्प	कक्षा आठवीं के विद्यार्थियों का प्रतिशत, जिन्होंने इस विकल्प को चुना (%)
धातु की चम्मच	क	86.4
प्लास्टिक की चम्मच	ख	4.2
लकड़ी की चम्मच	ग	3.9
तीनों चम्मचों का तापमान समान होगा	घ	5.2

Credits: Data based on ASSET, a diagnostic test from Educational Initiatives: http://www.ei-india.com/asset/.

विज्ञान प्रयोगशाला

अवधारणा निर्माण : क्या लकड़ी/प्लास्टिक की तुलना में धातु ठण्डी होती है?

कल्पना करें:

कि धातु की एक चम्मच, लकड़ी की एक चम्मच और प्लास्टिक की एक चम्मच को एक साथ आधे दिन के लिए गर्म पानी में रखा गया। इस पूरी अवधि के दौरान पानी को एक समान तापमान पर रखा गया।

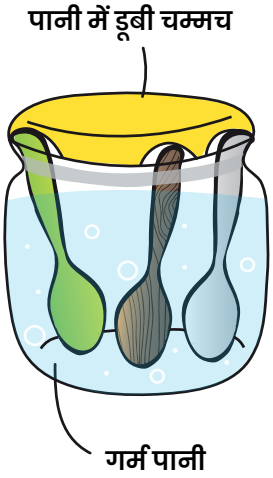

बताएँ:

प्रयोग ख़त्म होने के बाद तीनों चम्मचों को पानी से बाहर निकालकर, तुरन्त उनका तापमान मापा गया। निम्न में से किसका तापमान अधिकतम होगा?

- धातु की चम्मच का
- प्लास्टिक की चम्मच का
- लकड़ी की चम्मच का
- तीनों चम्मचों का तापमान लगभग बराबर होगा

व्याख्या करें :

अपने उत्तर की व्याख्या करते हुए अपने विकल्प को चुनने का कारण बताएँ।

चर्चा करें:

- आप अपने उत्तर की सत्यता का परीक्षण कैसे करेंगे?
- चम्मचों के तापमान को मापने एवं तुलना करने के कुछ तरीक़े कौन-कौन-से हैं?
- यदि आप किसी अन्य तरीक़े का उपयोग करते, तो क्या आपका उत्तर बदल जाता? क्यों?
- क्या होता यदि आप एक स्टील की चम्मच भी पानी में रखते - तब कौन-सी चम्मच सबसे ज़्यादा गर्म होती?
- यदि सभी चम्मचों को पानी की बजाय फ्रिज़ में रखा जाता, तब कौन-सी चम्मच सबसे ज़्यादा ठण्डी होती?

विष्णुतीर्थ अग्निहोत्री एजुकेशनल इनिशिएटिव्स के साथ एक दशक तक अधिगम एवं आकलन पर काम कर चुके हैं। वर्तमान में उनकी रुचि एकीकृत बहु-विषयात्मक पाठ्यक्रम का विकास करने में है। उनसे vishnu.agnihotri@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है।

अनघ पुरन्दरे ऋषि वैली स्कूल में विज्ञान एवं जीवविज्ञान पढ़ाते हैं। पूर्व में वे बच्चों की अवधारणात्मक समझ की जाँच करने हेतु आकलन के साधन बनाने में जुड़े रहे हैं। वर्तमान में उनकी रुचि विज्ञान-शिक्षण को सुगम बनाने के लिए अलग-अलग टॉपिक को जोड़ना है। उनसे anaghrv@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है।

i wonder... Rediscovering school science

Azim Premji University

अनुवाद : कान्हाराम **पुनरीक्षण :** सुशील जोशी **कॉपी एडिटर :** कविता तिवारी

विज्ञान प्रयोगशाला

अवधारणा निर्माण : क्या आप एक अँधेरे कमरे में देख सकते हैं?

कल्पना करें :

आप एक **पूर्णतया** अँधेरे कमरे में हैं। कमरे में एक कुर्सी रखी है।

बताएँ :

यदि आप कमरे में नज़र घुमाएँ, तब निम्न में से कौन-सी बात सही होने की सम्भावना है?

- आप कमरे में कुछ भी नहीं देख पाएँगे।
- कुछ मिनटों के बाद आप कुर्सी की एक हल्की रूपरेखा देख पाएँगे।
- कमरे में काफ़ी समय रहने के बाद ही आप कुर्सी को देख पाएँगे।

व्याख्या करें :

अपने उत्तर की व्याख्या करते हुए अपने विकल्प को चुनने का कारण बताएँ।

चर्चा :

- यदि आपको पहले से पता होता कि कुर्सी पीले रंग की है, तब क्या आप रंग के आधार पर कुर्सी को खोजते या आकृति के आधार पर?
- आप कैसे तय करेंगे कि आपका उत्तर सही है?
- आप एक कमरे को पूर्णतया अँधेरा कमरा कैसे बनाएँगे?

विष्णुतीर्थ अग्निहोत्री एजुकेशनल इनिशिएटिव्स के साथ एक दशक तक अधिगम एवं आकलन पर काम कर चुके हैं। वर्तमान में उनकी रुचि एकीकृत बहु-विषयात्मक पाठ्यक्रम का विकास करने में है। उनसे vishnu.agnihotri@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है।

अनघ पुरन्दरे ऋषि वैली स्कूल में विज्ञान एवं जीवविज्ञान पढ़ाते हैं। पूर्व में वे बच्चों की अवधारणात्मक समझ की जाँच करने हेतु आकलन के साधन बनाने में जुड़े रहे हैं। वर्तमान में उनकी रुचि विज्ञान-शिक्षण को सुगम बनाने के लिए अलग-अलग टॉपिक को जोड़ना है। उनसे anaghrv@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है।

i wonder... Rediscovering school science

Azim Premji University

अनुवाद : कान्हाराम **पुनरीक्षण :** सुशील जोशी **कॉपी एडिटर :** कविता तिवारी

विज्ञान प्रयोगशाला

अवधारणा निर्माण : क्या भारी वस्तुएँ हल्की वस्तुओं की अपेक्षा तेज़ी-से गिरती हैं?

कल्पना करें:

समान आकार लेकिन असमान द्रव्यमान की दो गेंदें P तथा Q हैं। P का वज़न 5 किलोग्राम है, तथा Q का 10 किलोग्राम। दोनों ज़मीन से एक निश्चित ऊँचाई पर समान लम्बाई के धागों के सहारे लटकी हुई हैं।

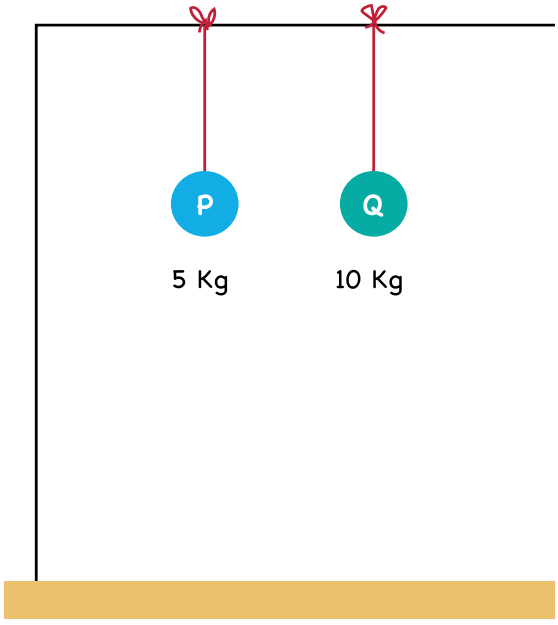

बताएँ:

दोनों धागों को एक साथ काट दिया गया। कौन-सी गेंद ज़्यादा तेज़ी-से नीचे गिरेगी?

- गेंद Q, क्योंकि भारी वस्तुएँ हमेशा ज़्यादा तेज़ी-से ज़मीन पर गिरती हैं।
- गेंद P, क्योंकि हल्की वस्तुएँ हमेशा ज़्यादा तेज़ी-से ज़मीन पर गिरती हैं।
- दोनों को ज़मीन पर गिरने में बराबर समय लगेगा क्योंकि गिरने में लगा समय द्रव्यमान पर निर्भर नहीं करता है।
- कह नहीं कह सकते क्योंकि यह उस ऊँचाई पर निर्भर करता है जहाँ से वे गिरती हैं।

व्याख्या करें:

अपने उत्तर की व्याख्या करते हुए अपने विकल्प को चुनने का कारण बताएँ।

चर्चा करें:

- आप अपने उत्तर की सत्यता का परीक्षण कैसे करेंगे? अपने दैनिक जीवन की किन वस्तुओं का इस्तेमाल गेंदों के बदले में करेंगे?
- यदि गेंदों का आकार अलग-अलग होता, तब क्या आपका उत्तर अलग होता? उदाहरण के लिए यदि आप इस प्रयोग को एक क्रिकेट की गेंद तथा कंचे के साथ दोहराएँ तब उनमें से कौन ज़्यादा तेज़ी-से नीचे गिरेगा? क्यों?
- यदि गेंदों की जगह दो अलग-अलग आकृति की वस्तुओं का उपयोग किया जाता, तब क्या आपका उत्तर बदलता? जैसे कि यदि एक पुस्तक (जिसके पृष्ठों को बाँध दिया गया है) तथा एक ईंट के साथ इस प्रयोग को दोहराया जाता, तब कौन-सी वस्तु ज़्यादा तेज़ी-से नीचे गिरती? क्यों?

विष्णुतीर्थ अग्निहोत्री एजुकेशनल इनिशिएटिव्स के साथ एक दशक तक अधिगम एवं आकलन पर काम कर चुके हैं। वर्तमान में उनकी रुचि एकीकृत बहु-विषयात्मक पाठ्यक्रम का विकास करने में है। उनसे vishnu.agnihotri@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है।

अनघ पुरन्दरे ऋषि वैली स्कूल में विज्ञान एवं जीवविज्ञान पढ़ाते हैं। पूर्व में वे बच्चों की अवधारणात्मक समझ की जाँच करने हेतु आकलन के साधन बनाने में जुड़े रहे हैं। वर्तमान में उनकी रुचि विज्ञान-शिक्षण को सुगम बनाने के लिए अलग-अलग टॉपिक को जोड़ना है। उनसे anaghrv@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है।

अनुवाद : कान्हाराम **पुनरीक्षण :** सुशील जोशी **कॉपी एडिटर :** कविता तिवारी

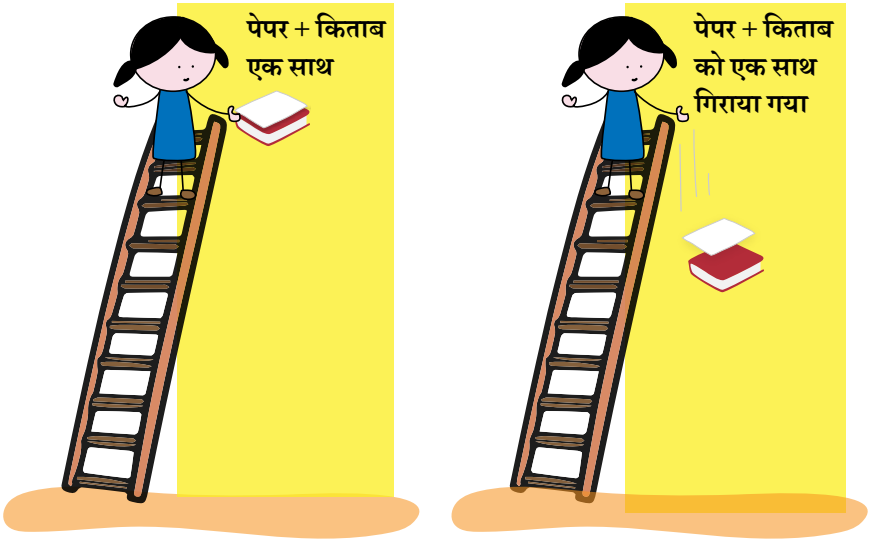

क्या पुस्तक और काग़ज़ एक साथ गिरेंगे? क्या काग़ज़ धीरे-धीरे गिरेगा?
License: CC0.

यदि कमरे में कोई भी प्रकाश प्रवेश नहीं कर रहा है तब हम कुछ भी नहीं देख पाएँगे चाहे कितना भी समय कमरे में बिता लें। कारण यह है कि हम किसी वस्तु को तभी देख पाते हैं जब उससे परावर्तित प्रकाश हमारी आँखों पर पड़ता है।

हल्की वस्तु की अपेक्षा भारी वस्तु हमेशा तेज़ी-से ज़मीन पर गिरती है

मान लें, आप एक भारी ईंट तथा एक छोटी-सी पुस्तक (जिसके चारों ओर टेप लगा दिया गया है ताकि वह खुले नहीं) को एक ही समय पर एक साथ तीसरी मंज़िल से नीचे गिराते हैं। आपके अनुसार कौन-सी वस्तु ज़मीन पर पहले गिरेगी? अगर आपको इसका जवाब देना मुश्किल लग रहा है तो कल्पना करें कि आप एक पुस्तक (जिसके चारों ओर टेप लगा दिया गया है ताकि वह खुले नहीं) के ऊपर एक काग़ज़ का टुकड़ा रखकर नीचे गिरा रहे हैं? क्या आप पुस्तक एवं काग़ज़ दोनों के एक साथ ज़मीन पर आने की उम्मीद कर रहे हैं? या फिर यह अपेक्षा कर रहे हैं कि काग़ज़ कहीं पीछे रह जाएगा?

हमने सालों-साल यह प्रश्न कई विद्यार्थियों, अध्यापकों, बुद्धिमान वयस्कों और कई अन्य लोगों के सामने रखा। ज़्यादातर यह देखकर हैरान रह गए कि भारी तथा हल्की वस्तुएँ समान दर से नीचे गिरती हैं। उदाहरण के लिए, नौवीं कक्षा के विद्यार्थियों के समक्ष जब ऐसा ही एक काल्पनिक प्रयोग (देखें **अवधारणा निर्माण : क्या भारी वस्तुएँ, हल्की वस्तुओं की तुलना में तेज़ी-से गिरती हैं?**) रखा गया तब 50% विद्यार्थियों ने अनुमान लगाया कि हल्की गेंद की तुलना में भारी गेंद तेज़ी-से ज़मीन पर गिरेगी (**तालिका-2** देखें)।

हैरानी की बात तो यह है कि हममें से कई लोगों ने इस घटना के पीछे का विज्ञान पढ़ रखा है। हमने पढ़ रखा है कि गिरती हुई

तालिका–2 : कौन पहले गिरेगा?

कौन-सी गेंद तेज़ी-से गिरेगी?	विकल्प	कक्षा नौवीं के विद्यार्थियों का प्रतिशत, जिन्होंने इस विकल्प को चुना(%)
गेंद Q, क्योंकि भारी वस्तुएँ हमेशा तेज़ी-से ज़मीन पर गिरती हैं।	क	43.7
गेंद P, क्योंकि हल्की वस्तुएँ हमेशा तेज़ी-से ज़मीन पर गिरती हैं।	ख	7.8
दोनों को ज़मीन पर गिरने में बराबर समय लगेगा क्योंकि गिरने में लगा समय द्रव्यमान पर निर्भर नहीं करता है।	ग	41.9
हम कुछ भी निश्चित रूप से नहीं कह सकते क्योंकि यह उस ऊँचाई पर निर्भर करता है जहाँ से वे गिरती हैं।	घ	6.6

Credits: Data based on ASSET, a diagnostic test from Educational Initiatives: http://www.ei-india.com/asset/.

बॉक्स-2 : क्या आपके मन में इस बात को लेकर अभी भी कुछ सन्देह शेष है कि वायु प्रतिरोध की पूर्ण अनुपस्थिति में एक पंख और एक भारी गेंद एक साथ ज़मीन पर गिरेंगे?
इसके बारे में पूरी तरह आश्वस्त होने के लिए हमें इन वस्तुओं को निर्वात (जिसे बनाना महँगा होता है) में गिराना पड़ेगा। सौभाग्यवश, यह प्रयोग किया जा चुका है और इस मानसिक मॉडल को ग़लत सिद्ध किया जा चुका है। (BBC की Human Universe Series का यह अद्भुत वीडियो देखिए : https://www.youtube.com/watch?v=E43-CfukEgs)

एक पंख को धीरे-धीरे लहराते हुए गिरते देखकर यह ग़लत धारणा जन्म ले सकती है कि "हल्की वस्तुएँ धीरे गिरती हैं।"
Credits: Louise Docker, Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Bird%27s_Feather_in_Flight.jpg. License: CC-BY.

बॉक्स-3 : प्रसिद्ध ब्रिटिश जीव वैज्ञानिक लुईस वोल्फर्ट ने अपनी पुस्तक *द अननेचुरल नेचर ऑफ़ साइंस* में तर्क किया है कि "कुछ दुर्लभ अपवादों को छोड़कर, वैज्ञानिक अवधारणाएँ, सहज बोध के विपरीत होती हैं : इन्हें किसी घटना के सामान्य अवलोकन द्वारा प्राप्त नहीं किया जा सकता और यह अकसर हमारे दैनिक अनुभवों से परे होती हैं।"

क्या आपको लगता है कि यहाँ वर्णित तीनों उदाहरणों में से कोई इस तर्क का समर्थन करता है? क्यों?

बॉक्स-4 : क्या आप इन उदाहरणों पर और अधिक विस्तृत चर्चा करना चाहते हैं?

हमारे ब्लॉग पोस्ट विज़िट कीजिए :

1. Does a heavier object fall faster? URL: https://tostudentandteacher.wordpress.com/2015/01/17/does-a-heavier-object-fall-faster-to-the-ground/

2. Power of demonstration on unlearning. URL: http://blog.ei-india.com/2015/02/power-ofdemonstrations-on-unlearning/

वस्तुओं का वेग उनके द्रव्यमान पर क्यों निर्भर नहीं करता है। यहाँ तक कि हमने इस घटना को व्यक्त करने वाले गणितीय समीकरणों पर आधारित प्रश्न भी हल किए हैं। तब भी जब वास्तविक जीवन के किसी उदाहरण की बात आती है तो हममें से कई लोग यह मान लेते हैं कि हल्की वस्तुओं की अपेक्षा भारी वस्तुएँ तेज़ी-से नीचे गिरती हैं। ऐसा क्यों है?

एक सम्भावना यह हो सकती है कि हमने वायु प्रतिरोध की अवधारणा को ठीक से नहीं समझा है, जिसके परिणामस्वरूप धीरे-धीरे लहराते हुए नीचे गिरते हुए किसी पंख या पत्ती को हमने अपने इस विचार (मानसिक मॉडल) का प्रमाण मान लिया है कि "हल्की वस्तुएँ अपेक्षाकृत धीरे गिरती हैं" (**बॉक्स-2** देखें)।

हो सकता है कि हममें से जो लोग (बड़े बच्चों व वयस्कों सहित) वायु प्रतिरोध को ठीक से समझते हैं, वे भी इस त्रुटिपूर्ण मानसिक मॉडल को सही मानते रहें। ऐसा अकसर इसलिए होता है क्योंकि हम इस तथ्य का ग़लत तरीक़े से उपयोग कर लेते हैं कि भारी वस्तुएँ अधिक गुरुत्वाकर्षण का अनुभव करती हैं और मान लेते हैं कि अपेक्षाकृत अधिक गुरुत्वाकर्षण बल का अनुभव करने के कारण भारी वस्तुएँ अधिक तेज़ी-से नीचे गिरेंगी। वास्तव में ऐसा सोचना काफ़ी 'सहज' है कि हल्की वस्तुओं की अपेक्षा भारी वस्तुएँ तेज़ी-से गिरेंगी और यह पूरी तरह ग़लत भी नहीं है (**बॉक्स-3** देखें)। हालाँकि यह कुछ विशेष स्थितियों तक ही सीमित है और इसे एक आम वैज्ञानिक सिद्धान्त की तरह प्रयुक्त नहीं कर सकते, जैसा कि हम करते हैं।

अभ्यास करें

हमने जिन तीन उदाहरणों की चर्चा की है, वे कुछ ऐसे 'मानसिक मॉडल्स' को उजागर करते हैं जिन्हें बच्चों से लेकर वयस्कों तक सभी वास्तविक जीवन की घटनाओं को समझने में प्रयुक्त करते हैं (**बॉक्स-4** देखें)। बच्चे न केवल वैज्ञानिक रूप से त्रुटिपूर्ण इन मॉडल्स की समझ के साथ कक्षा में प्रवेश करते हैं बल्कि यह भी सम्भव है कि सब कुछ सीखने के बाद भी वे अपनी इस समझ में बिना किसी परिवर्तन के वापिस चले जाएँ। ऐसा कई बार होता है कि न तो अध्यापक और न ही विद्यार्थी इन मॉडल्स को लेकर सजग होते हैं। कभी-कभी ऐसा लगता है कि कोई विद्यार्थी किसी वैज्ञानिक अवधारणा को स्पष्ट रूप से समझ गया है जब तक कि वह उससे सम्बन्धित किसी 'संज्ञानात्मक द्वन्द्व' की स्थिति में नहीं उलझता। विज्ञान का एक अच्छा शिक्षक जानता है कि भ्रम एवं द्वन्द्व की ऐसी स्थितियाँ गहरी समझ के लिए अति आवश्यक हैं।

चलिए, देखते हैं कि गिरती हुई वस्तुओं वाले उदाहरण में यह कैसे किया जा सकता है। सबसे पहले अध्यापक विद्यार्थियों को 'पुस्तक के ऊपर काग़ज़' वाला प्रयोग करने के लिए प्रेरित करके उनमें संज्ञानात्मक द्वन्द्व उत्पन्न कर सकता है।

यह उदाहरण विद्यार्थियों को वायु प्रतिरोध के अस्तित्व के बारे में सचेत कर सकता है और पहले जो बिल्कुल स्पष्ट लग रहा था (कि भारी वस्तुएँ तेज़ी-से गिरती हैं), उस पर पर्याप्त सन्देह उत्पन्न कर सकता है। अध्यापक एक समूह चर्चा आयोजित करवा सकता है जिससे विद्यार्थियों को यह सोचने में मदद मिले कि इस प्रयोग को प्रभावित करने वाले अलग-अलग कारक क्या हो सकते हैं। चर्चा के दौरान विद्यार्थी कुछ कारकों, जैसे कक्षा में हवा का बहाव, या दोनों वस्तुओं की सतहों के तुलनात्मक क्षेत्रफल, या खोखलेपन या खुरदरेपन की पहचान कर सकते हैं। इसके बाद, अध्यापक विद्यार्थियों को इन कारकों का परीक्षण करने के उद्देश्य से तरह-तरह की वस्तुओं के साथ विभिन्न प्रयोग डिज़ाइन करके प्रेरित कर सकता है। यह प्रयोग विद्यार्थियों में अवधारणा की समझ बनाने में एक चरणबद्ध तरीक़े से तब तक मदद करेंगे जब तक कि वे इस निष्कर्ष तक नहीं पहुँच जाएँ कि भारी तथा हल्की वस्तुएँ एक ही दर से ज़मीन की तरफ़ गिरती हैं।

मुख्य बिन्दु

- हो सकता है कि बच्चे प्राकृतिक घटनाओं के वैज्ञानिक रूप से त्रुटिपूर्ण मानसिक मॉडल्स के साथ कक्षा में प्रवेश करें।
- अगर पहचाना न जाए तो विज्ञान की कक्षा में सिखाई गई अवधारणाओं के बाद भी ऐसे अवैज्ञानिक मॉडल अपरिवर्तित रह सकते हैं।
- सीखने-सिखाने की जो प्रक्रियाएँ ऐसे मॉडल्स की उपस्थिति की सम्भावना को मान्य करती हैं, वे ऐसे मॉडल्स को उभारकर सामने लाती हैं ताकि अध्यापक एवं विद्यार्थी इनके प्रति जागरूक हो सकें।
- त्रुटिपूर्ण, अवैज्ञानिक मानसिक मॉडल्स को वैज्ञानिक अवधारणाओं से प्रतिस्थापित करने में विद्यार्थियों की मदद करने के लिए, अध्यापक कई तरीक़ों, बातचीत तथा सहायक गतिविधियों का उपयोग कर सकते हैं।

नोट :

1. यह आई वंडर के नवम्बर 2015 अंक में प्रकाशित लेख Challenging Prior Mental Models का संशोधित रूप है।
2. लेख के शीर्षक की पृष्ठभूमि में प्रयुक्त तस्वीर का स्रोत : https://pixabay.com/photos/mechanical-brain-man-machine-2033446/. Credits:aytuguluturk, Pixabay. License: CC0.

विष्णुतीर्थ अग्निहोत्री एजुकेशनल इनिशिएटिव्स के साथ एक दशक तक अधिगम एवं आकलन पर काम कर चुके हैं। वर्तमान में उनकी रुचि एकीकृत बहु-विषयात्मक पाठ्यक्रम का विकास करने में है। उनसे vishnu.agnihotri@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है।

अनघ पुरन्दरे ऋषि वैली स्कूल में विज्ञान एवं जीवविज्ञान पढ़ाते हैं। पूर्व में वे बच्चों की अवधारणात्मक समझ की जाँच करने हेतु आकलन के साधन बनाने में जुड़े रहे हैं। वर्तमान में उनकी रुचि विज्ञान-शिक्षण को सुगम बनाने के लिए अलग-अलग टॉपिक को जोड़ना है। उनसे anaghrv@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है।

अनुवाद : कान्हाराम **पुनरीक्षण :** सुशील जोशी **कॉपी एडिटर :** कविता तिवारी

आओ झूला झूलें

कविता कृष्ण

विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के इतिहास में दोलक का एक महत्त्वपूर्ण स्थान है। विज्ञान की खोज-बीन करने के लिए भी दोलक उत्तम उपकरण हैं क्योंकि वे यांत्रिकी की कई मूलभूत अवधारणाओं की व्याख्या करते हैं और इनका निर्माण व इनके साथ खेल-खिलवाड़ आसान है। विज्ञान की कक्षा में ये क्या अवसर प्रदान करते हैं?

खेल के मैदान वाला झूला या एक पेड़ से रस्सी द्वारा लटका हुआ टायर दोलक के परिचित उदाहरण हैं। माध्यमिक एवं उच्च-माध्यमिक स्कूल की भौतिकी की कक्षाओं में दोलकों का उपयोग कई मूलभूत सिद्धान्तों की व्याख्या करने में किया जा सकता है, जैसे आवर्ती गति, सरल आवर्त गति, वेग एवं त्वरण, गुरुत्वाकर्षण, गति के नियम और ऊर्जा का संरक्षण (**बॉक्स-1** देखें)। सरल दोलक एक आदर्शीकृत दोलक होता है जिसमें हम मानते हैं कि एक पिण्ड (लोलक), दृढ़ एवं द्रव्यमान रहित धागे से लटका हुआ है तथा आगे-पीछे दोलन करने के लिए स्वतंत्र है (**चित्र-1** देखें); हम यह भी मानते हैं कि इस निकाय में कोई भी घर्षण तथा वायु-प्रतिरोध नहीं है। लोलक को जब इसकी साम्यावस्था से अल्प कोण पर हटाकर छोड़ा जाता है तब वह एक नियमित एवं आवर्ती तरीक़े से आगे एवं पीछे गति करना शुरू कर देता है – यह सरल आवर्त गति का एक उदाहरण है। साम्यावस्था के सापेक्ष दोलन करने पर लोलक का वेग परिवर्तित होता रहता है। निम्नतम स्थिति पर लोलक का वेग अधिकतम होता है तथा उच्चतम बिन्दु पर लोलक का वेग शून्य हो जाता है। अतः जब लोलक ऊपर की तरफ़ जा रहा होता है तब गतिज ऊर्जा कम होती है एवं स्थितिज ऊर्जा बढ़ती है। ऊर्जा की कुल मात्रा अपरिवर्तित रहती है (**बॉक्स-2** देखें)।

बॉक्स-1 : NCERT के विज्ञान पाठ्यक्रम में दोलक से सम्बन्धित अध्याय :

1. कक्षा-6 : गति एवं दूरियों का मापन
2. कक्षा-7 : गति एवं समय
3. कक्षा-9 : गति, बल एवं गति के नियम, गुरुत्वाकर्षण, कार्य एवं ऊर्जा

कक्षा में दोलक

कक्षा में जाँच-पड़ताल करने के लिए दोलक आदर्श उपकरण हैं – क्योंकि ये सरल, सस्ते होते हैं एवं इनके साथ काम करना आसान होता है। कक्षा की शुरुआती चर्चाएँ दोलक की गति के बारे में विद्यार्थियों की पूर्व-अवधारणाओं को उभार सकती हैं और उन्हें अपनी धारणाओं की जाँच करने के लिए प्रयोग डिज़ाइन करने में मदद कर सकती हैं (**बॉक्स-3** देखें)।[1] उदाहरण के लिए, विद्यार्थियों की एक धारणा यह हो सकती है कि हल्के दोलक की अपेक्षा भारी दोलक धीमी गति से चलते हैं; या यह कि यदि शुरुआती विस्थापन अधिक हो तो दोलक को एक दोलन पूरा करने में अधिक समय लगेगा। इस लेख के साथ दी गई 6 गतिविधि शीट इन धारणाओं और साथ ही दोलक के आवर्तकाल को प्रभावित करने वाले कारकों की जाँच-पड़ताल करने में विद्यार्थियों की मदद कर सकती हैं।

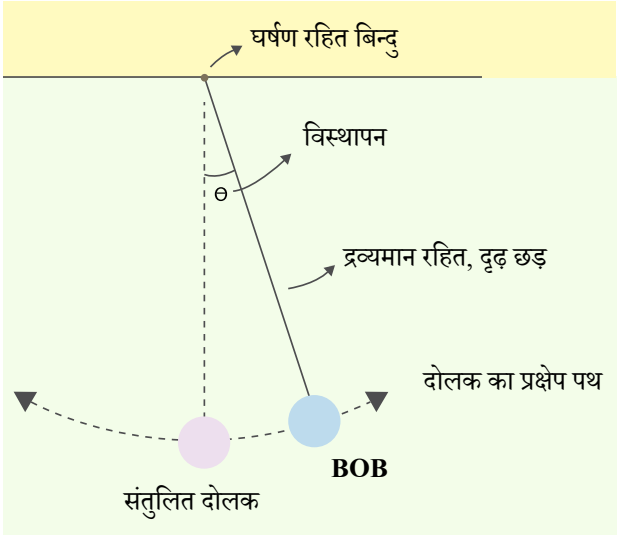

चित्र-1 : एक सरल दोलक का आरेख।

बॉक्स-2 : दोलक की भौतिकी के बारे में और अधिक जानने के लिए देखें

1. Henderson, T. The Physics Classroom Tutorial. Retrieved December 26, 2019, from https://www.physicsclassroom.com/class/waves/Lesson-0/Pendulum-Motion
2. University of Colorado Boulder. (2019) Pendulum lab. Retrieved December 26, 2019, from http://phet.colorado.edu/sims/html/pendulum-lab/latest/pendulum-lab_en.html

कक्षा से बाहर दोलक

दोलक तो हमेशा से रहे हैं – झूला झूलता बच्चा या छत से लटकता हुआ लैम्प इसके आम उदाहरण हैं। लेकिन विज्ञान की कक्षा में हम जिस आदर्श दोलक का उपयोग करते हैं, वह एक आधुनिक अवधारणा है। दोलक के प्राचीनतम अनुप्रयोगों का एक ज्ञात उदाहरण पहली शताब्दी में चीन के हान साम्राज्य के एक वैज्ञानिक झांग हेंग द्वारा विकसित भूकम्पमापी के रूप में मिलता है।[3] दोलक की गति का वैज्ञानिक अनुसन्धान सर्वप्रथम गैलिलियो ने 1602 में किया जब उन्होंने देखा कि चर्च में लटके झूमर आवर्ती रूप से झूल रहे हैं। उनके अनुसन्धान के फलस्वरूप दोलक का उपयोग समय-मापन में किया जाने लगा।

खुले समुद्रों में यात्रा करते समय देशान्तरों का सही निर्धारण करने के लिए समय का ठीक-ठीक मापन करना आवश्यक था। यह यूरोपीय उपनिवेशवादी व्यापारियों के लिए बहुत महत्त्वपूर्ण था जो अपने व्यापार का विस्तार यूरोप के बाहर करना चाहते थे। इसलिए, 18वीं तथा 19वीं शताब्दी में दोलक अनुसन्धान का मुख्य उद्देश्य अधिक सटीक समय मापन का विकास करना था।[4] इसके परिणामस्वरूप अधिक यथार्थ मानचित्र बनाए गए, यूरोपीय व्यापार, औपनिवेशीकरण व शोषण का विस्तार हुआ, जिसके दुनिया भर में दूरगामी परिणाम हुए।

17वीं शताब्दी में हाइगेन, न्यूटन और हुक जैसे कुछ वैज्ञानिकों द्वारा भी दोलक का अध्ययन किया गया था (**चित्र-2** देखें)। इसने गुरुत्वीय त्वरण 'g' के मान का निर्धारण करने में और अक्षांश के साथ 'g'

बॉक्स-3 : कक्षा में शोध

दैनिक अनुभवों एवं सतही अवलोकनों के आधार पर विद्यार्थियों के मन में प्राकृतिक घटनाओं के बारे में कई तरह के विचार होते हैं। विज्ञान की कक्षा इन विचारों की जाँच-पड़ताल करने और ख़ुद के द्वारा की गई खोज-बीन के आधार पर उनमें सुधार करने के अवसर प्रदान कर सकती है। इस तरह की खोज-बीन के कई फ़ायदे होते हैं। विद्यार्थी को प्रायोगिक गतिविधि करने और प्रमाण व तर्क पर आधारित विचारों का विकास करने का अनुभव प्राप्त होता है। उनमें वैज्ञानिक पद्धति की समझ, जैसे व्यवस्थित प्रेक्षण, सावधानीपूर्वक मापन और एक निष्पक्ष परीक्षण करने की योग्यताओं का विकास होता है – जो वैज्ञानिक विधियों को सीखने के आवश्यक अंग हैं। इन गतिविधियों से बच्चों का विज्ञान से जुड़ाव बढ़ता है एवं विज्ञान की समझ भी बढ़ती है।

प्रक्रिया सम्बन्धी हुनर विद्यार्थियों को सिद्धान्तों को समझने व उनकी खोज-बीन करने में वैज्ञानिक विधियों का उपयोग करने में सक्षम बनाता है।[2] इनमें मानसिक हुनर जैसे कि पूर्वानुमान लगाना या मूल्यांकन करना और शारीरिक हुनर जैसे कि यंत्रों व सामग्री को प्रभावी रूप से काम में लेना, दोनों शामिल हैं। विज्ञान की कक्षा में खोज-बीन व जाँच-पड़ताल उसके साथ होने वाली चर्चाएँ बच्चों में अपनी उम्र के लिए उपयुक्त प्रक्रिया सम्बन्धी हुनर हासिल करने में मदद कर सकती हैं। दोलक की गतिविधियों द्वारा विकसित हो सकने वाले कुछ प्रक्रिया सम्बन्धी हुनर निम्नानुसार हैं :

- **खोज-बीन की योजना बनाना :** उन चरों की पहचान करना जिन्हें सही जाँच के लिए स्थिर रखना होगा, उन राशियों को पहचानना जिनका मापन करना है, पड़ताल के विभिन्न चरणों का क्रम निर्धारित करना।
- **उपकरणों का उपयोग करना व उनके साथ काम करना :** यंत्रों व उपकरणों का सावधानीपूर्वक एवं प्रभावी रूप से उपयोग करना, उनके विभिन्न अंगों को योजना के अनुसार जोड़ना व व्यवस्थित करना।
- **मापन व गणना करना :** चर राशियों, जैसे समय तथा लम्बाई का ठीक-ठीक मापन करना, मापन में विभिन्न त्रुटियों के बारे में सोचना एवं उनको कम-से-कम करने का प्रयास करना, आँकड़ों को व्यवस्थित ढंग से लिखना, औसत परिणाम का ठीक-ठीक आकलन करना।
- **पैटर्न व सम्बन्ध ज्ञात करना :** विभिन्न चरों के बीच सम्बन्ध ज्ञात करना, प्रमाणों के साथ अपने नतीजों का परीक्षण करना।

विज्ञान प्रयोगशाला

गतिविधि शीट-1 : एक सरल दोलक कैसे बनाएँ?

उद्देश्य :

इस गतिविधि में हम एक सरल दोलक बनाएँगे और अवलोकन करेंगे कि यह किस प्रकार गति करता है?

आवश्यक सामग्री :

धागा (लगभग 1 मीटर)

एक भार (धातु की कोई चकती या नट)

एक भारी पुस्तक

क्या करें :

1. भार को धागे के एक सिरे पर बाँध दें।
2. धागे को इस प्रकार लटका दें कि यह स्वतंत्रतापूर्वक झूल सके। आप इसके लिए टेबल पर रखी किसी भारी पुस्तक का उपयोग कर सकते हैं या धागे को किसी हुक से लटका सकते हैं। यह ज़रूर सुनिश्चित करें कि भार आसानी से बिना किसी बाधा के झूल सके।
3. पहले सुनिश्चित करें कि धागा अच्छी तरह से तना हुआ है। फिर बिना कोई अतिरिक्त धक्का लगाए नट को एक तरफ़ ले जाकर धीरे से छोड़ दें।
4. नट की गति का अवलोकन करें। यह किस प्रकार की गति करता है?

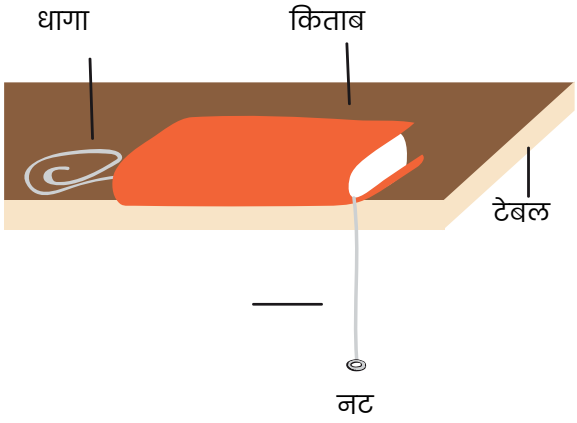

चर्चा करें:

- क्या आप अन्य वस्तुओं के उदाहरण दे सकते हैं जो आवर्ती रूप से गति करती हैं।
- क्या आपने झूले का उपयोग किया है? यह एक दोलक से किस प्रकार समान है? तथा किस प्रकार अलग है?
- एक सम्पूर्ण दोलन के दौरान झूला किस प्रकार गति करता है – क्या पूरे दोलन के दौरान इसकी चाल एक समान होती है? किस स्थिति पर यह अधिकतम चाल से चलता हुआ प्रतीत होता है? क्या यह किसी स्थिति पर रुका हुआ प्रतीत होता है?

रचनाकार :

कविता कृष्ण एक इंजीनियर हैं। उनके पास ग्रामीण व शहरी स्कूलों में अध्यापन, पाठ्यक्रम विकास और अध्यापक-शिक्षण का 15 से अधिक वर्षों का अनुभव है। उनसे kavitak2006@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है।

अनुवाद : कान्हाराम **पुनरीक्षण :** सुशील जोशी **कॉपी एडिटर :** अनुज उपाध्याय

i wonder... Rediscovering school science

Azim Premji University

विज्ञान प्रयोगशाला

गतिविधि शीट-2 : एक दोलक के आवर्तकाल का मापन कैसे करें?

उद्देश्य :

इस गतिविधि में आप उस समय का मापन करेंगे जो किसी दोलक को एक दोलन पूरा करने में लगता है। दोलक की गति के एक पूरे चक्र को एक दोलन कहते हैं। एक पूरे दोलन में लगे समय को आवर्तकाल कहते हैं।

आवश्यक सामग्री :

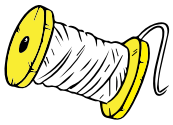

धागा (लगभग 1 मीटर)

एक भार (धातु की चकती या नट)

स्टॉपवॉच (या टाइमर युक्त फ़ोन)

क्या करें :

1. गतिविधि-1 के अनुसार नट को झूलने वाली स्थिति में व्यवस्थित करें।
2. स्टॉपवॉच की सहायता से 10 पूर्ण दोलनों में लगने वाले समय का मापन करें।
3. सुनिश्चित करें कि आप एक दोलन को हर बार तभी गिनते हैं जब नट एक निश्चित स्थिति पर पहुँचता है। (सलाह : उस स्थिति पर नट के लौटने पर गिनती गिनना सुविधाजनक होता है जहाँ से इसे पहली बार छोड़ा गया था।)
4. अपने प्रेक्षणों को तालिका में लिखें।

प्रयोग संख्या	10 दोलनों में लगा समय	1 दोलन का समय
1.		
2.		
3.		
औसत आवर्तकाल		

5. मापे गए समय में 10 का भाग देकर एक दोलन में लगा समय यानी आवर्तकाल ज्ञात करें।
6. आप इसे कई बार दोहराकर औसत आवर्तकाल ज्ञात कर सकते हैं। (सलाह : औसत ज्ञात करने के लिए प्रयोग को कई बार दोहराएँ, प्रत्येक प्रयोग में प्राप्त मान में 10 का भाग देकर एक दोलन में लगा समय यानी आवर्तकाल ज्ञात करें, सारे प्रयोगों में प्राप्त इन आवर्तकालों का योग करें और योग में प्रयोगों की संख्या का भाग दें।)

चर्चा करें :

(अ) आवर्तकाल का मापन :

- क्या प्रत्येक प्रयोग में प्राप्त आवर्तकाल का मान समान था? आपके विचार में उनमें अन्तर क्यों हैं?

- आपके अनुसार, क्या आपने 10 दोलनों में लगे समय का ठीक-ठीक मापन किया? आप उस समय को और अधिक शुद्धता से मापने के लिए क्या कर सकते थे?

- आवर्तकाल ज्ञात करने के लिए इनमें से कौन-सा विकल्प बेहतर होगा – 100 दोलनों में लगे समय को मापना या 10 दोलनों में लगे समय को मापना? क्यों?

(ब) दोलक को अधिक तेज़ी से झुलाना :

- क्या आप दोलक के आवर्तकाल को कम कर सकते हैं (यानी क्या आप दोलक को तेज़ी से झुला सकते हैं)? कैसे?

- क्या आपको लगता है कि दोलक की प्रारम्भिक स्थिति (जहाँ से आपने उसको छोड़ा था) का उसके आवर्तकाल पर कोई असर पड़ता है? आपको ऐसा क्यों लगता है?

- क्या आपको लगता है कि धागे की लम्बाई का दोलक के आवर्तकाल पर कुछ असर पड़ेगा? आपको ऐसा क्यों लगता है?

- क्या आप कुछ अन्य कारकों के बारे में अनुमान लगा सकते हैं जो दोलक के आवर्तकाल को प्रभावित कर सकते हैं?

- आप अपने अनुमानों का परीक्षण कैसे करेंगे?

रचनाकार :

कविता कृष्ण एक इंजीनियर हैं। उनके पास ग्रामीण व शहरी स्कूलों में अध्यापन, पाठ्यक्रम विकास और अध्यापक-शिक्षण का 15 से अधिक वर्षों का अनुभव है। उनसे kavitak2006@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है।

i wonder... Rediscovering school science

Azim Premji University

अनुवाद : कान्हाराम **पुनरीक्षण :** सुशील जोशी **कॉपी एडिटर :** अनुज उपाध्याय

विज्ञान प्रयोगशाला

गतिविधि शीट-3 : क्या किसी दोलक का आवर्तकाल प्रारम्भिक विस्थापन पर निर्भर करता है?

उद्देश्य :

इस गतिविधि में हम परीक्षण करेंगे कि दोलक के प्रारम्भिक विस्थापन का आवर्तकाल पर कुछ प्रभाव पड़ता है या नहीं। एक उचित परीक्षण के लिए हमें सुनिश्चित करना पड़ेगा कि अन्य सभी कारकों को स्थिर रखते हुए केवल प्रारम्भिक विस्थापन में परिवर्तन करें।

आवश्यक सामग्री :

धागा (लगभग 1 मीटर)

एक भार (धातु की चकती या नट)

स्टॉपवॉच (या टाइमर युक्त फ़ोन)

चाँदा

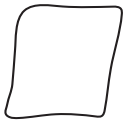

पेपर

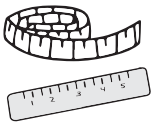

मीटर स्केल या मीटर-टेप

क्या करें :

1. दोलक की लम्बाई नापें – जिस बिन्दु से दोलक लटका है, वहाँ से लेकर नट तक की दूरी को दोलक की लम्बाई कहते हैं।
2. पेपर पर एक खड़ी सीधी रेखा खींचकर कोण 20^0, 30^0, 40^0 चिह्नित करें। इन चिन्हों का प्रयोग आप यह जानने में कर सकते हैं कि आपने दोलक को कहाँ तक ले जाकर छोड़ा।
3. पेपर को दोलक के पीछे इस तरह लगाएँ कि स्थिर अवस्था में दोलक खड़ी रेखा के सीध में हो (**चित्र देखें**)। दोलक स्वतंत्र रूप से लटका हुआ होना चाहिए तथा पेपर को स्पर्श नहीं करना चाहिए।
4. नट को 20^0 तक ले जाकर छोड़ें, ध्यान रहे कि दोलक पेपर के समान्तर हो और स्पर्श नहीं कर रहा हो।
5. गतिविधि-2 की तरह इसमें भी 10 दोलनों में लगने वाले समय का मापन करें।
6. नट को 20^0 से छोड़ते हुए प्रयोग को तीन बार दोहराएँ, औसत आवर्तकाल ज्ञात करें।
7. उपरोक्त चरणों को 30^0 और 40^0 के लिए दोहराएँ।

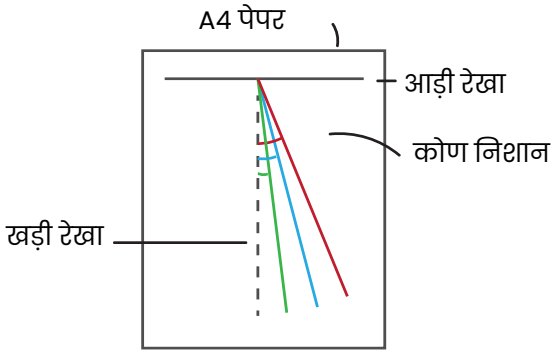

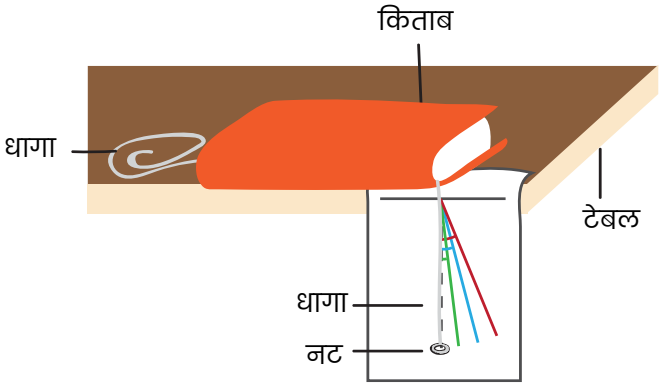

आँकड़े :

प्रत्येक प्रयोग में आपने 10 दोलनों में लगने वाले समय का मापन किया। इसकी सहायता से एक दोलन में लगने वाला समय यानी आवर्तकाल ज्ञात करें। तत्पश्चात प्रत्येक कोण के लिए औसत आवर्तकाल ज्ञात करें।

कोण	प्रयोग संख्या	10 दोलनों का समय	1 दोलन का समय	औसत आवर्तकाल
20^0	1			
	2			
	3			
30^0	1			
	2			
	3			
40^0	1			
	2			
	3			

चर्चा करें :

- आपने इस प्रयोग में क्या स्थिर रखा? क्या बदला?

  मैंने समान रखा :
- दोलक की लम्बाई = _____cm

  वज़न के लिए कितने नट काम में लिए =

  मैंने बदला :

- जब आपने प्रारम्भिक विस्थापन (कोण) को बदला तो क्या दोलक का आवर्तकाल बदला?

- यदि हाँ, तो बताएँ कि कोण के बढ़ाने पर आवर्तकाल में कमी हुई या वृद्धि?

- इस प्रयोग से आप क्या निष्कर्ष निकाल सकते हैं? क्या दोलक का आवर्तकाल उसके प्रारम्भिक विस्थापन पर निर्भर करता है?

रचनाकार :

कविता कृष्ण एक इंजीनियर हैं। उनके पास ग्रामीण व शहरी स्कूलों में अध्यापन, पाठ्यक्रम विकास और अध्यापक-शिक्षण का 15 से अधिक वर्षों का अनुभव है। उनसे kavitak2006@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है।

अनुवाद : कान्हाराम **पुनरीक्षण :** सुशील जोशी **कॉपी एडिटर :** अनुज उपाध्याय

i wonder... Rediscovering school science

Azim Premji University

विज्ञान प्रयोगशाला

गतिविधि शीट-4 : क्या आवर्तकाल दोलक की लम्बाई पर निर्भर करता है?

उद्देश्य :

इस गतिविधि में हम परीक्षण करेंगे कि दोलक की लम्बाई का आवर्तकाल पर कोई प्रभाव पड़ता है या नहीं। एक उचित परीक्षण के लिए हमें सुनिश्चित करना पड़ेगा कि अन्य सभी कारकों को स्थिर रखते हुए केवल लम्बाई में परिवर्तन करें।

आवश्यक सामग्री :

धागा (लगभग 1 मीटर)

एक भार (धातु की चकती या नट)

स्टॉपवॉच (या टाइमर युक्त फ़ोन)

चाँदा

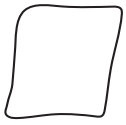

पेपर

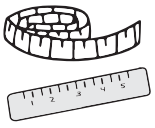

मीटर स्केल या मीटर-टेप

क्या करें :

1. दोलक की लम्बाई मापें। इसे लिख लें।
2. निर्धारित करें कि आप किस ऊँचाई (कोण) तक दोलक को एक ओर ले जाकर छोड़ेंगे (यह पेपर पर अंकित एक कोण होगा जिसे आपने गतिविधि-3 में दोलक के पीछे लगाया था), इस पूरी गतिविधि के दौरान हर बार इसी प्रारम्भिक कोण से दोलक को छोड़ना है।
3. इस स्थिति से दोलक को छोड़ें और गतिविधि-2 व 3 के अनुसार औसत आवर्तकाल ज्ञात करें।
4. अब दोलक की लम्बाई 10 सेमी बढ़ा दें और नई लम्बाई को नोट कर लें।
5. अब दोबारा से आवर्तकाल ज्ञात करें। ध्यान रहे कि प्रारम्भिक कोण नहीं बदलना चाहिए।
6. अब दोलक की लम्बाई 10 सेमी और बढ़ा दें। इस लम्बाई को नोट कर लें।
7. अब दोबारा से दोलक का आवर्तकाल ज्ञात करें। ध्यान रहे कि प्रारम्भिक कोण नहीं बदलना चाहिए।

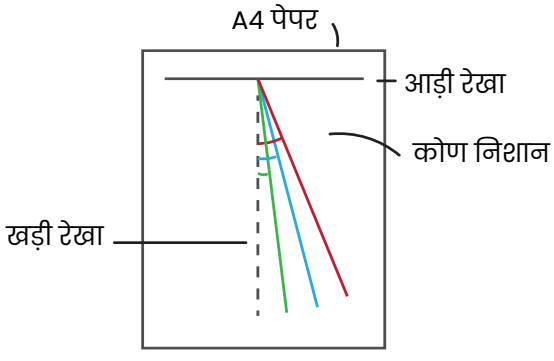

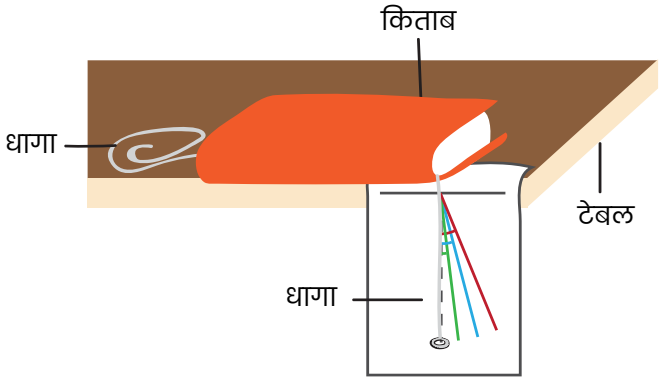

अवलोकन : उपरोक्त चरणों (1 से 7) में प्राप्त आँकड़े :

लम्बाई(सेमी)	प्रयोग संख्या	10 दोलनों का समय	1 दोलन का समय	औसत आवर्तकाल
	1			
	2			
	3			
	1			
	2			
	3			
	1			
	2			
	3			

चर्चा करें :

- आपने इस प्रयोग में क्या स्थिर रखा? क्या बदला?

  मैंने स्थिर रखा :

  प्रारम्भिक कोण जहाँ से दोलक को छोड़ा गया = _____

  वज़न के लिए कितने नट काम में लिए =

  मैंने बदला :

- क्या दोलक की लम्बाई बदलने पर उसका आवर्तकाल बदला?

- यदि हाँ, तो बताएँ कि लम्बाई के बढ़ाने पर आवर्तकाल में कमी हुई या वृद्धि?

- इस प्रयोग से आप क्या निष्कर्ष निकाल सकते हैं? क्या दोलक का आवर्तकाल उसकी लम्बाई पर निर्भर करता है?

रचनाकार :

कविता कृष्ण एक इंजीनियर हैं। उनके पास ग्रामीण व शहरी स्कूलों में अध्यापन, पाठ्यक्रम विकास और अध्यापक-शिक्षण का 15 से अधिक वर्षों का अनुभव है। उनसे kavitak2006@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है।

अनुवाद : कान्हाराम **पुनरीक्षण :** सुशील जोशी **कॉपी एडिटर :** अनुज उपाध्याय

विज्ञान प्रयोगशाला

गतिविधि शीट-5 : क्या आवर्तकाल भार पर निर्भर करता है?

उद्देश्य :

इस गतिविधि में हम यह जाँचेंगे कि क्या दोलक के गोलक का भार उसके आवर्तकाल में कोई अन्तर लाता है। निष्पक्ष परीक्षण के लिए, सुनिश्चित करें कि आप केवल भार ही बदल रहे हैं, जबकि दोलक को अन्य सभी तरीक़ों से बिल्कुल समान रख रहे हैं।

आवश्यक सामग्री :

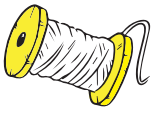

धागा (लगभग 1 मीटर)

तीन भार (धातु की 3 चकतियाँ या 3 नट)

स्टॉपवॉच (या टाइमर युक्त फ़ोन)

चाँदा

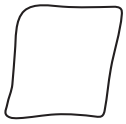

पेपर

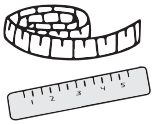

मीटर स्केल या मीटर-टेप

क्या करें :

1. धागे के सिरे पर एक नट लटकाकर दोलक बनाएँ।
2. दोलक की लम्बाई मापें। इसे लिख लें। आप इस लम्बाई को पूरी गतिविधि के दौरान अपरिवर्तित रखेंगे।
3. निर्धारित करें कि आप किस ऊँचाई (कोण) तक ले जाकर दोलक को छोड़ेंगे (यह पेपर पर अंकित एक कोण होगा जिसे आपने गतिविधि-3 व 4 में दोलक के पीछे लगाया था।), इस पूरी गतिविधि के दौरान दोलक को हर बार इसी प्रारम्भिक कोण से छोड़ना है।
4. उस कोण से दोलक को छोड़ें तथा गतिविधि-2, 3, व 4 की तरह आवर्तकाल का मापन करें।
5. पहले वाले नट के साथ एक और नट को जोड़कर भार बढ़ा दें। आपको यह सुनिश्चित करना पड़ेगा कि दोलक की लम्बाई पहले जितनी ही रहे।
6. दोबारा से आवर्तकाल का मापन करें। सुनिश्चित करें कि आपने दोलक को उसी कोण से छोड़ा जो बिन्दु-3 में था।

तीनों नटों को सही तरीक़े से इस तरह बाँधें

7. तीसरे नट को जोड़कर भार और बढ़ा दें। ध्यान रहे, आपने लम्बाई को समायोजित करके पहले जितना ही रखा है।
8. फिर से आवर्तकाल का मापन करें और सुनिश्चित करें कि आपने दोलक को उसी कोण से छोड़ा जो बिन्दु-3 में था।

अवलोकन : उपरोक्त चरणों (1 से 7) में प्राप्त आँकड़े :

एक जैसे भारों/ नटों की संख्या	प्रयोग संख्या	10 दोलनों का समय	1 दोलन का समय	औसत आवर्तकाल
1	1			
	2			
	3			
2	1			
	2			
	3			
3	1			
	2			
	3			

चर्चा करें :

- आपने इस प्रयोग में क्या स्थिर रखा? क्या बदला?

  मैंने स्थिर रखा :

  प्रारम्भिक कोण जहाँ से दोलक को छोड़ा गया = _____

  दोलक की लम्बाई =

  मैंने बदला :

- क्या भार बदलने पर दोलक का आवर्तकाल बदला?

- यदि हाँ, तो बताएँ कि भार बढ़ाने पर आवर्तकाल में कमी हुई या वृद्धि?

- इस प्रयोग से आप क्या निष्कर्ष निकाल सकते हैं? क्या दोलक का आवर्तकाल लटकाए गए भार पर निर्भर करता है?

रचनाकार :

कविता कृष्ण एक इंजीनियर हैं। उनके पास ग्रामीण व शहरी स्कूलों में अध्यापन, पाठ्यक्रम विकास और अध्यापक-शिक्षण का 15 से अधिक वर्षों का अनुभव है। उनसे kavitak2006@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है।

अनुवाद : कान्हाराम **पुनरीक्षण :** सुशील जोशी **कॉपी एडिटर :** अनुज उपाध्याय

i wonder... Rediscovering school science

Azim Premji University

विज्ञान प्रयोगशाला

गतिविधि शीट-6 : सामूहिक चर्चा

चर्चा के बिन्दु :

1. गतिविधि-3, 4, व 5 से आप क्या निष्कर्ष निकालते हैं? दोलक का आवर्तकाल किन-किन कारकों से प्रभावित होता है?

2. क्या दोलक के आवर्तकाल में परिवर्तन से सम्बन्धित आपके पूर्वानुमान सही थे?

3. आपके अनुसार कौन-कौन-से कारक आवर्तकाल को प्रभावित कर सकते हैं? आप उनका परीक्षण कैसे करेंगे?

4. हम किसी एक प्रयोग में केवल एक ही कारक में परिवर्तन करके उसका परीक्षण करते हैं, क्यों? क्या होगा यदि हम किसी प्रयोग में एक साथ एक से अधिक कारकों में परिवर्तन करें?

5. यदि आपको दो झूलों में से किसी एक को चुनने के लिए कहा जाए तो आप कौन-सा झूला चुनेंगे - जो लम्बा है या जो छोटा है? क्यों?

रचनाकार :

कविता कृष्ण एक इंजीनियर हैं। उनके पास ग्रामीण व शहरी स्कूलों में अध्यापन, पाठ्यक्रम विकास और अध्यापक-शिक्षण का 15 से अधिक वर्षों का अनुभव है। उनसे kavitak2006@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है।

अनुवाद : कान्हाराम **पुनरीक्षण :** सुशील जोशी **कॉपी एडिटर :** अनुज उपाध्याय

i wonder... Rediscovering school science

Azim Premji University

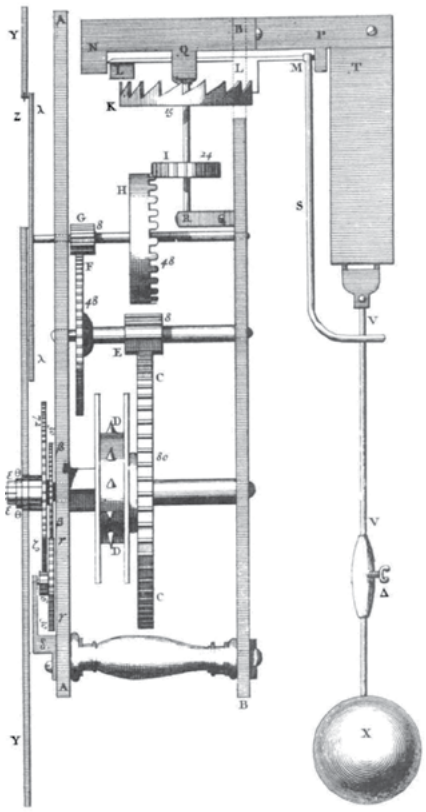

के मान में परिवर्तन को समझने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई और परिणामस्वरूप पृथ्वी का आकार निर्धारित करने में मदद की।[5]

विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के इतिहास में तथा आधुनिक संसार के निर्माण की प्रक्रिया के दौरान दोलक जिन-जिन स्वरूपों में प्रकट हुआ है वे रोचक एवं अद्भुत हैं। अन्तर्विषयात्मक परियोजनाएँ हमें यह समझने का अवसर प्रदान कर सकती हैं कि कैसे विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी का क्रमिक विकास होता है और कैसे वे उस समय के आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक मुद्दों से अभिन्न रूप से जुड़े होते हैं (**बॉक्स-4** देखें)।

बॉक्स-4 : दोलक से सम्बन्धित कुछ अन्तर-विषयात्मक परियोजनाओं के सुझाव

- गैलिलियो के दोलक सम्बन्धी प्रयोगों का अध्ययन करना एवं उनका पुनर्निर्माण करना
- समय मापन उपकरणों के इतिहास का अध्ययन करना
- यूरोपीय विस्तार का अध्ययन करना – समुद्री यात्रा, देशान्तर की समस्या और समय मापन
- आजकल दोलकों का उपयोग कहाँ होता है?
- फूको का दोलक क्या है?
- यांत्रिक घड़ी बनाना

चित्र-2 : दोलक घड़ी के खोजकर्ता क्रिश्चियन हाइगेन्स ने इस घड़ी को लगभग 1673 में बनाया था। यह चित्र उनके आलेख Horologium Oscillatorium से लिया गया है।

Credits: Retrieved June 27, 2008 from Harold C. Kelly (2007) Clock Repairing as a Hobby: A How-To Guide for Beginners, Skyhorse Publishing, ISBN:160239153X, p.38, fig.13 on Google Books. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Huygens_clock.png. License: CC-BY.

मुख्य बिन्दु

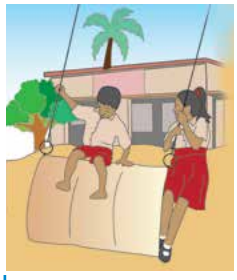

- दोलकों का उपयोग यांत्रिकी के कई मूलभूत सिद्धान्तों, जैसे गति, गुरुत्वाकर्षण और ऊर्जा आदि की व्याख्या करने में किया जा सकता है।
- विद्यार्थियों के लिए दोलकों का निर्माण करना एवं अन्वेषणों के लिए उपयोग करना काफ़ी आसान होता है।
- विद्यार्थी अन्तर्विषयात्मक परियोजनाओं के द्वारा विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के इतिहास में दोलकों की महत्ता की जाँच-पड़ताल कर सकते हैं।

Note: Source for the image used in the background of the article title: https://www.flickr.com/photos/eileendelhi/125635185/. Credits: Eileen Delhi, Flickr. License: CC-BY-NC.

References:

1. Duckworth, E. R. (2009). 'The having of wonderful ideas and other essays on teaching and learning'. New York: Teachers College, Columbia University.
2. Harlen, W., & Elstgeest, J. (1992). 'Unesco sourcebook for science in the primary school'. Paris: Unesco Publishing.
3. Pendulum. (2019, December 17). Retrieved December 26, 2019, from https://en.wikipedia.org/wiki/Pendulum.
4. Waring, S. Cambridge Digital Library. Retrieved December 26, 2019, from https://cudl.lib.cam.ac.uk/view/ES-LON-00031/1.
5. Matthews, M. R. (2000). 'Time for science education: how teaching the history and philosophy of pendulum motion can contribute to science literacy'. New York: Kluwer Academic/Plenum Publishers.

कविता कृष्ण ने आईआईटी मद्रास से स्नातक की पढ़ाई करने के बाद 10 वर्षों तक इंजीनियर के पद पर कार्य किया। उन्होंने अध्यापन के लिए पुनः प्रशिक्षण प्राप्त किया। उनके पास ग्रामीण एवं शहरी स्कूलों में अध्यापन, पाठ्यक्रम विकास और अध्यापक-शिक्षण का 15 से अधिक वर्षों का अनुभव है। उनसे kavitak2006@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है।

अनुवाद : कान्हाराम **पुनरीक्षण :** सुशील जोशी **कॉपी एडिटर :** अनुज उपाध्याय

सौरभ सोम से साक्षात्कार

सौरभ सोम अज़ीम प्रेमजी स्कूल, उत्तरकाशी, उत्तराखण्ड में कार्यरत हैं। इस साक्षात्कार में वे अपने अनुभव और विज्ञान में जीवन को लेकर अपना नज़रिया साझा कर रहे हैं।

सौरभ, पहले तो अपनी मौजूदा भूमिका के बारे में कुछ बताइए।

मैं अज़ीम प्रेमजी स्कूल, उत्तरकाशी, उत्तराखण्ड से जुड़ा हूँ। अज़ीम प्रेमजी स्कूल प्रयोग करने और यह दर्शाने के स्थल हैं कि वास्तविक कक्षा में शैक्षणिक विधियाँ कैसे काम करती हैं। मैं स्कूल में हमारी शिक्षा के समन्वयन तथा उसे समेकित करने में लगा हूँ। मैं विद्यार्थियों को पढ़ाता हूँ तथा अपनी टीम के सदस्यों के स्कूल-आधारित पेशेवर विकास में मदद करता हूँ।

विज्ञान शिक्षा को एक पेशे में ढालना

क्या आप हमें एक अध्यापक के रूप में अपने शुरुआती अनुभवों के बारे में कुछ बता सकते हैं?

विद्यार्थी (स्कूल से यूनिवर्सिटी तक) के तौर पर मैं विज्ञान के प्रति उत्साहित था। स्थानीय स्कूलों में वालिंटियर के तौर पर विज्ञान पढ़ाया करता था। एक साल मैंने एक राष्ट्रीय विज्ञान संग्रहालय में काम किया, जहाँ मैं संग्रहालय देखने आने वालों को मॉडल्स और अन्य सामग्री के बारे में समझाया करता था। एक स्नातक विद्यार्थी की हैसियत से मैं होमी भाभा सेंटर फॉर साइंस एजुकेशन, मुम्बई में विद्यार्थियों और शिक्षकों के लिए विज्ञान संचार के काम से जुड़ गया। यहीं पर विज्ञान शिक्षा और विज्ञान शिक्षा सम्बन्धी शोध की मेरी समझ विकसित हुई। मिडिल स्कूल के विद्यार्थियों को नियमित रूप से पढ़ाना और शिक्षकों के लिए कार्यशालाओं का आयोजन करना तो तब शुरू हुआ जब मैं 2014 में अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन से और 2018 में अज़ीम प्रेमजी स्कूल से जुड़ा।

वे कौन-से गुण हैं जो किसी व्यक्ति को विज्ञान शिक्षा को अपना कैरियर बनाने में मददगार होंगे ?

ज्ञान और सूचनाओं में व्याप्त अनिश्चितता को उचित ढंग से सम्हालना, ज्ञान के भिन्न क्षेत्रों के बीच कड़ियों और सुसंगति को देख पाना,

साथ ही विषयवस्तु को सम्प्रेषित करने में, कक्षाई शिक्षण पद्धतियों में तथा समूचे मानवीय व्यवहार में गहरी ईमानदारी। सबसे बड़ी बात 'फॉण्डनेस फॉर गेटिंग योर हेंड्स डर्टी' यूँ कहें कि कि 'अपने हाथ गन्दे करने में झिझक न होना' भी ज़रूरी है।

जीवन बतौर विज्ञान शिक्षक

एक सामान्य दिन कैसे गुज़रता है?

लगभग वैसा ही जैसा मेरे अन्य पेशेवर सहयोगियों का होता है। मैं पढ़ाए जाने वाले टॉपिक्स की एक योजना बनाता हूँ। मैं रोज़ाना अपने आस-पास ऐसी चीज़ें ढूँढ़ता हूँ जिनका उपयोग विज्ञान कक्षा में संसाधन के रूप में कर सकूँ। मैं पढ़ाता हूँ, विद्यार्थियों और शिक्षकों के अनुभवों का दस्तावेज़ीकरण करता हूँ, शिक्षण विधि में जुगाड़ की सम्भावनाओं की टोह में रहता हूँ, अपने काम पर मनन करने की दृष्टि से कुछ पढ़ता-लिखता हूँ और नए डिज़ाइन और प्रयोग आज़माता हूँ। आप सदा मुझे शिक्षकों और विद्यार्थियों से बात करते हुए पाएँगे। यहाँ तक कि मैं अपने छह वर्षीय बेटे से भी यह समझने के लिए बतियाता हूँ कि वह प्रकृति और ब्रह्माण्ड को कैसे देखता है।

कक्षा में अध्यापन की योजना प्रक्रिया के बारे में भी बतलाएँ।

सामान्यतया मैं अपनी योजना सहकर्मियों के साथ बनाता हूँ। प्रक्रिया की शुरुआत विचार-मंथन के सत्र से होती है। इसमें सरसरी तौर पर एक क्रम तय हो जाता है कि टॉपिक किस क्रम में आगे बढ़ेगा। विकल्पों के बारे में भी सोचा जाता है, और इस योजना के इर्द-गिर्द गतिविधि व सवाल तय किए जाते हैं। हम उस अवधारणा से जुड़ी वैकल्पिक धारणाओं को खोजने के लिए उससे सम्बन्धित साहित्य व संसाधनों को खँगालते हैं। यह देखने की कोशिश करते हैं कि यह टॉपिक विषय के एकीकरण के क्या अवसर उपलब्ध करता है और किस तरह के सामूहिक कार्य व मूल्यांकन की सम्भावनाएँ प्रस्तुत करता है। कक्षा से पहले ही हम अपनी योजना के क्रियान्वयन के लिए ज़रूरी संसाधनों को जुटा लेते हैं। कक्षा के बाद इन अनुभवों को रिकॉर्ड कर लिया जाता है। जिस समूह ने योजना बनाई थी उसी के साथ कक्षा के क्रियाकलाप पर मंथन किया जाता है और अगले दिन का नियोजन शुरू हो जाता है। यह प्रक्रिया दोहराई जाती है हालाँकि कभी-कभार एकाध बिन्दु छोड़ दिए जाते हैं।

यदि कोई आपकी कक्षा में आए तो क्या देखने की उम्मीद करेगा?

आमतौर पर स्कूल में मैं सह-शिक्षण टीम का हिस्सा होता हूँ। किसी सामान्य दिन मेरी विज्ञान कक्षा में आपको विद्यार्थी किसी मसले का हल निकालते मिलेंगे। वे योजना बनाते, चर्चा करते, डिज़ाइन के विचार दूसरों के साथ साझा करते, अपनी कार्य-योजना का निष्पादन करते या स्वयं अपने काम का मूल्यांकन करते मिलेंगे। आप देखेंगे कि मैं इस प्रक्रिया में मात्र एक मददगार हूँ।

मैं उन्हें भरसक उत्साहित करता हूँ कि वे अपने सवाल से सम्बन्धित कार्य की बारीकियों और परिवेश को क्रियान्वित करें, ताकि वे किसी निष्कर्ष तक पहुँचे। इस कार्य में प्रयोग भी शामिल होते हैं। मैं कक्षा की बातचीत में उस खोज या आविष्कार से सम्बन्धित विवरण भी जोड़ता हूँ और रोचक ऐतिहासिक किस्से भी प्रस्तुत करता हूँ।

एक विज्ञान शिक्षक के रूप में क्या कोई ऐसा पल याद है जब 'शिक्षक सीखने वाला' हो गया हो ?

बिलकुल। मेरा ऐसे पलों से कई बार सामना हुआ है जब शिक्षकों और विद्यार्थियों ने विज्ञान की मेरी समझ को चुनौती दी। जैसे एक बार कार्यशाला में साथी शिक्षक ने पूछ लिया, 'विद्युत-चुम्बकीय तरंगों का वेग अलग-अलग माध्यमों में अलग-अलग कैसे हो जाता है?' मेरी अवधारणात्मक स्पष्टता इस सवाल के सार्थक जवाब के लिए कम पड़ गई। मैं स्वीकार करता हूँ कि विद्यार्थियों के प्रश्न वयस्कों के प्रश्नों से ज्यादा कठिन होते हैं।

आपके शिक्षकीय पेशे के कुछ पुरस्कार और चुनौतियाँ क्या-क्या हैं?

मेरे सहकर्मी, विद्यार्थी और कई शिक्षक मेरे शिक्षण की सराहना करते हैं, आज तक यही पुरस्कार मुझे मिला है।

कई बार कक्षा में मुझे ऐसे नज़रियों और विचारों से दो-चार होना पड़ा है जो मेरे निजी दृष्टिकोण और विचारधारा को चुनौती देते हैं। ख़ासतौर से ऐसे लोगों के साथ अन्तर्क्रिया में मुश्किल होती है जो अपने लम्बे समय से चले आ रहे विचारों को लेकर बातचीत से कतराते हैं। दूसरी चुनौती यह है कि हममें से बहुत से साथी वैज्ञानिक अवधारणाओं, शिक्षण विधि और विज्ञान के बारे में विचारों की अपर्याप्त समझ रखते हैं। यह बात अनुभवी विज्ञान शिक्षकों पर भी लागू होती है। ऐसे माहौल में किसी भी सर्वथा नई चीज़ पर बात करना बहुत कठिन हो जाता है।

आपके शिक्षकीय पेशे के कुछ महत्त्वपूर्ण नैतिक पहलू क्या हैं?

ग़ैर-भेदभाव का सिद्धान्त। हर विद्यार्थी की सामर्थ्य पर भरोसा रखना कि वह कम-से-कम उच्चतर माध्यमिक स्तर तक विज्ञान में श्रेष्ठ प्रदर्शन कर सकता है। और इसके लिए सीखने का अनुकूल वातावरण बनाना। मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि विज्ञान की शिक्षा को इस तरह नियोजित और डिज़ाइन किया जाना चाहिए कि वह समतामूलक और लोकतांत्रिक समाज के निर्माण के लिए ज़रूरी जीवन-मूल्यों को प्रतिबिम्बित करे।

स्कूली विज्ञान शिक्षा

स्कूली विज्ञान शिक्षा पर आपका परिप्रेक्ष्य क्या है?

सामान्यतया स्कूली विज्ञान शिक्षा आज भी विषयवस्तु भर को पढ़ा देने के आग्रह में क़ैद है। इसे अधिक सतकर्तापूर्वक नियोजित किया जाना चाहिए। यह महत्त्वपूर्ण है कि विषयवस्तु, अवधारणा और कौशल के बीच उपयुक्त संतुलन के ज़रिए विद्यार्थियों के मन में वैज्ञानिक संस्कृति पैदा की जाए। मेरे विचार में राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा-2005 के छह वैधता मानदण्डों (संज्ञान, विषयवस्तु, प्रक्रिया, ऐतिहासिकता, पर्यावरण तथा नैतिकता) का समुच्चय विज्ञान पाठ्यचर्या के लिए श्रेष्ठतम है।

बच्चे विज्ञान कैसे सीखते हैं, अपनी समझ से कोई तीन बिन्दु बतलाएँ।

1. व्यापक अर्थ में वे अन्य विषय की तरह ही विज्ञान भी सीखते हैं। स्मरण रहे कि बचपन में ही उनका सामना कई वैज्ञानिक अवधारणाओं से हो जाता है। स्थान, मात्रा(संहति), समय, गति, प्रकाश, ताप, वाष्पीकरण इत्यादि से बच्चे का जुड़ाव उनके संज्ञानात्मक विकास और प्राकृतिक व सामाजिक विश्व की समझ से नज़दीकी से जुड़ता है।
2. विज्ञान सीखने में कक्षा तब अधिक प्रभावी हो जाती है जब शुरुआत परिचित प्रसंगों को समस्यामूलक बनाकर की जाए। अर्थात आप विद्यार्थी के सामाजिक प्रसंग का उपयोग संज्ञानात्मक द्वन्द्व पैदा करने के लिए करते हैं और उस द्वन्द्व के समाधान के लिए साधन/संसाधन उपलब्ध करवाते हैं। जब आप विद्यार्थी को उसके आत्म-मूल्यांकन व सहपाठी मूल्यांकन से उसने जो सीखा है और जिन नए सिद्धान्तों या विचारों तक वह पहुँचा है, उसे उन पर विचार-विमर्श के अवसर प्रदान करते हैं, जब आप आगे अध्ययन के लिए अवसरों को चिन्हित करने और

खोज-बीन की प्रक्रिया में मदद देते हैं। इसे एक निरन्तर प्रक्रिया के रूप में देखा जाना चाहिए।

3. यह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है कि कक्षा में सभी प्रकार की प्रतिक्रियाओं का स्वागत किया जाए। विद्यार्थियों द्वारा प्रस्तावित सभी विचारों को वैधता-परीक्षण में समान महत्त्व दिया जाना चाहिए। उनकी मदद की जानी चाहिए कि वे उनके द्वारा जुटाए गए साक्ष्यों के आधार तय करें और सबसे सही जवाब कौन-सा है यह वे ही चुनें। यह आवश्यक है कि ख़ासतौर पर विज्ञान सीखने के शुरुआती दौर में बने-बनाए उत्तर देने से बचें।

माध्यमिक स्तर पर किस प्रकार का विज्ञान शिक्षण महत्त्वपूर्ण है, विशेष रूप से जब विद्यार्थी हाई स्कूल के बाद विज्ञान का अध्ययन नहीं करना चाहें?

उभरते परिदृश्य में जनतांत्रिक समाज अपेक्षाकृत जटिल होते जा रहे हैं। विश्वभर में टेक्नॉलॉजी के वर्चस्व, सूचनाओं का अतिरेक, शक्ति और संसाधनों का असमान वितरण जैसे ख़तरे लगातार बढ़ रहे हैं। इस दौर में हमें नागरिकों को लोकतंत्र में सक्रिय सहभागिता के लिए तैयार करना है। विज्ञान सिखाने-सीखने की प्रक्रिया में इन आन्तरिक मूल्यों से जुड़े कुछ मूल्य निहित हैं। हाई स्कूल तक भी अच्छी गुणवत्ता का विज्ञान-शिक्षण इस लक्ष्य को साधने में सहायक हो सकता है।

कुछ बच्चों में विज्ञान के प्रति स्वाभाविक अभिरुचि (नेचुरल एप्टीट्यूड) पर आपके क्या विचार हैं ?

चूँकि मनुष्य नैसर्गिक रूप से जिज्ञासु है, इसलिए मेरा विश्वास है कि यदि उचित ढंग से सिखाया जाए तो विज्ञान को सभी के लिए नहीं, तो कम-से-कम अधिकांश बच्चों के लिए रोचक बनाया जा सकता है। ऐसा शिक्षण विद्यार्थियों की वैकल्पिक धारणाओं को मानता भी है और उनका सम्मान भी करता है। इसलिए हम ऐसे सवाल प्रस्तुत करते हैं जो विद्यार्थियों की वास्तविक

दुनिया के अनुभवों से जुड़े हों और ऐसे प्रसंग रचते हैं जो उनकी जानकारी के आधार से जुड़ें। हम उनके लिए ऐसे अभ्यास चुनते हैं जिससे प्रत्येक विद्यार्थी विज्ञान-प्रक्रिया से जुड़ने में समर्थ हो सके, विभिन्न सृजनात्मक तत्वों को शामिल करने को बढ़ावा देते हैं, विद्यार्थियों को अपनी आवाज़ खोजने का मौका देते हैं।

हम विज्ञान को सामूहिक सामाजिक प्रयास की भाँति प्रस्तुत करते हैं न कि मुट्ठी भर प्रतिभावान लोगों के दिमाग़ की उपज के रूप में।

विज्ञान शिक्षक की भूमिका पर आपका परिप्रेक्ष्य?

शिक्षक की भूमिका निर्णायक होती है। बच्चों में विज्ञान के प्रति रूचि पैदा करने के लिए आवश्यक है कि वे विज्ञान को सामाजिक सन्दर्भ में प्रस्तुत करें। विद्यार्थियों को वैज्ञानिक-संस्कृति में सहभागी होने के लिए और विद्यार्थियों को वैज्ञानिक ज्ञान उत्पन्न करने के लिए उत्साहित करें।

शिक्षकों को चाहिए कि वे अनुशासित चिन्तन की संस्कृति प्रदान करें। विद्यार्थियों को अवधारणाओं की सुसंगति को देखने में मदद करें तथा सृजनात्मकता को प्रोत्साहन दें। शिक्षक विद्यार्थियों में ऐसी योग्यता विकसित करने में भी मदद कर सकते हैं कि वे खुद अपने प्रयोगों की योजना बनाएँ, अपनी योजना को निष्ठापूर्वक साक्ष्य प्राप्त करने के लिए क्रियान्वित करें। अपने विचारों और यहाँ तक निष्कर्षों को लेकर हठीला नहीं बल्कि लचीलेपन का भाव रखें और अपने परिवेश के प्रति संवेदनशील बनें।

मैं सोचता हूँ कि विज्ञान शिक्षक की यह ज़िम्मेदारी है कि इन मूल्यों को विद्यार्थी के मन में अंकुरित करें और अपने शिक्षण की योजना इसी के अनुरूप बनाएँ।

विज्ञान शिक्षक के सामने सबसे महत्त्वपूर्ण चुनौतियों क्या हैं?

1. विद्यार्थियों की मिथ्या धारणाओं से निपटना सबसे बड़ी चुनौती होती है। हालाँकि विषयवस्तु के अच्छे ज्ञान का कोई विकल्प नहीं है, लेकिन सबसे व्यापक रूप से स्वीकृत उत्तर का ज्ञान ही विज्ञान शिक्षक के लिए पर्याप्त नहीं होता। विज्ञान शिक्षक को उन भ्रामक धारणाओं से भलीभाँति परिचित होना चाहिए जिन्हें विद्यार्थी वैज्ञानिक अवधारणाओं से जोड़ते हैं, बल्कि उसे यह भी पता होना चाहिए इन्हें चुनौती देने के लिए शैक्षणिक हस्तक्षेप क्या हैं। दिलचस्प बात यह है कि ये मिथ्या धारणाएँ इतिहास की स्मृतियाँ होती हैं, और कई जाने-माने वैज्ञानिक भी अतीत में ऐसे ही विचार रखते थे। इस चुनौती के कुछ पहलुओं को सम्बोधित करने के लिए अपने शिक्षण क्रम को इस तरह नियोजित किया जा सकता है, जिसमें

सम्बन्धित विषय के मुख्य सिद्धान्तों की समझ बनाने में सहूलियत हो। इससे बच्चों को पाठ के अन्त में लम्बी छलांग लगाने की ज़रूरत कम हो जाती है।

2. दूसरी चुनौती एकीकरण को लेकर होती है। यह तो ज़रूरी है कि विज्ञान को टुकड़ों में न देखा जाए, पर इस लक्ष्य को कक्षा में कैसे प्राप्त किया जाए? इबारती सवाल में चीते की रफ़्तार पता करने से भौतिकशास्त्र और जीवशास्त्र का एकीकरण नहीं हो जाता। इसके विपरीत, हृदय की कार्य-प्रणाली को समझने में भौतिकी के बल, दबाव, पास्कल का नियम आदि की आवश्यकता होती ही है। यानी यहाँ भौतिकी और जैविकी की अवधारणाओं का एकीकरण आवश्यक है।

3. माध्यमिक स्तर पर किसी वैज्ञानिक सिद्धान्त को पूरी तरह सिखाना या शामिल करना सम्भव नहीं होता। ऐसे प्रयास प्राय: निष्फल होते हैं। आप पाएँगे कि आपकी कक्षा में अधिकांश विद्यार्थी इन अवधारणाओं को नहीं समझते, मगर आधारभूत प्रश्न पूछते हैं और हम उनका जवाब इस स्तर पर नहीं दे सकते।

विज्ञान-शिक्षण में कोई ऐसा विकास जो आपके लिए विचारोत्तेजक हो?

यद्यपि कोई एक प्रणाली या रणनीति विज्ञान के विविध सन्दर्भों के सीखने-सिखाने के लिए प्रभावी नहीं होती, फिर भी प्रोजेक्ट आधारित या समस्या आधारित शिक्षण माध्यमिक स्तर तक विज्ञान शिक्षण के लक्ष्यों को पाने में प्रभावकारी होता है।

मैं यह भी सोचता हूँ कि यदि विद्यार्थियों को उपयुक्त और सम्बन्धित विज्ञान आलेख और सन्दर्भ सामग्री उपलब्ध होगी तो वे निश्चित ही उसे पढ़ेंगे। नैसर्गिक तौर पर मानव 'जानना' चाहता है। शिक्षक को चाहिए कि वह विद्यार्थी की इस चाह को चुनौतीपूर्ण समस्याएँ या सन्दर्भ रखकर 'और जानने' की दिशा में प्रेरित करे। डिज़ाइन और टेक्नोलॉजी विज्ञान-शिक्षण में एक उभरता विचारोत्तेजक आयाम हो सकता है।

धन्यवाद, सौरभ। क्या आप हमारे पाठकों के सामने कोई प्रश्न रखना पसन्द करेंगे?

जी हाँ। मेरे पेशे से एक बिन्दु प्रत्यक्ष रूप से जुड़ा है कि विज्ञान शिक्षण के लक्ष्यों को बहुत संकुचित दृष्टि से देखा जाता है। लेकिन क्या होगा अगर हम विज्ञान शिक्षा को ड्यूईवादी लोकतंत्र के विचार के अनुरूप अपनाएँ? दूसरे शब्दों में यदि लोकतंत्र समाज के लिए एक नैतिक आदर्श के रूप में रखा जाए और लोकतंत्र का सार यदि सहभागिता है तो इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए वैज्ञानिक प्रक्रिया और नज़रिया क्या प्रस्तुत करते हैं? यदि समस्त शिक्षा का उद्देश्य लोकतांत्रिक निर्णय-प्रक्रिया में नागरिकों को भागीदारी के लिए तैयार करना है तो विज्ञान में सिखाने के लिए हम क्या चुनेंगे? और हम इसे कैसे सिखाएँगे?

अनुवाद : राग तैलंग
पुनरीक्षण : सुशील जोशी

रंग बदलते फूल और नखरैल परागणकर्ता

अपर्णा कृष्णन और दिव्या उमा

फूल लाल, नीले, पीले जैसे तमाम रंगों के होते हैं। क्या आप जानते हैं कि फूल समय के साथ अपना रंग बदलते हैं? या फूल अपने रंगों का उपयोग मकरन्द के लिए मँडराने वाले कीटों से संवाद हेतु करते हैं।

फूल विज्ञापन पटल की तरह कार्य करते हैं। जैसे बड़े-बड़े विज्ञापन बोर्ड सम्भावित ग्राहकों को राह दिखाते हैं कि आकर्षक उपहार पाने के लिए कहाँ जाना है, उसी तरह फूल अपने अन्दर छिपे मकरन्द का विज्ञापन परागणकर्ता के लिए करते हैं (देखें **बॉक्स-1**)। अपने आकार, आकृति, गन्ध, बनावट और रंग के माध्यम से वे कीटों, पक्षियों और यहाँ तक कि स्तनधारियों को मकरन्दी उपहार के लिए आकर्षित करते हैं। यह पारितोषिक पराग को एक फूल से दूसरे फूल पर ले जाने के लिए होता है। इस तरह फूल का परागण हो जाता है और बीज बनने में मदद मिलती है (देखें **चित्र-1**)।

सामान्य फूलधारी पौधों में फूल विशेष रंगों में खिलते हैं जो उनके उम्र दराज़ होने और मुर्झाने पर फीके पड़ जाते हैं। एक मज़ेदार बात यह है कि कुछ पादप प्रजातियों में फूल एक रंग में खिलते हैं और उम्र दराज़ होने के पूर्व एकदम जादुई तरीक़े से दूसरे रंग के हो जाते हैं! ये पौधे रंगों का उपयोग परागणकर्ताओं को सन्देश देने और उनके व्यवहार को प्रभावित कर परागण की सम्भावना को बढ़ाने में करते हैं। 450 से अधिक पादप प्रजातियाँ फूलों का रंग बदलने के लिए मशहूर हैं। इन परिवर्तनों में फूलों के विभिन्न भागों में रंगों का एक विस्तृत वर्णक्रम शामिल होता है।[1] यह परिघटना पादप जगत के कई कुलों की प्रजातियों में देखी गई है और माना जाता है कि विकास के इतिहास के दौरान यह कई बार विकसित हुई है।[2] फूलों का

बॉक्स-1 : फूल की आन्तरिक रचना

प्रत्येक फूल में एक वृन्त या डंठल (पेडीसेल), रंगीन पंखुड़ियाँ, नर (परागकोष) और मादा (अण्डाशय) भाग, और मकरन्द कोशिकाएँ होती हैं जो शर्करायुक्त रस संग्रहित करती हैं।

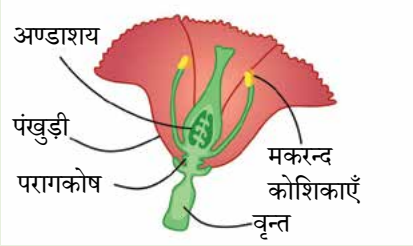

चित्र-1 : एक फूल में मकरन्द कहाँ मौजूद होता है?

Credits: Mariana Ruiz LadyofHats, Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Mature_flower_diagram.svg. License: Public Domain.

चित्र-2 : भारत में रंग बदलते फूलों के कुछ उदाहरण

2क : पीकॉक फूल (*Caesalpinia pulcherrima*)। सजावटी पौधा है जो पीले से लाल हो जाता है।
Credits: Jim Evans, Wikimedia commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Peacock_Flower_or_Pride-of-Barbados_--_Caesalpinia_pulcherrima.jpg. License: CC-BY-SA.

2ख : पहाड़ी अनार के फूल (*Catunaregam spinosa*)। पूरे भारत के पतझड़ी जंगलों में मिलता है इसके फूल सफ़ेद से पीले हो जाते हैं।
Credits: J. M. Garg, Wikimedia commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Catunaregam_spinosa_(Mountain_Pomegranate)_W_IMG_9381.jpg. License: CC-BY.

2ग : चाइनीस हनीसकल के फूल (*Quisqualis indica*)। एशिया की मूल निवासी बेल है इसके फूल जब रात में खिलते हैं तो सफ़ेद होते हैं और अगली सुबह लाल हो जाते हैं।
Credits: Tatiana Gerus from Brisbane, Australia, Wikimedia commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Quisqualis_indica_1.jpg. License: CC-BY-SA.

2घ : वुलीरॉक जैस्मिन (*Androsace lanuginose*)। फूलों का केवल केन्द्रीय भाग पीले से लाल हो जाता है यह पौधा हिमालय का मूल निवासी है।
Credits: David Short, Wikimedia commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Androsace_lanuginosa.jpg. License: CC-BY.

2ड : लेंटाना (*Lantana camara*) प्रजाति के फूल। यह पूरे भारत में पाए जाने वाला एक घुसपैठिया पौधा है। इसके फूल पीले से नारंगी से लाल/ गुलाबी में बदल जाते हैं।
Credits: J. M. Garg, Wikimedia commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Catunaregam_spinosa_(Mountain_Pomegranate)_W_IMG_9381.jpg. License: CC-BY.

बॉक्स-2 : पौधों में रंजक

हम जानते हैं कि पत्तियाँ क्लोरोफिल रंजक के कारण हरी होती हैं। फूलों और फलों में रंग विभिन्न रंजकों द्वारा उत्पन्न होते हैं। गाजर को उसका रंग कैरोटिनॉइड्स वर्ग के रंजकों से मिलता है। जो पीली और नारंगी रंगत प्रदान करते हैं। गुड़हल के फूलों का लाल रंग एंथोसाइन रंजकों से आता है जो नीले, बैंगनी और लाल रंग उत्पन्न करते हैं। चुकन्दर को उसका रंग बीटालेन रंजक से मिलता है जो लाल रंगतें उत्पन्न करते हैं।

रंग बदलने वाली कई प्रजातियाँ भारत में भी मिलती हैं (देखें **चित्र-2**)।

रंग परिवर्तन कैसे होता है?

ऐसा माना जाता है कि फूलों में रंग परिवर्तन रंगद्रव्यों के संचय, ह्रास या संरचना में परिवर्तन के कारण होता है (देखें **बॉक्स-2**)। ऐसा तब भी हो सकता है जब pH या तापमान में परिवर्तन के कारण वर्णक का रंग बदल जाता है।

उदाहरण के लिए, एंथोसायनिन नामक वर्णक अम्लीय कोशिकीय माध्यम में लाल होता है, लेकिन माध्यम के क्षारीय होने पर नीला हो जाता है।

ये शारीरिक परिवर्तन फूल की आयु, उसकी यौन परिपक्वता, या उसके दिन/रात चक्र आदि जैसे कारकों से प्रेरित होते हैं। दिलचस्प बात यह है कि कुछ पौधों में, रंग परिवर्तन तब शुरू होता है और तेज़ हो जाता है जब कोई जीव उसके फूलों का परागण करता है।

फूल रंग क्यों बदलते हैं?

फूलों का रंग बदलने के लिए पौधे को ऊर्जा ख़र्च करनी पड़ती है। पौधों की कई प्रजातियों में फूल का रंग बदलना मकरन्द

और पराग की कमी के कारण भी होता है (देखें **बॉक्स-3**)। अर्थात रंग बदलने के बाद फूल परागण में योगदान के उद्देश्य को पूरा नहीं करते। तो फिर पौधे फूलों का रंग बदलने और बेकार से दिखाई देने वाले इन फूलों को बनाए रखने में ऊर्जा क्यों ख़र्च करते हैं? इस बदलाव का क्या उद्देश्य है?

दूर के परागणकर्ताओं को आकर्षित करने के लिए फूलों के डिस्प्ले की साइज़ महत्त्वपूर्ण होती है जबकि निकट के परागणकर्ताओं को ऐसे डिस्प्ले में फूलों का रंग लुभाता है। वैज्ञानिकों का कहना है कि रंग बदलते फूल दोनों में मददगार हो सकते हैं।

1. दूर का आकर्षण

रंग परिवर्तन के बाद फूलों को बनाए रखना, चाहे प्रजनन के लिहाज़ से उपयोगी न हो, पौधों के फूलों के डिस्प्ले के कुल आकार को बढ़ाता है। लेंटाना कमारा जैसे फूलों में यह विशेष रूप से प्रभावी है जिसमें बहुत ही छोटे-छोटे फूल होते हैं और एक पुष्पक्रम में गुच्छे के रूप में पाए जाते हैं। बड़े आकार के पुष्पीय डिस्प्ले फूलों के संकेत (मेरे पास आओ) को दूर उड़ रहे परागणकर्ता के लिए ज़्यादा दिखने योग्य बना देते हैं। इस तरह ये संकेत ज़्यादा दिखाई पड़ते हैं और ज़्यादा परागणकर्ताओं को आकर्षित करते हैं। वैज्ञानिकों ने दर्शाया है कि परागणकर्ता छोटे डिस्प्ले की अपेक्षा बड़े डिस्प्ले को ज़्यादा पसन्द करते हैं और उन पर आना-जाना भी ज़्यादा करते हैं।[3]

2. पास से लुभाना

आप जब खाने के लिए आम उठाते हैं तो आप अपने अनुभव से जानते हैं कि पीले आम के मीठे होने की सम्भावना ज़्यादा है और हरे के खट्टे होने की। इसी प्रकार रंग बदलने वाले फूलों में विभिन्न रंग अकसर परागणकर्ताओं को मिलने वाले मकरन्द की गुणवत्ता और मात्रा में अन्तर का संकेत देते हैं। परागणकर्ता इस सूचना का उपयोग ऐसे रंगों वाले फूलों के चयन में कर सकते हैं जो अधिक मकरन्द से जुड़े हैं। चूँकि अधिक मकरन्द से जुड़े रंग वाले फूलों में पराग भी ज़्यादा परिपक्व होता है, अतः परागणकर्ताओं का अधिक परिपक्व फूलों पर पहुँचना पौधों के लिए भी लाभप्रद होता है। (देखें **बॉक्स-4**)।

बॉक्स-3 : *चाइनीस हनीसकल* में रंग परिवर्तन

रंग परिवर्तन करने वाले अन्य कई पौधों के विपरीत चायनीस हनीसकल *(Quisqualis indica)* के फूलों में रंग परिवर्तन पराग या मकरन्द की कमी से जुड़ा हुआ नहीं है। यह तो उनकी गन्ध की तीव्रता से सम्बन्धित है। इसके फूल जब रात में खिलते हैं तो सफ़ेद होते हैं और अगली सुबह लाल हो जाते हैं। सफ़ेद फूल ज़्यादा सुगन्धित होते हैं बजाय लाल फूलों के। परन्तु क्यों?

इस मनमोहक पौधे के फूलों में रंग परिवर्तन अलग-अलग समय पर अलग-अलग प्रकार के परागणकर्ताओं को आकर्षित करने में मदद करता है। पतंगे रात्रिचर होते हैं और भोजन पाने के लिए दृश्य-संकेतों की बजाय गन्ध पर ज़्यादा आश्रित होते हैं। इसके अलावा, सफ़ेद रंग के फूल रात में ज़्यादा साफ़ दिखाई देते हैं और उनका पतंगों द्वारा पसन्द किया जाना भी ज्ञात है। दूसरी तरफ मधुमक्खियाँ और तितलियाँ दिनचर होती हैं, भोजन की तलाश में वे दृश्य-संकेतों का ज़्यादा उपयोग करती हैं। अतः दिन के उजाले में अलग नज़र आने वाले लाल रंग की तरफ उनके आकर्षित होने की सम्भावना ज़्यादा होती है।

बॉक्स-4 : *लेंटाना कमारा* के फूलों में रंग परिवर्तन

लेंटाना कमारा की सबसे सामान्य क़िस्म के फूल शुरुआत में पीले होते हैं और दो दिन बाद गुलाबी हो जाते हैं। (*लेंटाना कमारा* के फूलों में रंग परिवर्तन देखने के लिए अपने विद्यार्थियों को गतिविधि शीट-1 का उपयोग करने के लिए कहें।) रंग परिवर्तन में लगभग चार घण्टे लगते हैं और पुष्पक्रम के गुलाबी फूल दो-तीन दिन में मुरझाकर खिर जाते हैं। लेंटाना की सभी क़िस्में ऐसा नाटकीय परिवर्तन नहीं दर्शातीं। कुछ के सभी फूल पीले, कुछ के सफ़ेद जबकि अन्य के हल्के बैंगनी रंग के होते हैं।(देखें **चित्र-3**)

चित्र-3 : *लेंटाना* की विभिन्न क़िस्में : (क) कुछ रंग परिवर्तन नाटकीय होते हैं (ख) जबकि अन्य ज़्यादा जटिल।

Credits: Abitha Chakrapani and Aparna Krishnan. License: CC-BY-NC.

हमने और अन्य शोधार्थियों ने देखा है कि गुलाबी फूलों की तुलना में पीले फूलों में शर्करा की अधिक सान्द्रता वाला ज़्यादा मकरन्द होता है। अपने विद्यार्थियों में विभिन्न रंगों के फूलों में मकरन्द की मात्रा की तुलना करने की उत्सुकता जगाने के लिए गतिविधि शीट-2 का उपयोग करें। हमने यह भी पाया है कि तितलियों और मधुमक्खियों जैसे कीट गुलाबी फूलों की तुलना में पीले फूलों को ज़्यादा पसन्द करते हैं (देखें **चित्र-4**)। इतना ही नहीं कि वे गुलाबी फूलों की तुलना में पीले फूलों से मकरन्द पान अधिक समय तक करते हैं बल्कि पीले फूलों पर ज़्यादा बार जाते हैं। इसका परीक्षण उन्हें स्वयं करने हेतु प्रेरित करें और गतिविधि शीट-3 का उपयोग करें। फूलों के रंग को मकरन्द और पराग की उपलब्धता से जोड़ना रंग परिवर्तन करने वाले कई पौधों की एक सामान्य रणनीति है।

कीट कैसे कुछ फूलों को अन्य से अधिक चुनते हैं?

तितली या मधुमक्खी जैसा कोई परागणकर्ता

चित्र-4 : *लेंटाना* की कुछ सामान्य (common) परागणकर्ता तितलियाँ

(क) कॉमन इमीग्रांट्स

Credits: Charles J Sharp, Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Common_emigrant_(Catopsilia_pomona)_male_crocale_underside.jpg. License: CC-BY-SA.

(ख) कॉमन मोरमोन

Credits: Dr. Raju Kasambe, Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Common_Mormon_Papilio_polytes_from_stichius_Kerala_by_Dr._Raju_Kasambe_DSC_8444_(3).jpg. License: CC-BY-SA.

(ग) पायनियर

Credits: Anagha devi, Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Belenois_aurota-Pioneer_butterfly.jpg. License: CC-BY-SA.

(घ) कॉमन रोज

Credits: Yathin S Krishnappa, Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:2005-common-rose.jpg. License: CC-BY-SA.

(ड) कॉमन क्रो

Credits: © 2010 Jee & Rani Nature Photography, Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Euploea_core_by_kadavoor.jpg. License: CC-BY-SA.

(च) कॉमन लेपर्ड

Credits: Anton Croos, Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Common_Leopard_(Phalanta_phalantha).jpg. License: CC-BY-SA.

बॉक्स-5 : कीटों के जन्मजात पसन्दीदा फूल

एक नवजात कीट की फूलों के लक्षणों, जैसे आकार, रंग, प्रकार और उनकी सममिति के बारे में कुछ अन्तर्निहित पसन्द होती है। यह पसन्द ही उसे भोजन प्राप्त करने के लिए फूलों को चुनने में मददगार होती है। अलबत्ता, ये शुरुआती पसन्द फूलों से मिलने वाले प्रतिफल के आधार पर तेज़ी से बदल सकती है जो स्थान और समय के साथ बदलते रहते हैं।

जब घास के मैदान पर उड़ता है, तो उसका सामना विभिन्न रंगों से होता है। आपके ख़्याल में परागणकर्ता किसी फूल को अपना भोजन पाने के लिए कैसे चुनता है। ख़ासतौर से आपको क्या लगता है कि तितलियाँ और मधुमक्खियाँ कैसे जानती हैं कि लेंटाना के गुलाबी फूलों की बजाय पीले फूलों पर जाना ज़्यादा लाभप्रद है?

वे सीखती हैं। हमारी ही तरह वे फूलों के रंगों को पराग और मकरन्द की मात्रा से जोड़कर देखना सीख सकती हैं। इसे सम्बन्ध जोड़कर सीखना (associative learning) कहा जाता है। कीटों की पसन्द जन्मजात होती है अर्थात अभी-अभी जन्मे अनुभवहीन कीट विभिन्न रंगों के प्रति कुछ झुकाव और पसन्द रखते हैं (देखें **बॉक्स-5**)। लेकिन पर्यावरण में क्या उपलब्ध है, इस आधार पर वे अकसर अपनी स्वाभाविक वृत्ति को बदलना सीख सकते हैं। अतः जो तितली स्वाभाविक रूप से लाल रंग पसन्द करती है वह शुरुआत में लाल फूलों पर ही जाएगी। परन्तु यदि वह पाती है कि लाल की तुलना में पीला फूल ज़्यादा लाभदायक है तो वह पीले को पसन्द करने लगती है और पीले फूलों पर ज़्यादा मँडराने लगती है। सीखने की यह क्षमता कीटों को विभिन्न रंग-रूप के फूलों से ज़्यादा दक्ष तरीक़े से भोजन प्राप्त करने में मदद करती है और फूलों के रंग बदलने वाले पौधे उनकी इस दक्षता का लाभ उठाने के हिसाब

से विकसित हुए हैं ताकि परागणकर्ता को परिपक्व फूलों की ओर भेजा जाए।

चलते-चलते

प्राकृतिक दुनिया मंत्रमुग्ध कर देने वाले आश्चर्यों से भरी पड़ी है। उन्हें खोजने के लिए ज़रूरत मात्र इतनी है कि आप जिज्ञासु हों और अच्छे अवलोकनकर्ता हों। पौधे उनकी स्थिर जीवन शैली के कारण जन्तुओं की तुलना में निष्क्रिय और कम गतिशील समझे जाते हैं, लेकिन यदि आप उन्हें ध्यान से देखें तो पाएँगे कि वे लगातार बदलते रहते हैं और अपने आस-पास की दुनिया से संवाद भी करते हैं। किसी को यह जानने के लिए दूर जाने की ज़रूरत नहीं है। आप पौधों और जन्तुओं के बीच सक्रिय वार्तालाप को सचमुच देख सकते हैं, जैसे अपने आँगन में ही रंग बदलते फूलों और उनके नखरैल परागणकर्ताओं के बीच का संवाद। अगली बार यदि फूल का गुच्छा नज़र आए तो उसे ध्यान से देखना। यदि आप एक ही पौधे पर अलग-अलग रंगों के फूल देखें तो यह पता लगाने के लिए अगले दिन फिर वहाँ ज़रूर जाएँ कि क्या इसके किसी फूल ने रंग बदला है। यदि बदला है तो आपने ऐसा पौधा खोज लिया है जिसके फूल रंग बदलते हैं।

मुख्य बिन्दु

- पौधों की कुछ प्रजातियों के फूल समय के साथ रंग बदलते हैं।
- फूलों के रंग में परिवर्तन रंजकों के संग्रह या ह्रास के परिणाम स्वरूप होता है और फूलों में उम्र के साथ pH में बदलाव, लैंगिक परिपक्वता या दिन-रात के चक्र आदि से प्रेरित होता है।
- रंग बदलने वाले पौधों में रंग बदल चुके पुराने फूल, फूलों के डिस्प्ले का आकार बढ़ाने में मददगार होते हैं और इस प्रकार अधिक परागणकर्ताओं को आकर्षित करते हैं।
- रंग बदलने वाले पौधे फूल के रंग का उपयोग मकरन्द की मात्रा और गुणवत्ता के संकेत के रूप में भी करते हैं।
- हालाँकि कीट परागणकर्ताओं के पास रंगों की पसन्द जन्मजात होती है लेकिन वे आसानी से नए रंग से जुड़े अधिक मकरन्द को पहचानना सीख लेते हैं।
- कीट रंग बदलते फूलों द्वारा उपलब्ध सूचनाओं से फ़ायदा उठा सकते हैं, परागण के लिए ऐसे फूलों को चुनकर जो अधिक मकरन्द से सम्बन्धित होते हैं। पौधों को भी इस चयन से फ़ायदा होता है क्योंकि अधिक मकरन्द वाले फूलों के पास जीवनक्षम पराग भी ज़्यादा होता है।

Note: Source of the image used in the background of the article title: https://www.needpix.com/photo/662473/lantana-butterfly-nature-garden-insect-wings-flowers-floral-yellow. Credits: cosmicart (pixabay.com). License: CC-BY.

References:

1. Weiss, Martha R., and Byron B. Lamont. 'Floral colour change and insect pollination: a dynamic relationship'. Israel Journal of Plant Sciences, 45, no. 2-3 (1997): 185-199.
2. Weiss, Martha R. 'Floral colour changes as cues for pollinators'. Nature, 354 (1991): 227-229.
3. Yan, Juan, Gang Wang, Yi Sui, Menglin Wang, and Ling Zhang. 'Pollinator responses to floral colour change, nectar, and scent promote reproductive fitness in Quisqualis indica (Combretaceae)'. Scientific reports, 6 (2016): 24408.

अपर्णा कृष्णन ने अपनी स्नातक स्तर की पढ़ाई अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय से की है और वर्तमान में बेंगलूरु के राष्ट्रीय जीवविज्ञान केन्द्र से वन्यजीव जीवविज्ञान और संरक्षण में स्नातकोत्तर की पढ़ाई कर रही हैं। पौधे जन्तुओं के साथ अपना जीवन कैसे साझा करते हैं यह देखना और सीखना उन्हें पसन्द है। उनसे aparna.krishnan@apu.edu.in पर सम्पर्क किया जा सकता है।

दिव्या उमा अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय में सहायक प्राध्यापक हैं जहाँ वे जीवविज्ञान पढ़ाती हैं और कीटों और मकड़ियों के व्यवहार पर कार्य करती हैं। बेंगलूरु में अपना काम करने के लिए उन्हें शहर से बाहर जंगलों में जाना पड़ता है। उनसे divya.uma@apu.edu.in पर सम्पर्क किया जा सकता है।

अनुवाद : किशोर पँवार **पुनरीक्षण :** सुशील जोशी **कॉपी एडिटर :** अनुज उपाध्याय

जीवन आपके आँगन में

गतिविधि शीट-1 : लेंटाना में रंग परिवर्तन

उद्देश्य :

लेंटाना कमारा के पुष्पक्रम में रंग परिवर्तन का अध्ययन।

आपको चाहिए :

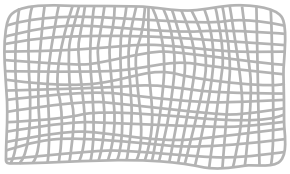

मच्छर जाली/ मलमल का कपड़ा

नोटबुक

पेन्सिल

क्या करना है :

- मच्छर जाली से छोटी-छोटी थैलियाँ बनाएँ। ट्रेसिंग पेपर से भी बना सकते हैं।
- एक अनखिला लेंटाना का पुष्पक्रम खोजें और कलियों को थैली से ढँक दें।
- एक दिन बाद थैली को खोलें और चार खिले हुए फूलों को चुन लें। इनका रंग लिख लें। (सामान्यतः पीला)
- पुष्पक्रम पर फिर से थैली लगा दें।
- पुष्पक्रम को प्रतिदिन एक सप्ताह तक सुबह, दोपहर, और शाम के वक़्त देखें और चुने हुए फूलों के रंग नोट करें।

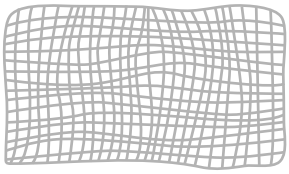

(1)

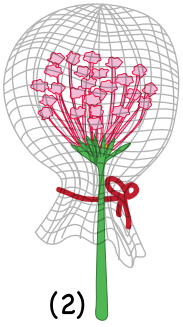

(2)

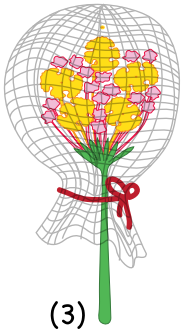

(3)

चर्चा करें :

- क्या पूरे समय एक ही फूल का रंग बदलता है?

- क्या फूल दिन के किसी विशेष समय पर रंग बदलते हैं?

- हमने पुष्पक्रम को थैली से क्यों ढँका, इस बारे में आप क्या सोचते हैं?

रचनाकार :

अपर्णा कृष्णन बेंगलूरु के राष्ट्रीय जीवविज्ञान केन्द्र से वन्यजीव जीवविज्ञान और संरक्षण में स्नातकोत्तर की पढ़ाई कर रही हैं। उनसे aparna.krishnan@apu.edu.in पर सम्पर्क किया जा सकता है।

दिव्या उमा अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय में सहायक प्राध्यापक हैं जहाँ वे जीवविज्ञान पढ़ाती हैं और कीटों और मकड़ियों के व्यवहार पर कार्य करती हैं। उनसे divya.uma@apu.edu.in पर सम्पर्क किया जा सकता है।

अनुवाद : किशोर पँवार **पुनरीक्षण :** सुशील जोशी **कॉपी एडिटर :** अनुज उपाध्याय

जीवन आपके आँगन में

गतिविधि शीट-2 : लेंटाना में मकरन्द

उद्देश्य :

यह देखना कि क्या फूलों का रंग मकरन्द की तुलनात्मक मात्रा में अन्तर का सूचक है।

आपको चाहिए :

फिल्टर पेपर

स्केल

पेन्सिल

नोटबुक

क्या करना है :

- पूरी तरह खिल चुके पुष्पक्रम से कुछ पीले और कुछ गुलाबी फूल तोड़ लें।
- प्रत्येक फूल के नलीनुमा हिस्से को फिल्टर पेपर पर रखकर दबाएँ और बूँद को फिल्टर पेपर पर फैलने दें। उम्मीद है कि फिल्टर पेपर पर द्रव की एक छोटी-सी बूँद मिलेगी – यह मकरन्द हो सकता है।
- पीले और गुलाबी फूलों के साथ यही प्रक्रिया अलग-अलग करें।

(1) निचोड़ें

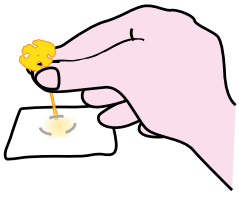

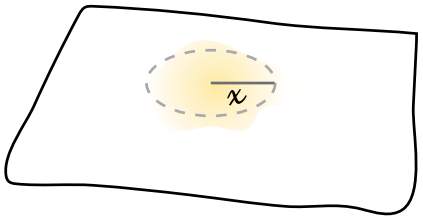

(2) गुलाबी और पीले फूलों के लिए x नाप लें

अवलोकन :

इससे पहले कि मकरन्द की बूँद सूख जाए इसके फैलाव को चिह्नित कर लें और स्केल की मदद से इसका व्यास नापें।

चर्चा करें :

- क्या पीले और गुलाबी फूलों में मकरन्द की मात्रा अलग-अलग है?

- यदि आप मीठे मकरन्द की तलाश कर रहे कीट होते तो आपके लिए किस रंग के फूल पर जाना ज़्यादा फायदेमन्द होता?

रचनाकार :

अपर्णा कृष्णन बेंगलूरु के राष्ट्रीय जीवविज्ञान केन्द्र से वन्यजीव जीवविज्ञान और संरक्षण में स्नातकोत्तर की पढ़ाई कर रही हैं। उनसे aparna.krishnan@apu.edu.in पर सम्पर्क किया जा सकता है।

दिव्या उमा अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय में सहायक प्राध्यापक हैं जहाँ वे जीवविज्ञान पढ़ाती हैं और कीटों और मकड़ियों के व्यवहार पर कार्य करती हैं। उनसे divya.uma@apu.edu.in पर सम्पर्क किया जा सकता है।

अनुवाद : किशोर पँवार **पुनरीक्षण :** सुशील जोशी **कॉपी एडिटर :** अनुज उपाध्याय

जीवन आपके आँगन में

गतिविधि शीट-3 : नखरैल तितलियाँ

उद्देश्य :

यह देखना कि क्या परागणकर्ता की संख्या फूलों के रंग के साथ बदलती है।

आपको चाहिए :

पेन्सिल

नोटबुक

क्या करना है :

- *लेंटाना कमारा* की एक झाड़ी ढूँढ़ें जिस पर ढेर सारे फूल खिल रहे हों।
- धूप खिली हो, ऐसे किसी दिन एक या अधिक पुष्पक्रम के पास इस तरह बैठें कि लेंटाना के फूलों पर से पोषण प्राप्त करने वाली तितलियों को आप देख सकें।
- देखें कि कौन-से फूलों पर तितलियाँ ज़्यादा आ रही हैं।

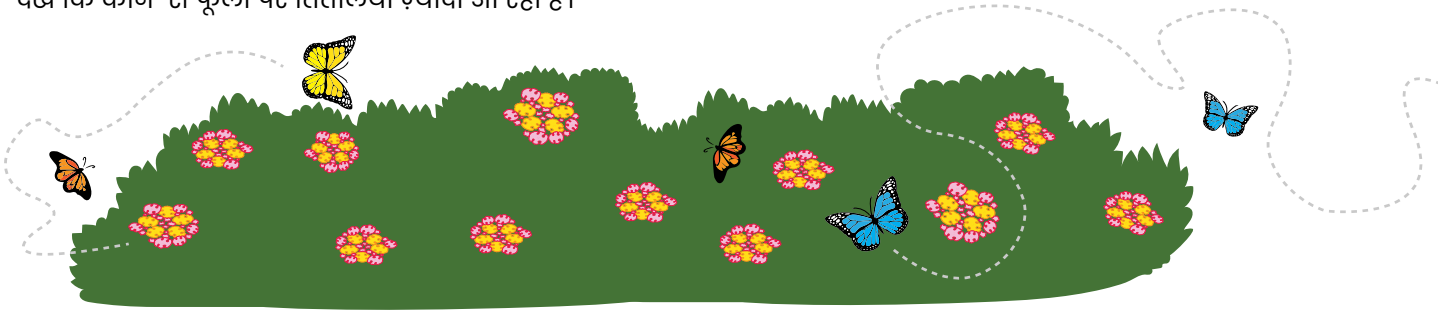

चर्चा करें :

- क्या तितलियाँ पीले या गुलाबी/ लाल फूलों पर बैठती हैं? पीले या गुलाबी/ लाल फूलों पर वे कितनी बार जाती हैं यह संख्या लिख लें।

- आपने इनमें से कौन-से फूलों (पीले/ गुलाबी) से इन्हें ज़्यादा बार पोषण प्राप्त करते देखा।

- इसी गतिविधि को क्षेत्र की अन्य तितलियों के साथ दोहराएँ। क्या आप पाते हैं कि ये एक रंग के फूलों की तुलना में दूसरे रंग को ज़्यादा पसन्द करती हैं? यदि ऐसा है तो आपके विचार से यह क्यों होता है?

रचनाकार :

अपर्णा कृष्णन बेंगलूरु के राष्ट्रीय जीवविज्ञान केन्द्र से वन्यजीव जीवविज्ञान और संरक्षण में स्नातकोत्तर की पढ़ाई कर रही हैं। उनसे aparna.krishnan@apu.edu.in पर सम्पर्क किया जा सकता है।

दिव्या उमा अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय में सहायक प्राध्यापक हैं जहाँ वे जीवविज्ञान पढ़ाती हैं और कीटों और मकड़ियों के व्यवहार पर कार्य करती हैं। उनसे divya.uma@apu.edu.in पर सम्पर्क किया जा सकता है।

अनुवाद : किशोर पँवार **पुनरीक्षण :** सुशील जोशी **कॉपी एडिटर :** अनुज उपाध्याय

अंग-पुनर्जनन की दुनिया

श्रावन्ती उप्पालुरी और हर्षिता कंचमरेड्डी

अधिकतर पौधों और कुछ जीवों में अपने शरीर के खोए हुए भागों के पुनर्जनन की क्षमता होती है। कुछ जीव ही पुनर्जनन क्यों कर पाते हैं जबकि अन्य नहीं?

हम सभी ने असुरों और देवताओं के बीच होने वाली लड़ाई को फिल्मों में देखा है या कहानियों में सुना है, जहाँ उनके हाथ या सिर कट जाते थे, लेकिन ये कटे हुए हाथ और सिर जादू से वापस आ जाते थे। असलियत में, मनुष्यों के पास नए सिर और हाथ फिर से उगाने की क्षमता नहीं है, लेकिन अन्य कई जीवों में यह क्षमता पाई जाती है। शरीर के क्षतिग्रस्त या खोए हुए भाग को फिर से उगाने की क्षमता **पुनर्जनन** कहलाती है।

लगभग सभी पुनर्जनन स्टेम कोशिकाओं की उपस्थिति की वजह से होते हैं। स्टेम कोशिकाओं में यह क्षमता होती है कि वे शरीर की 'किसी' भी प्रकार की कोशिका में परिवर्तित हो सकती हैं, विभेदीकरण की यह प्रक्रिया कोशिकाओं को विशिष्ट कार्य सम्पादित करने की क़ाबिलियत देती है। उदाहरण के लिए, हमारे यकृत की कोशिकाएँ (hepatocytes), हमारे हृदय की कोशिकाओं (cardiomyocytes) से भिन्न होती हैं। हृदय की कोशिकाओं का कार्य यकृत की कोशिकाएँ नहीं कर सकतीं और न ही यकृत की कोशिकाएँ हृदय की कोशिकाओं का। इसलिए, जैसा कि आप समझ ही गए होंगे, यकृत के पुनर्जनन के लिए ऐसी स्टेम कोशिकाएँ चाहिए जो विभेदित होकर हिपेटोसाइट्स बना सकें (**चित्र-1** देखें)।

पुनर्जनन कई स्तरों पर हो सकता है – सूक्ष्म कोशिकाओं से लेकर स्थूल शरीर तक। उदाहरण के तौर पर हम लगभग 20 करोड़ त्वचा कोशिकाएँ हर घण्टे गँवाते हैं, किन्तु नई कोशिकाएँ लगातार इनकी जगह लेती रहती हैं।[1] यदि दीवार पर चलने वाली छिपकली किसी हादसे में अपनी पूँछ गँवा देती है तो वह उसे पुनर्जनन से पा सकती है। इसका एक सम्बन्धी एक्सोलोटल न केवल पूँछ बल्कि नई बाँहों, रेटिना और यहाँ तक कि हृदय और मस्तिष्क के भागों का भी पुनर्जनन कर सकता है। सामान्य केंचुआ जिसे हम बारिश के बाद मिट्टी से निकलता हुआ देखते हैं, उसमें भी पुनर्जनन की कुछ क्षमता होती है। ऐसे अन्य उदाहरणों (देखें **उदाहरण-1 से 5**) से यह स्पष्ट होता है कि सभी जीवों में पुनर्जनन की क्षमता एक समान नहीं होती है।

मनुष्यों में पुनर्जनन

पहली नज़र में तो ऐसा लगता है कि मनुष्यों में पुनर्जनन की क्षमता पौधों और उभयचरों की तरह नहीं होती है। किन्तु ध्यान रहे कि पुनर्जनन की परिभाषा काफ़ी व्यापक हो सकती है।

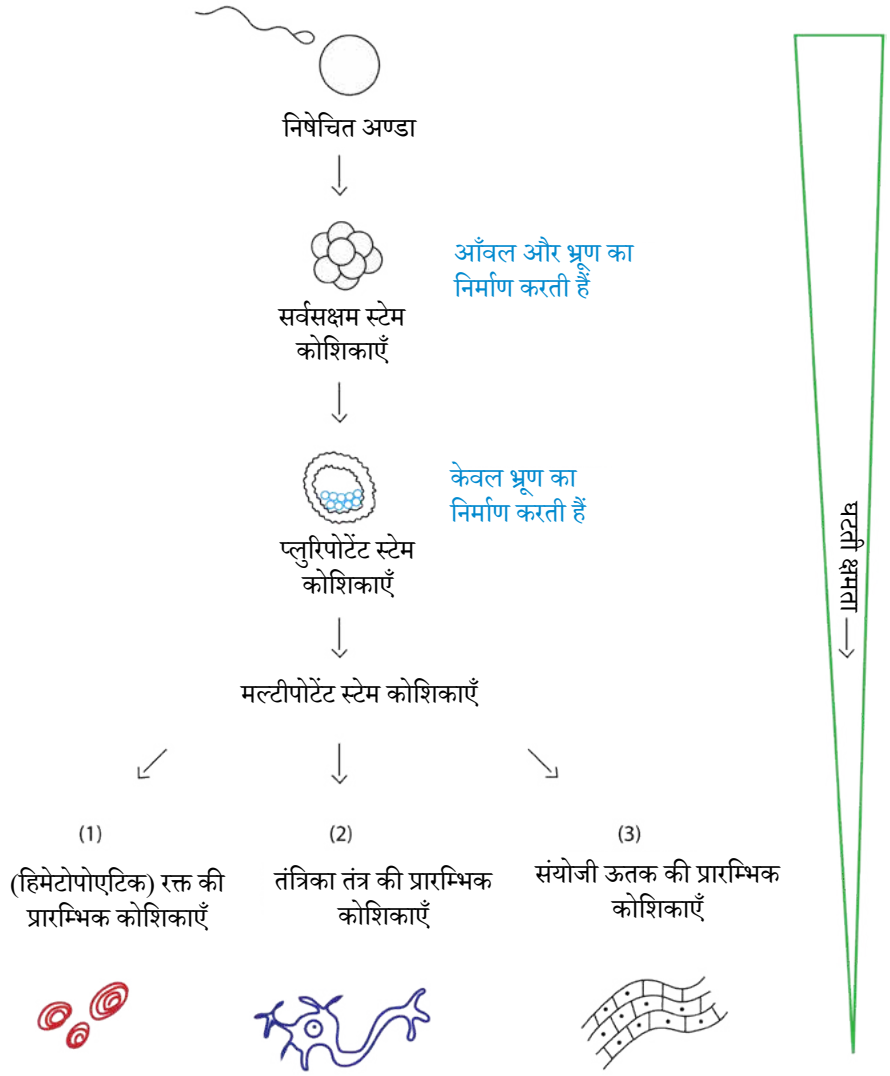

चित्र-1 : स्टेम कोशिकाएँ अन्य कोशिकाओं में विभेदित होती हैं। निषेचित अण्डा विभाजन करके सर्वसक्षम कोशिकाओं का एक गुच्छा बनाता है। इस गुच्छे की प्रत्येक कोशिका में मनुष्य शरीर की अन्य सभी प्रकार की कोशिकाओं को बनाने के साथ-साथ ही भ्रूणेतर कोशिकाएँ यानी आँवल बनाने की भी क्षमता होती है। कुछ और कोशिकीय विभाजनों के बाद ये सर्वसक्षम कोशिकाएँ प्लुरिपोटेंट कोशिकाओं में विभेदित हो जाती हैं। प्लुरिपोटेंट भ्रूणीय कोशिकाएँ मनुष्य के शरीर में आँवल की कोशिकाओं को छोड़कर किसी भी कोशिका में विभेदित हो सकती हैं। प्रत्येक प्लुरिपोटेंट भ्रूणीय कोशिका विभाजित होती है और मल्टीपोटेंट कोशिकाओं में विभेदित हो जाती हैं। मल्टीपोटेंट स्टेम कोशिकाएँ किसी ख़ास वंश की कुछ सीमित प्रकार की कोशिकाओं को जन्म दे सकती हैं। अलग–अलग मल्टीपोटेंट कोशिकाएँ विभाजित होकर रक्त कोशिकाओं, तंत्रिका कोशिकाओं, पेशीय कोशिकाओं आदि में विभेदित होती हैं। इनमें से प्रत्येक अपने ही प्रकार की कोशिकाओं को जन्म दे सकती है।

Credits: Sravanti Uppaluri & Harshitha Kanchamreddy. License: CC-BY-NC.

मनुष्यों में पुनर्जनन का सबसे आम उदाहरण तो त्वचा का है। मनुष्यों में त्वचा कोशिकाओं की जगह लगातार नई कोशिकाएँ लेती रहती हैं। हमें कई बार चोट लगती है और वह इतनी अच्छी तरह ठीक हो जाती है कि उसका कोई निशान भी नहीं रहता। दूसरी ओर, मनुष्यों में यकृत अपने भार के एक चौथाई भाग से भी अपना पूरा आकार व कार्य बहाल कर सकता है। वास्तव में हमारे शरीर में इस अंग की पुनर्जनन की क्षमता सबसे ज़्यादा होती है।

इस अंग में यह क्षमता क्यों बची रही है, जबकि अन्य अंगों में नहीं। इस सवाल का हमारे पास पूरा-पूरा जवाब तो नहीं है, लेकिन यकृत के पुनर्जनन की क्षमता को उद्विकास के परिप्रेक्ष्य में रखकर कुछ अन्दाज़ा लगा सकते हैं।

यकृत हमारे मस्तिष्क और अन्य अंगों के कार्य करने के लिए आवश्यक है। यह रक्त में ग्लूकोस, लिपिड और अमोनिया के स्तर को बनाकर रखता है और विषैले पदार्थों को बाहर निकालने में मदद करता है। यह छोटी आँत, स्प्लीन और पैंक्रियास से बाहर निकलने वाले परिसंचरण की सभी प्रक्रियाओं को करता है। इसके फलस्वरूप यकृत में विषैले रसायनों और बीमारियों से नुक़सान होने का ख़तरा रहता है। यदि इस नुक़सान को अनदेखा किया जाए तो यह यकृत के काम को पूरी तरह ठप्प कर देगा। आश्चर्य की बात नहीं है कि अधिकतर कशेरुकी जन्तुओं में यकृत अपनी पुनर्जनन की क्षमता को बनाए रखता है – यह ऐसी क्षमता है जो जीवों के उद्विकास के समय पर प्रतिकूल परिस्थितियों के लिए चुनी गई थी।[2]

हालाँकि मनुष्य एक्सोलोटल की पुनर्जनन क्षमता की बराबरी नहीं कर सकते। लेकिन जो जीन एक्सोलोटल को उसके हृदय और मस्तिष्क की पेशीय कोशिकाओं के पुनर्जनन की क्षमता प्रदान करते हैं वही जीन मनुष्य में उँगली के सिरों के पुनर्जनन को भी सम्भव बनाते हैं। जी हाँ आपने बिल्कुल सही पढ़ा है – एक निश्चित आयु तक मनुष्य की कटी हुई उँगली के सिरे कुछ हद तक फिर से बन सकते हैं। चूहों में इसी प्रकार की क्षमता नाख़ूनों के नीचे स्टेम कोशिकाओं पर निर्भर करती है। चूँकि हम पुनर्जनन के कई जीन चूहों के साथ साझा करते है इसलिए सम्भवतः ये मनुष्यों में भी पुनर्जनन उसी क्रियाविधि से होता होगा।[3]

चलते-चलते

अंग-पुनर्जनन का अध्ययन करने के लिए आमतौर पर किसी जीव के शरीर के किसी भाग (कोशिका, ऊतक, भुजा या अंग आदि) को काटकर अलग कर दिया जाता है और फिर उस हिस्से में होने वाली प्रक्रियाओं का

बड़े सवाल

उदाहरण-1 : प्लेनेरिया में पुनर्जनन

प्लेनेरिया पुनर्जनन क्षमता से युक्त चपटे कृमियों के एक समूह का सामान्य नाम है। उदाहरण के लिए, *श्मिडिटिया मेडिटेरेनिया (Schm ld ltea med lterran la)* एक चपटा कृमि है जो भूमध्य सागर के पास पाया जाता है। वैज्ञानिक सामान्यतया पुनर्जनन के अध्ययन के लिए इसका उपयोग करते हैं।

इसके भूरे, काग़ज़ जैसे पतले शरीर में, लगभग मनुष्यों जैसे ही तंत्रिका तंत्र, पाचन तंत्र और प्रजनन तंत्र होते हैं। मगर अन्य जीवों के विपरीत अगर प्लेनेरिया को टुकड़ों में काट दिया जाए तो वह न केवल ज़िन्दा रहता है बल्कि उसका हर एक टुकड़ा एक नया प्लेनेरिया बना लेता है। इस तरह से पैदा हुए प्लेनेरिया, मूल प्लेनेरिया की सत्य प्रतिलिपि होते हैं। इससे भी ज़्यादा आश्चर्य की बात यह है कि प्लेनेरिया का 1/279 वाँ अंश भी पूरा नया प्लेनेरिया बना सकता है।

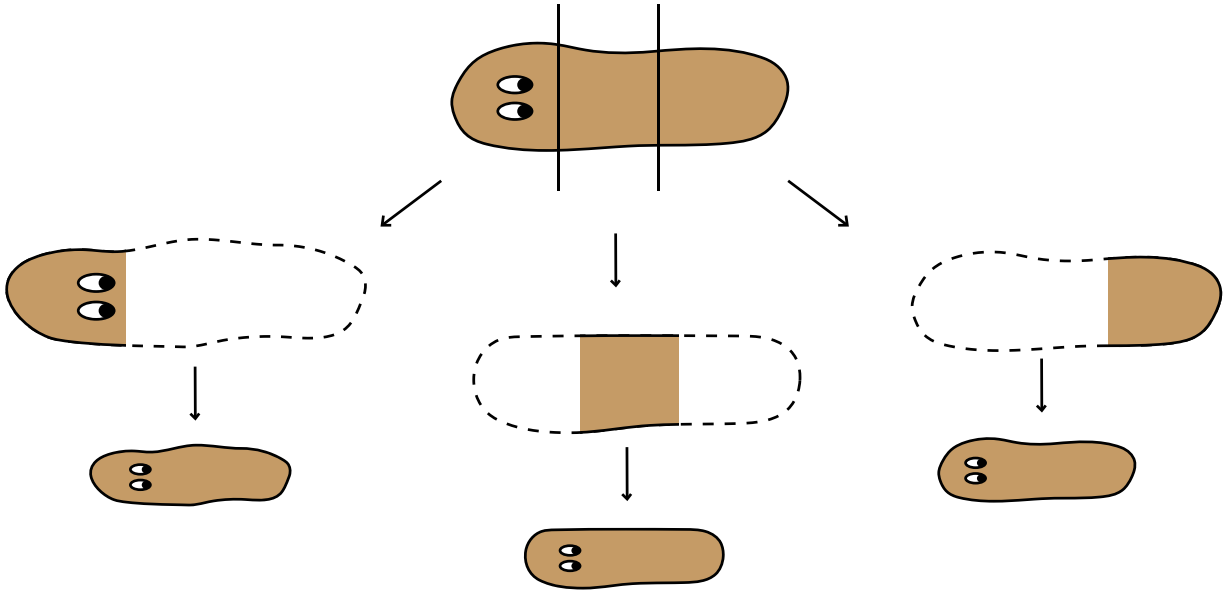

प्लेनेरिया बहुत ही छोटे-छोटे कटे हुए टुकड़ों से पुनर्जनन कर सकता है।

Credits: Sravanti Uppaluri & Harshitha Kanchamreddy. License: CC-BY-NC.

प्लेनेरिया की इस असाधारण पुनर्जनन क्षमता के लिए उत्तरदायी स्टेम कोशिकाओं को निओब्लास्ट कहते हैं। जब किसी चपटे कृमि को काटा जाता है, तो निओब्लास्ट कोशिकाएँ कटे हुए सिरे की तरफ़ जाती हैं, और विभेदित होकर कटे हुए प्लेनेरिया का गँवाया गया भाग बनाती हैं। लेकिन निओब्लास्ट कोशिकाओं को यह कैसे पता चलता है कि प्लेनेरिया का कितना भाग कटा है? उन्हें यह कैसे पता चलता है कि कटा हुआ भाग सिर है या पूँछ? अभी भी हम इन प्रश्नों के उत्तरों से बहुत दूर हैं।

Read more here: Playing with wormies (2011). Baldscientist. URL: https://baldscientist.wordpress.com/2011/09/23/playing-with-wormies/.

श्रावन्ती उप्पालुरी अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय में स्नातक कार्यक्रम में जीवविज्ञान पढ़ाती हैं। उनकी रुचि विकासात्मक जीवविज्ञान और पुनर्जनन करने वाले सभी जीवों में है। उनसे sravanti.uppaluri@apu.edu.in पर सम्पर्क किया जा सकता है।

हर्षिता कंचमरेड्डी अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय की पूर्व छात्रा हैं और वर्तमान में मणिपाल विश्वविद्यालय से स्नातकोत्तर की पढ़ाई कर रही हैं। उन्हें विज्ञान के बारे में पढ़ना और लिखना बहुत पसन्द है। हर्षिता से sreeharshitha.kanchamreddy@apu.edu.in पर सम्पर्क किया जा सकता है।

अनुवाद : अर्पिता पाण्डेय **पुनरीक्षण :** सुशील जोशी **कॉपी एडिटर :** अनुज उपाध्याय

बड़े सवाल

उदाहरण-2 : *स्टेन्टर कोरुलिअस* (Stentor coeruleus) में पुनर्जनन

स्टेन्टर कोरुलिअस को 18वीं शताब्दी में एक प्रकृतिविद अब्राहम ट्रेमब्ले ने खोजा था। यह एक बहुत बड़ा एक-कोशिकीय जीव है, जिसमें पुनर्जनन की असाधारण क्षमता होती है। एक कोशिकीय जीवों के लिहाज़ से कोरुलिअस काफ़ी बड़ा होता है इसे हम सीधे आँखों से देख सकते हैं! इस नीले-हरे जीव की लम्बाई लगभग 1-2 मिमी है और आकार शहनाई या नादस्वरम जैसा होता है।

स्टेन्टर कोरुलिअस एक बड़ा एक-कोशिकीय जीव है।

Credits: Micropix, Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Stentor_coeruleus_1.JPG. License: CC-BY-SA.

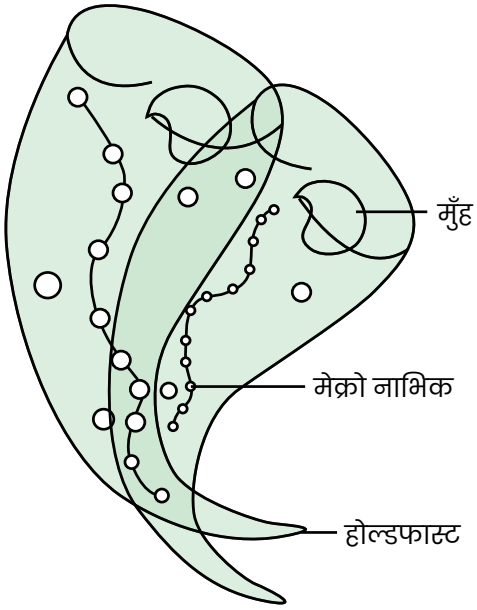

स्टेन्टर का कोई भी टुकड़ा जिसमें नाभिक और कोशिका झिल्ली का भाग उपस्थित है पुनर्जनन करके पूरा नया जीव बनाने की क्षमता रखता है।

Credits: Sravanti Uppaluri & Harshitha Kanchamreddy. License: CC-BY-NC.

स्टेन्टर के चौड़े सिरे पर मुँह होता है जिसमें कशाभ (महीन धागों जैसी रचनाएँ) होते हैं, जो पानी को इसके शरीर के अन्दर पहुँचाते हैं। यह निगले हुए पानी में उपस्थित बैक्टीरिया, शैवाल और अन्य छोटे कशाभी जन्तुओं को खाता है। *स्टेन्टर* का संकरा सिरा इसे चट्टान या पौधों से चिपकने में मदद करता है। स्टेन्टर का कोई भी टुकड़ा जिसमें नाभिक और कोशिका झिल्ली का भाग उपस्थित है पुनर्जनन करके पूरा नया जीव बनाने की क्षमता रखता है।

जब हम किसी प्लेनेरिया को काटते हैं तब हम एक बहु-कोशिकीय जीव को काट रहे हैं, इसके विपरीत जब हम स्टेन्टर को काटते हैं तो हम एक एक-कोशिकीय जीव को काटते हैं जिसकी अन्दरूनी संरचना लगभग टमाटर जैसी होती है। काटे जाने पर स्टेन्टर की कोशिका किस तरह अपनी संरचना को बरक़रार रखती है? इस प्रक्रिया में कोशिका के सारे अवयव रिसकर बाहर पानी में क्यों नहीं आ जाते? ये कुछ ऐसे सवाल हैं जिनके जवाब अभी तक हमारे पास नहीं हैं।

Read more here: Slabodnick, M. M. & Marshall, W. F. Stentor coeruleus. Curr. Biol. CB 24, R783-R784 (2014). URL: https://www.ncbi.nlm.nih.gov/pmc/articles/PMC5036449/.

श्रावन्ती उप्पालुरी अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय में स्नातक कार्यक्रम में जीवविज्ञान पढ़ाती हैं। उनकी रुचि विकासात्मक जीवविज्ञान और पुनर्जनन करने वाले सभी जीवों में है। उनसे sravanti.uppaluri@apu.edu.in पर सम्पर्क किया जा सकता है।

हर्षिता कंचमरेड्डी अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय की पूर्व छात्रा हैं और वर्तमान में मणिपाल विश्वविद्यालय से स्नातकोत्तर की पढ़ाई कर रही हैं। उन्हें विज्ञान के बारे में पढ़ना और लिखना बहुत पसन्द है। हर्षिता से sreeharshitha.kanchamreddy@apu.edu.in पर सम्पर्क किया जा सकता है।

i wonder... Rediscovering school science

Azim Premji University

अनुवाद : अर्पिता पाण्डेय **पुनरीक्षण :** सुशील जोशी **कॉपी एडिटर :** अनुज उपाध्याय

बड़े सवाल

उदाहरण-3 : क्या हाइड्रा आपके आस-पास रहता है?

बहु-कोशिकीय हाइड्रा में भी पुनर्जनन की असाधारण क्षमता होती है, जिसे उसके अमरत्व का आधार माना जाता है! हाइड्रा सामान्यतया मीठे पानी के पोखरों में पाया जाता है। अगर आप किसी धीमे बहते हुए नाले या साफ़ पोखर के पास रहते हैं और आपके पास एक आवर्धक लैंस और थोड़ा-सा धैर्य है, तो इन जीवों को ढूँढ़ना इतना मुश्किल भी नहीं होगा (कुछ तो लगभग 1 सेमी के भी होते हैं)। इन्हें पत्तियों या अन्य वनस्पतियों की निचली सतह पर चिपके हुए आसानी से देखा जा सकता है। आप भी ढूँढ़ें – यह शिक्षकों और बच्चों दोनों के लिए दिलचस्प मुहिम होती है। अगर आपको हाइड्रा मिल जाते हैं तो उन्हें पोखर के साफ़ पानी में किसी साफ़ काँच या प्लास्टिक के डिब्बे में रख लें।

बहु-कोशिकीय हाइड्रा पुनर्जनन की असाधारण क्षमता दर्शाता है।

Credits: Neeharika Verma

उस्तरे या ब्लेड का इस्तेमाल करके एक हाइड्रा को लम्बाई में अलग-अलग जगह पर काटें। इन कटे हुए भागों को अलग-अलग काँच या प्लास्टिक के पात्र में साफ़ पोखर के पानी में एक ठण्डी (18-24°C) जगह पर रख दें। हाइड्रा के इन टुकड़ों का हर 24 घण्टे में अवलोकन करें। और निम्न बातों को नोट करें –

- क्या उनमें से कुछ भागों से नए हाइड्रा विकसित हो गए हैं और अन्य से नहीं?
- क्या सभी भाग समान दर से पुनर्जनन कर रहे हैं? ऐसा क्यों हुआ होगा?

श्रावन्ती उप्पालुरी अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय में स्नातक कार्यक्रम में जीवविज्ञान पढ़ाती हैं। उनकी रुचि विकासात्मक जीवविज्ञान और पुनर्जनन करने वाले सभी जीवों में है। उनसे sravanti.uppaluri@apu.edu.in पर सम्पर्क किया जा सकता है।

हर्षिता कंचमरेड्डी अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय की पूर्व छात्रा हैं और वर्तमान में मणिपाल विश्वविद्यालय से स्नातकोत्तर की पढ़ाई कर रही हैं। उन्हें विज्ञान के बारे में पढ़ना और लिखना बहुत पसन्द है। हर्षिता से sreeharshitha.kanchamreddy@apu.edu.in पर सम्पर्क किया जा सकता है।

अनुवाद : अर्पिता पाण्डेय **पुनरीक्षण :** सुशील जोशी **कॉपी एडिटर :** अनुज उपाध्याय

बड़े सवाल

उदाहरण-4 : एक्सोलोटल *एबिस्टोमा मैक्सिकेनम* (*Abystoma mex Icanum*) में पुनर्जनन

एक्सोलोटल एक सैलेमेंडर है जो घरेलू छिपकली जैसा दिखता है, लेकिन वास्तव में यह एक उभयचर जन्तु है जो पूरा जीवन पानी में बिताता है। हमारे जाने-पहचाने अधिकांश मेंढ़कों के विपरीत एक्सोलोटल हमेशा लार्वल अवस्था (टैडपोल) में ही बना रहता है और कभी भी कायान्तरण नहीं करता है। एक्सोलोटल अपने शरीर के कई भागों को पुनर्विकसित कर सकता है, जैसे भुजाएँ, हृदय, मेरुरज्जू और यहाँ तक कि मस्तिष्क के कुछ भाग भी। और इस सबमें चोट का कोई निशान नहीं बचता। यह प्रत्यारोपित अंग (आँखों से लेकर भुजाओं तक) ग्रहण कर सकता है, उन्हें अस्वीकार नहीं करता। सोचिए अगर मनुष्यों में इसी तरह मेरुरज्जू की चोटों से उबरने की क्षमता होती! एक्सोलोटल में आजीवन लार्वल अवस्था इसकी पुनर्जनन की अद्भुत क्षमता का एक कारण हो सकता है। वास्तव में ये कभी वयस्क होते ही नहीं। मनुष्यों सहित कई प्रजातियों में भी तो पुनर्जनन की क्षमता वृद्धि और विकास की शुरुआती अवस्थाओं में ज़्यादा प्रबल होती है और समय के साथ धीरे-धीरे कम होती जाती है।

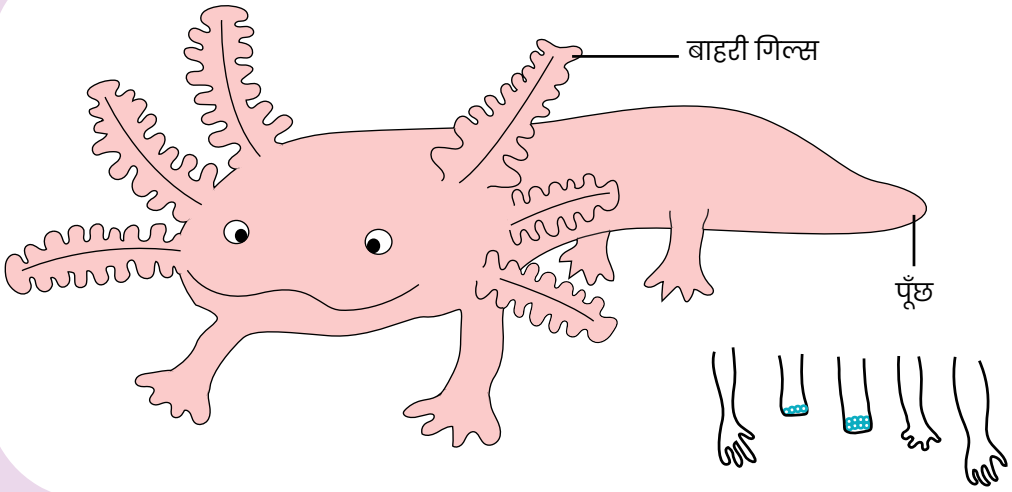

एक्सोलोटल का चित्र, इसमें बाहरी गलफड़े दिखाए गए हैं। जैसे-जैसे कोशिकाएँ विभाजित होती हैं (नीले रंग में दिखाई गई हैं) वैसे-वैसे ही भुजा का स्वरूप बनने लगता है और बाँह की आकृति फिर से अपना वास्तविक रूप ले लेती है।

Image credits: Sravanti Uppaluri & Harshitha Kanchamreddy. License: CC-BY-NC.

मेक्सिको शहर के आस-पास पोखरों में पाया जाने वाला एक्सोलोटल अपने प्राकृतिक आवास में काफ़ी जोखिमग्रस्त है। यह ज़्यादातर शहरीकरण के कारण हुए प्रदूषण से हुआ है। मज़े की बात है कि चूँकि एक्सोलोटल को बन्दी अवस्था में पाला जा सकता है, इसलिए इन्हें कई जगहों पर घरों में पालतू जन्तुओं की तरह या प्रयोगशालाओं में प्रारूपिक जीव की तरह पाला जाता है। लेकिन प्राकृतिक वातावरण में अध्ययन नहीं कर पाने की वजह से हमें यह जानकारी नहीं मिल पाती है कि इसके अद्भुत गुणों में उद्विकास की क्या भूमिका है? कई वैज्ञानिक एक्सोलोटल की पुनर्जनन क्षमता के जेनेटिक आधार की जाँच कर रहे हैं। एक और दिलचस्प बात यह है कि एक्सोलोटल का जीनोम मनुष्य के जीनोम से बहुत बड़ा है!

Read more here: (1) Biology's beloved amphibian — the axolotl — is racing towards extinction. URL: https://www.nature.com/articles/d41586-017-05921-w.
(2) Regeneration: The axolotl story. Scientific American Blog Network. URL: https://blogs.scientificamerican.com/guest-blog/regeneration-the-axolotl-story/.

श्रावन्ती उप्पालुरी अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय में स्नातक कार्यक्रम में जीवविज्ञान पढ़ाती हैं। उनकी रुचि विकासात्मक जीवविज्ञान और पुनर्जनन करने वाले सभी जीवों में है। उनसे sravanti.uppaluri@apu.edu.in पर सम्पर्क किया जा सकता है।

हर्षिता कंचमरेड्डी अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय की पूर्व छात्रा हैं और वर्तमान में मणिपाल विश्वविद्यालय से स्नातकोत्तर की पढ़ाई कर रही हैं। उन्हें विज्ञान के बारे में पढ़ना और लिखना बहुत पसन्द है। हर्षिता से sreeharshitha.kanchamreddy@apu.edu.in पर सम्पर्क किया जा सकता है।

i wonder... Rediscovering school science

Azim Premji University

अनुवाद : अर्पिता पाण्डेय **पुनरीक्षण :** सुशील जोशी **कॉपी एडिटर :** अनुज उपाध्याय

बड़े सवाल
उदाहरण-5 : पौधों में पुनर्जनन

यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगी कि जन्तुओं की अपेक्षा पौधों में पुनर्जनन काफ़ी बहुमुखी होता है। दरअसल, 1958 में कॉर्नेल विश्वविद्यालय के फ्रेडरिक स्टुवार्ड ने दर्शाया था कि गाजर के फ्लोएम से ली गई एक कोशिका से गाजर का पूरा पौधा तैयार किया जा सकता है। यह तो पुनर्जनन का एक अतिशय उदाहरण है, लेकिन हम साधारणतया भी देखते हैं कि पौधों की कलमें नमी वाली जगह पर पड़ी रहें तो उनमें से जड़ और तना निकलने लगता है।

पुनर्जनन की प्रक्रिया को अकसर इस रूप में देखा जाता है कि जीव का डील-डौल तय करने के लिए उनमें एक निश्चित निर्देशों का समूह होता है (इसे शरीर का ख़ाका कहते हैं)। इसलिए यदि किसी जीव में शरीर का कोई भाग खो जाता है तो पुनर्जनन में होना यह चाहिए कि उस भाग के आकार, आकृति और कार्य फिर से बहाल किए जा सकें। यह परिभाषा पादप जगत के लिए उतनी सही नहीं है क्योंकि पौधों का कोई निश्चित शरीर का ख़ाका नहीं होता।

यह हम सभी पौधों के साथ अपने रोज़मर्रा के अनुभवों में देखते हैं। किसी पौधे से पत्ती को तोड़िए वह किसी जन्तु की बाँह की तरह पुनर्स्थापित नहीं होती। किन्तु पौधा जीवित रहेगा, उसकी भरपाई कर लेगा और एक शारीरिक ख़ाके के साथ अनुकूलित हो जाएगा। सबसे रोचक बात तो यह है कि ज़्यादातर पौधों की पत्ती से जड़ और तना निकलने लगते हैं और पूरा नया पौधा बन जाता है, बिल्कुल प्लेनेरिया के पुनर्जनन के समान।

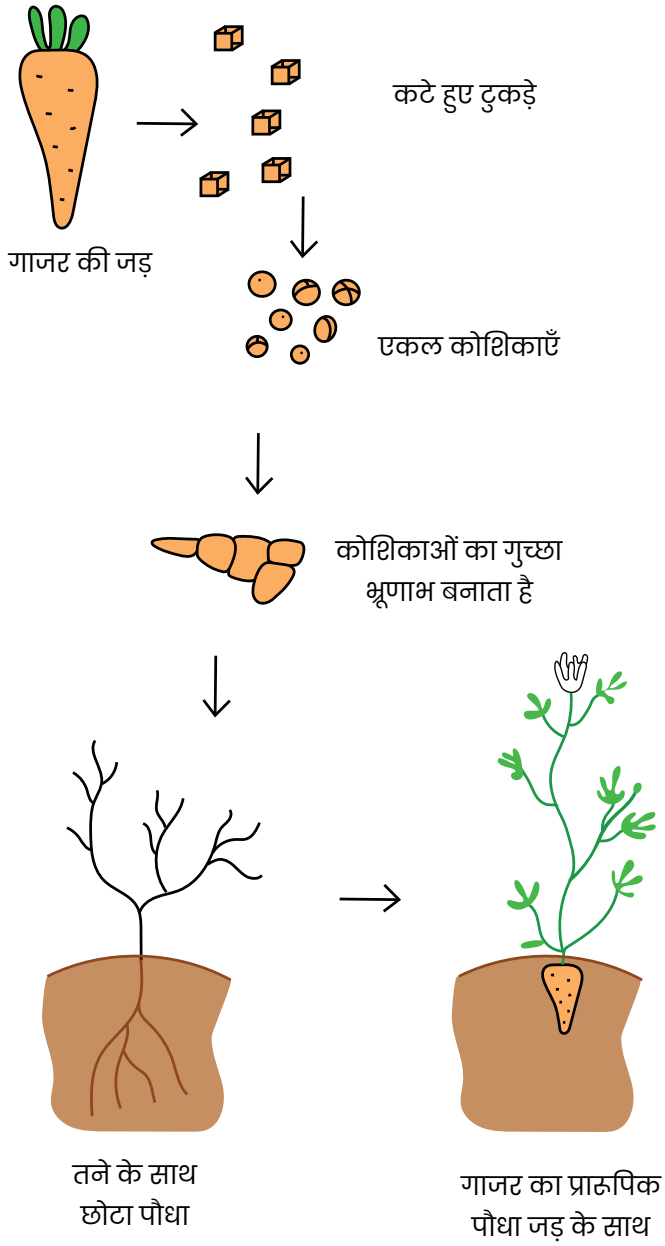

एक पूरा गाजर का पौधा फ्लोएम से अलग की गई कोशिका से बन सकता है।

Credits: Sravanti Uppaluri & Harshitha Kanchamreddy. License: CC-BY-NC.

PTO

इसे करके देखें

अधिकतर पौधों में ऐसा प्रायोगिक तंत्र उपस्थित होता है जिसका उपयोग पुनर्जनन के पहलुओं को देखने के लिए किया जा सकता है। विद्यार्थी भी कर सकते हैं। इनमें कुछ सामान्य घरेलू पौधे जैसे ग्वारपाठा *(Aloe barbadensis)*, मनी प्लांट *(Ep lpremnum aureum)* के अलावा कुछ बाहरी झाड़ियाँ जैसे लैंटाना *(Lantana camara)* और छुईमुई या लाजवन्ती *(M lmosa pudica)* शामिल हैं।

यह देखने के लिए कि इन पौधों के कौन-से भाग पुनर्जनन के द्वारा जड़ और तना बना सकते हैं, विद्यार्थियों को इनमें से किसी एक पौधे का अध्ययन करने को प्रेरित करें। अच्छा होगा यदि कुछ पौधों को तुलना के पौधों की तरह व कुछ को प्रयोग के लिए उपयोग किया जाए। विद्यार्थी पौधों की सारी या कुछ पत्तियाँ, जड़ें, तनों के सिरे, शाखाएँ या अन्य भाग किसी तेज़ धार वाले उपकरण से व्यवस्थित रूप से काट सकते हैं। विद्यार्थियों से यह रिकॉर्ड रखने को कहें कि प्रत्येक प्रकार के अंग-भंग के बाद पौधों में कितने पौधे जीवित रहे और कटे हुए अंग को बहाल कर सके।

इसी प्रकार से, पुनर्जनन पर पर्यावरण के कारकों के प्रभावों को देखने के लिए इसी प्रयोग को तापमान, मिट्टी में नमी की अलग-अलग मात्रा की परिस्थितियों में किया जा सकता है।

इन प्रयोगों का अभ्यास विद्यार्थियों को निम्न बातों को समझने के लिए प्रेरित करेगा –

- क्या सभी पौधों में पुनर्जनन की क्षमता समान होती है?
- किस कटे हुए भाग को पौधों में फिर से बनाना आसान होता है?
- पुनर्जनन के लिए कौन-सी पर्यावरणीय परिस्थितियाँ ज़रूरी होती हैं?

Read more here: Steward Experiment and Application of Totipotency (2014). Biology Discussion. URL: http://www.biologydiscussion.com/plants/steward-experiment-and-application-of-totipotency/5832.

श्रावन्ती उप्पालुरी अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय में स्नातक कार्यक्रम में जीवविज्ञान पढ़ाती हैं। उनकी रुचि विकासात्मक जीवविज्ञान और पुनर्जनन करने वाले सभी जीवों में है। उनसे sravanti.uppaluri@apu.edu.in पर सम्पर्क किया जा सकता है।

हर्षिता कंचमरेड्डी अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय की पूर्व छात्रा हैं और वर्तमान में मणिपाल विश्वविद्यालय से स्नातकोत्तर की पढ़ाई कर रही हैं। उन्हें विज्ञान के बारे में पढ़ना और लिखना बहुत पसन्द है। हर्षिता से sreeharshitha.kanchamreddy@apu.edu.in पर सम्पर्क किया जा सकता है।

i wonder... Rediscovering school science

Azim Premji University

अनुवाद : अर्पिता पाण्डेय **पुनरीक्षण :** सुशील जोशी **कॉपी एडिटर :** अनुज उपाध्याय

अवलोकन किया जाता है। जैसे-जैसे हम प्रयोगशाला में उत्कृष्ट तकनीकें बना रहे हैं, पुनर्जनन की प्रक्रिया में शामिल जीन्स और प्रोटीन्स को पहचानने की शुरुआत हो रही है।

अंग-पुनर्जनन एक विस्मयकारी घटना तो है ही, प्रकृति में अंग-पुनर्जनन को समझना व्यावहारिक रूप से उपयोगी हो सकता है क्योंकि –

1. मनुष्य दुर्घटनाओं, संक्रमणों या जन्मजात विकृति की वजह से अंग गँवा देते हैं। जन्तुओं और पादपों में पुनर्जनन की प्रक्रिया को जीन, कोशिका और अंगों के स्तर पर समझने से चिकित्सकीय अनुप्रयोगों के लिए उपयोगी समझ मिल सकती है।
2. पुनर्जनन और विभाजित होते भ्रूण में ज़्यादा फ़र्क नहीं होता है – दोनों ही प्रक्रियाओं में कोशिकाओं के विभाजन से क्रियाशील अंगों का निर्माण होता है। चूँकि किसी भ्रूण में परिवर्धन का अध्ययन करना प्रायः मुश्किल ही होता है, अतः पुनर्जनन के अध्ययन से हमें भ्रूण के परिवर्धन की समझ बनाने का अवसर मिलता है।
3. ऐसे जीवों का अध्ययन जिन्होंने पुनर्जनन की क्षमताओं को अपने पर्यावरण से अनुकूलित किया है, यह बता सकते हैं कि जीवों में विविधता किस प्रकार विकसित हुई है। यह हमें इन जीवों के विकास की समझ प्रदान कर सकता है।

जन्तु जगत में पुनर्जनन की अलग-अलग क्रियाविधियों को समझने से हमें इस प्रक्रिया को मनुष्यों में भी दोहराने में मदद मिल सकती है। इस क्षेत्र में हम काफ़ी प्रगति कर भी चुके हैं। उदाहरण के लिए, कई ऊतकों में स्टेम कोशिकाएँ ढूँढ़ ली गई हैं। इन कोशिकाओं को अलग-अलग प्रकार की कोशिकाओं में वृद्धि के लिए प्रेरित करके हम अंग का निर्माण कर सकते हैं, मनुष्यों में क्षतिग्रस्त ऊतकों को प्रतिस्थापित कर सकते हैं। पुनर्जनन के बारे में अभी कई गुत्थियाँ हैं। इस बारे में बढ़ते हुए ज्ञान के साथ हम केवल यह कल्पना कर सकते हैं कि एक दिन हम कटे हुए सिर फिर से उगा सकेंगे, जैसे भारतीय कथाओं में असुरों के सिर उग जाया करते थे।

मुख्य बिन्दु

- अंग-पुनर्जनन एक क्षमता है जिससे शरीर का कोई भाग नष्ट जाने पर फिर से उगाया जा सकता है। और उसका कार्य बहाल किया जा सकता है।
- अंग-पुनर्जनन की क्षमता पादप और जन्तु जगत में अलग-अलग होती है, कुछ जीव केवल कोशिकाओं का पुनर्जनन कर सकते हैं और कई पूरे अंगों का।
- कुछ सरल अकशेरुकी जन्तुओं और पादपों का अध्ययन करके पुनर्जनन की क्षमता की जाँच-पड़ताल विद्यालय स्तर पर भी सम्भव है। चिकित्सा में और विकासात्मक जीवविज्ञान में पुनर्जनन क्षमता की समझ के कई अनुप्रयोग हैं।

Note: Credits for the image used in the background of the article title: Sravanti Uppaluri & Harshitha Kanchamreddy.

References:

1. New insights into skin cells could explain why our skin doesn't leak (2016). ScienceDaily: https://www.sciencedaily.com/releases/2016/11/161129114910.htm.
2. Michalopoulos, G. K. Liver Regeneration. J. Cell. Physiol. 213, 286–300 (2007).
3. Yong, E. How nails regenerate lost fingertips. Nat. News. doi:10.1038/nature.2013.13192.e3-4

श्रावन्ती उप्पालुरी अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय में स्नातक कार्यक्रम में जीवविज्ञान पढ़ाती हैं। उनकी रुचि विकासात्मक जीवविज्ञान और पुनर्जनन करने वाले सभी जीवों में है। उनसे sravanti.uppaluri@apu.edu.in पर सम्पर्क किया जा सकता है।

हर्षिता कंचमरेड्डी अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय की पूर्व छात्रा हैं और वर्तमान में मणिपाल विश्वविद्यालय से स्नातकोत्तर की पढ़ाई कर रही हैं। उन्हें विज्ञान के बारे में पढ़ना और लिखना बहुत पसन्द है। हर्षिता से sreeharshitha.kanchamreddy@apu.edu.in पर सम्पर्क किया जा सकता है।

अनुवाद : अर्पिता पाण्डेय **पुनरीक्षण :** सुशील जोशी **कॉपी एडिटर :** अनुज उपाध्याय

आँखों देखा उद्विकास

शम्पा एम. घोष

प्राकृतिक चयन और उद्विकास सुदूर अतीत में हुई प्रक्रियाओं की कल्पनाओं को जन्म देते हैं। क्या हम वास्तविक समय में उद्विकास का अवलोकन कर सकते हैं? क्या हम इन अवलोकनों का उपयोग प्रकृति में होने वाले उद्विकास के परिवर्तनों को समझने के लिए कर सकते हैं?

आमतौर पर उद्विकास के बारे में माना जाता है कि वह करोड़ों साल पहले घटित हुआ था। लेकिन मच्छरों में डीडीटी (डाईक्लोरो डाईफिनाइल ट्रायक्लोरोइथेन) के ख़िलाफ़ प्रतिरोध का विकास और महामारी के लिए ज़िम्मेदार नॉवेल कोरोनावायरस का उभरना मात्र दो उदाहरण हैं जिनसे पता चलता है कि उद्विकास एक चलती हुई प्रक्रिया है। यह तो हमारे चारों ओर इस क्षण भी जारी है।

हम उद्विकास का अध्ययन कैसे करते हैं? हममें से अधिकांश लोग उन अध्ययनों से तो वाक़िफ़ ही हैं जिनमें प्रागैतिहासिक जीवाश्मों की जाँच-पड़ताल की जाती है (पुराजीवाश्म विज्ञान) या जिनमें विभिन्न प्रजातियों की तुलना की जाती है (तुलनात्मक अध्ययन)। लेकिन बहुत कम लोग जानते हैं कि इस प्रक्रिया का अध्ययन वास्तविक समय में भी प्रयोगशाला की नियंत्रित परिस्थितियों में किया जा सकता है। इसे 'प्रायोगिक उद्विकास' नामक रोमांचकारी तरीक़े से किया जा सकता है। इसके लिए प्रयोगशाला में विकसित जीवों की आबादियों पर चुनिन्दा वैकासिक दबाव डाला जाता है और यह देखा जाता है कि ऐसे दबाव के चलते कई पीढ़ियों में किस तरह के परिवर्तन पैदा होते हैं। इस तरीक़े में आमतौर पर बैक्टीरिया, निमेटोड कृमि और फ्रूट फ्लाई वग़ैरह का उपयोग किया जाता है (देखें **चित्र-1**)। एक तो इन जीवों को प्रयोगशाला में पालना आसान है तथा दूसरी ओर, इनकी प्रजनन अवधि कम है और यह जेनेटिक दृष्टि से अध्ययन के योग्य हैं। इसका मतलब हुआ कि इन जीवों में वैकासिक परिवर्तन चन्द महीनों या वर्षों में ही उजागर हो जाते हैं, और वैज्ञानिक इन परिवर्तनों के पीछे के जेनेटिक कारणों को भी आसानी से देख सकते हैं।

उदाहरण 1 : 'विलम्बित बुढ़ापे' का विकास

हम बूढ़े क्यों होते हैं? इस सवाल ने हमें सदियों से परेशान कर रखा है। वैकासिक जीव वैज्ञानिक इस प्रक्रिया की एक व्याख्या प्रस्तुत करते हैं, जिसे बुढ़ाने का वैकासिक सिद्धान्त कहते हैं। यह सिद्धान्त इस मान्यता पर टिका है कि किसी भी आबादी की प्रजनन सफलता में सबसे अधिक योगदान युवाओं का होता है। यदि कोई जीव प्रजनन उम्र तक पहुँचने से पहले ही मर जाता है तो उसके जीन्स उसके साथ ही मर जाते हैं। लिहाज़ा, प्राकृतिक चयन उन जीन्स या गुणधर्मों को वरीयता देता है, जो किसी युवा को प्रजनन उम्र तक जीने में मददगार हों और वह स्वस्थ सन्तानें पैदा कर सके। जब कोई जीव प्रौढ़ होकर प्रजनन करने के लिए

ड्रॉसोफिला मेलानोगास्टर का जीवन चक्र

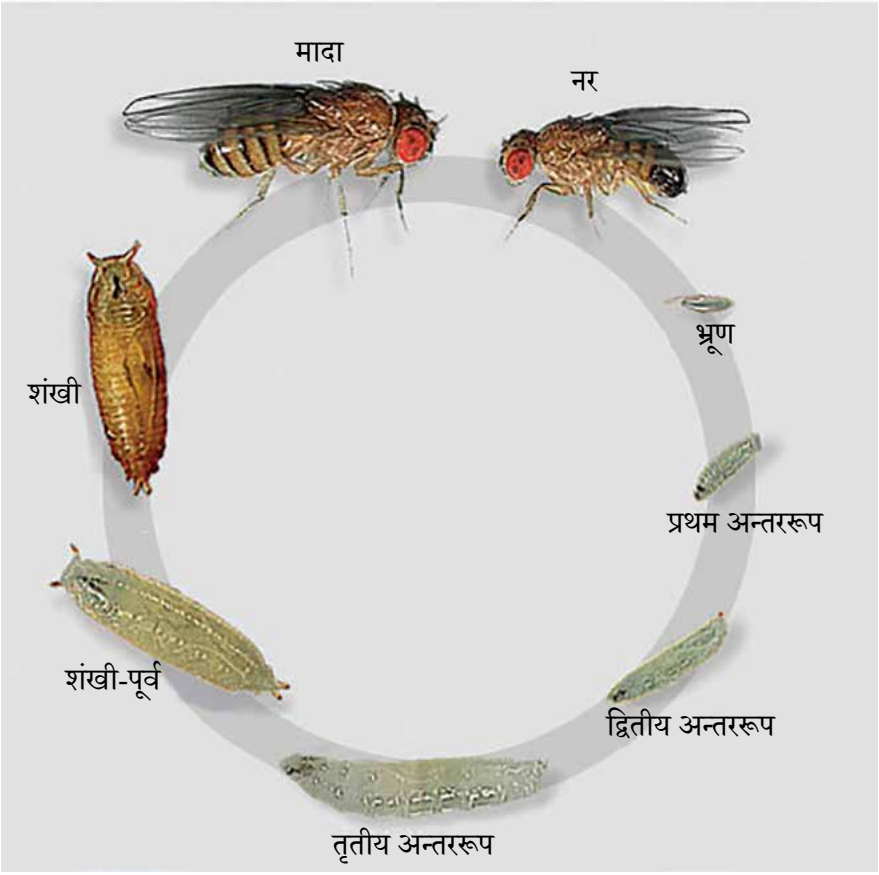

चित्र-1 : 25°C पर फ्रूट फ्लाई के जीवन चक्र की अवधि मात्र 10-12 दिन होती है। अर्थात ज़ायगोट को एक वयस्क बनने में केवल 10-12 दिन का समय लगता है। इस प्रक्रिया में परिवर्धन की कई अवस्थाएँ होती हैं – भ्रूण, इल्ली (प्रथम अन्तररूप, द्वितीय अन्तररूप और तृतीय अन्तररूप), शंखी (प्यूपा) तथा वयस्क।

Credits: Image Editor, Flickr. URL: https://www.flickr.com/photos/11304375@N07/2993342324. License: CC-BY.

पर्याप्त जी चुके, तो उस पर चयन का दबाव कम हो जाता है। यदि वह उसके बाद मर भी जाता है, तो उसके जीन्स अगली पीढ़ी में प्रसारित हो ही चुके हैं। इसलिए, किसी जीव को फिट रखने का दवाब उम्र के साथ घटता जाता है और ऐसे ख़तरनाक जीन्स प्रजाति में बने रहते हैं जो बड़ी उम्र में सक्रिय होते हैं। इस वजह से जीव में कई परिवर्तन होते हैं, जैसे कोशिकाओं में ऑक्सीकारक क्षतियों का इकट्ठा होना या शरीर के अंगों का कमज़ोर पड़ना। परिणामस्वरूप, जीव की सेहत में क्रमिक गिरावट होती है और बुढ़ापा या जर्जरता सामने आती है।

क्या हम जर्जरता को आगे धकेल सकते हैं और जीवन अवधि बढ़ा सकते हैं? कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय, इरविन (यूएसए) के प्रोफ़ेसर माइकल रोस ने फ्रूट फ्लाई (*Drosophila melanogaster*) के सन्दर्भ में इस सवाल का जवाब देने की कोशिश की है (देखें **चित्र-2**)। वयस्क फ्रूट फ्लाई का औसत जीवन काल 35-40 दिन होता है। मादा आजीवन अण्डे देती रहती है, लेकिन उम्र बढ़ने के साथ उसके द्वारा दिए जाने वाले अण्डों की संख्या तेज़ी-से घटती है। रोस ने तय किया कि वे उस उम्र को विलम्बित करेंगे जिसमें मक्खियाँ पहली बार प्रजनन करती हैं और ऐसा वे हर पीढ़ी के साथ करेंगे। उनकी भविष्यवाणी थी कि इस आबादी की मक्खियों में दो गुणधर्मों का उद्विकास देखने को मिलेगा – विलम्बित बुढ़ापा और लम्बा जीवन काल। क्यों? क्योंकि ऐसी परिस्थितियों में प्राकृतिक चयन उन मक्खियों को वरीयता देगा जो लम्बे समय तक जीवित रही थीं, फिट बनी रही थीं और जिन्होंने अपनी उम्र की मक्खियों से ज़्यादा अण्डे दिए थे।

अपनी भविष्यवाणी की जाँच करने के लिए, रोस और उनके साथियों ने शुरुआत फ्रूट फ्लाई की पाँच एक-सी (Replicate) आबादियों से की। यह वंश एक जंगली आबादी से तैयार किए गए थे ताकि यह प्रयोगशाला में आमतौर पर अन्त:प्रजनन से उत्पन्न वंशों से ज़्यादा विविधता दर्शाएँ। उन्होंने इन आबादियों को दो समूहों में बाँट दिया– B (मतलब 'बेस') और O (यानी 'ओल्ड')। B आबादी की मक्खियों के अण्डे उनकी सामान्य प्रजनन उम्र पर एकत्रित किए गए। इसके विपरीत, O आबादी में से सिर्फ़ अधिकतम उम्र वाली मक्खियों के अण्डों को ही अगली पीढ़ी शुरू करने दिया गया। इससे पहले की उम्र में दिए गए अण्डों को नष्ट कर दिया गया। चयन का यह क्रम कई पीढ़ियों तक दोहराया गया और O आबादी की हर अगली पीढ़ी में अण्डे एकत्रित करने की उम्र बढ़ती गई।

O आबादी की मक्खियों ने बड़ी उम्र में प्रजनन के लिए इस चयन पर काफ़ी जल्दी प्रतिक्रिया दी। रोस की भविष्यवाणी के अनुरूप, उन्होंने न सिर्फ़ बढ़ी हुई उम्र में ज़्यादा अण्डे देने की क्षमता विकसित कर ली, बल्कि उनका जीवन काल भी पूरे अध्ययन के दौरान बढ़ता रहा। चयन के

चित्र-2 : एक वयस्क फ्रूट फ्लाई (*Drosophila melanogaster*) केले का भक्षण करती हुई।

Credits: Sanjay Acharya, Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Drosophila_melanogaster_Proboscis.jpg. License: CC-BY-SA.

लगभग एक दशक बाद (यानी क़रीब 75 पीढ़ियों के बाद) O आबादी की मक्खियों का औसत जीवन काल B आबादी की मक्खियों से दुगना था। हालिया रिपोर्ट के मुताबिक O आबादी की मक्खियाँ विकसित होकर अब सामान्य फ्रूट फ्लाई के मुक़ाबले चार गुना अधिक समय तक जीती हैं।

रोस ने इन दीर्घजीवी *ड्रॉसोफिला* आबादियों को 'मेथुसेला मक्खियाँ' नाम दिया है। यह नामकरण मेथुसेला के नाम पर है जो हेब्रू बाइबल के अनुसार सबसे अधिक जीने वाला पुरुष है। लेकिन बात यहीं नहीं रुकी। O मक्खियों में ज़्यादा चयापचयी भण्डारण देखा गया, भुखमरी, शुष्कीकरण और ऑक्सीकारक तनाव के विरुद्ध ज़्यादा प्रतिरोध देखा गया। कुल मिलाकर, यह मक्खियाँ *ड्रॉसोफिला* की सामान्य उम्र से भी अधिक देर तक युवा बनी रहीं। इन परिणामों ने यह दर्शाकर बुढ़ाने के वैकासिक सिद्धान्त का समर्थन किया कि यदि बूढ़े जन्तुओं में प्राकृतिक चयन क्रियाशील रहे तो बुढ़ापे को टाला जा सकता है।

उदाहरण 2 : तेज़तर परिवर्धन का विकास

क्या हम किसी जीव के परिवर्धन की अवधि को कम कर सकते हैं? इस सवाल का एक जवाब तो प्राकृतिक स्थिति में *ड्रॉसोफिला* जैसे कीट के अवलोकनों से मिलता है। इन जीवों का परिवर्धन सड़ते फलों के अन्दर होता है। वृद्धि करती इल्लियाँ भोजन के लिए एक-दूसरे से होड़ करती हैं। वे अपने विषैले अपशिष्ट पदार्थ भी फल के अन्दर ही छोड़ती हैं, जिसके चलते फल बढ़ते क्रम में अखाद्य होता जाता है। लिहाज़ा, यदि बाक़ी सब एक समान रहे, तो उम्मीद की जाती है कि प्राकृतिक चयन उन इल्लियों को वरीयता देगा जो अन्य के मुक़ाबले तेज़ी-से विकसित होकर वयस्क मक्खी में बदल सकती हैं। 1990 के दशक में चार शोध दलों ने इसी तर्क के आधार पर फ्रूट फ्लाई की ऐसी आबादियाँ तैयार करने में सफलता हासिल की थी जो सामान्य से तेज़ गति से परिवर्धित होती हैं। इनमें से

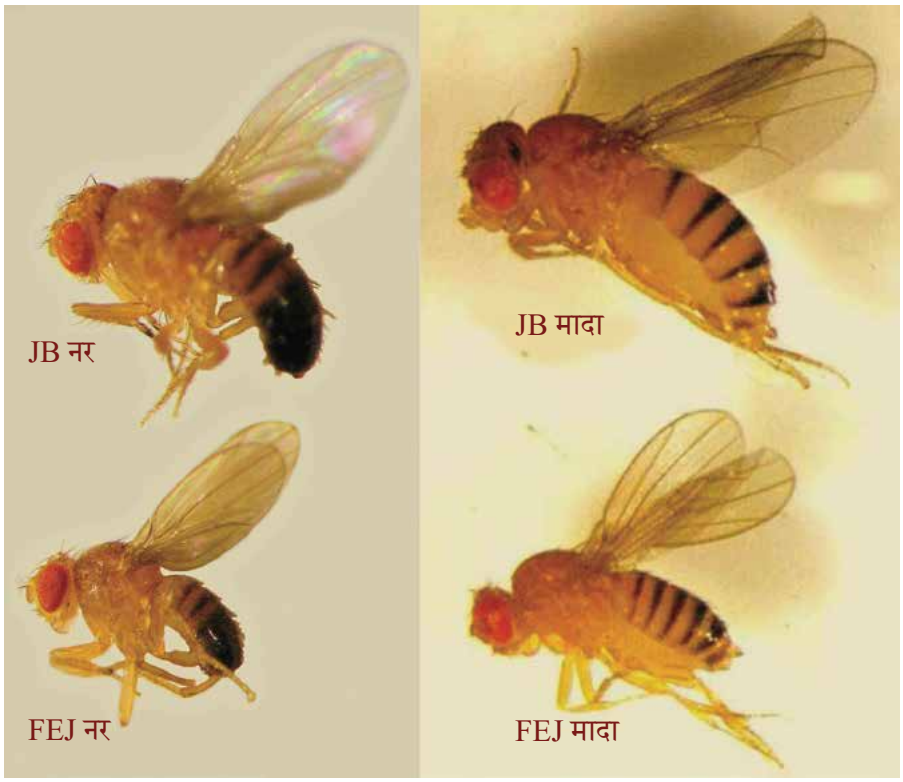

चित्र-3 : FEJ आबादी में मक्खियाँ JB आबादी की तुलना में कहीं अधिक छोटी हैं।
Credits: Shampa M. Ghosh. License: CC-BY-NC.

एक दल ने बेंगलूरु के जवाहरलाल नेहरू प्रगत वैज्ञानिक अनुसन्धान केन्द्र के प्रोफ़ेसर अमिताभ जोशी के नेतृत्व में काम किया था।

जोशी के दल ने *ड्रॉसोफिला* की चार एक-सी (Replicate) आबादियों (जिन्हें जोशी बेसलाइन या JB कहा गया था) पर चयन का निम्नलिखित क्रम लागू किया – प्रत्येक पीढ़ी में मात्र 25 प्रतिशत सबसे तेज़ी-से परिवर्धित मक्खियों को ही प्रजनन करने दिया गया। शेष 75 प्रतिशत को ख़ारिज कर दिया गया। इसके अलावा, इन मक्खियों को तुलनात्मक समूह की मक्खियों के मुक़ाबले कम उम्र में प्रजनन करने दिया गया। इससे जल्दी परिवर्धित होने का एक चयन दबाव बना, क्योंकि जो मक्खियाँ ऐसा नहीं कर पाती थीं, उन्हें अपने जीन्स अगली पीढ़ी में पहुँचाने का अवसर नहीं दिया गया। 100वीं पीढ़ी आते-आते इन FEJ (फास्टर-डेवलपिंग, अर्ली-रिप्रोड्यूसिंग, JB व्युत्पन्न) मक्खी आबादियों में अण्डे से वयस्क तक परिवर्धन की अवधि उनके पूर्वजों द्वारा ली गई अवधि की तीन-चौथाई थी।

लेकिन इस क्षमता की उन्होंने भारी कीमत भी चुकाई – इल्लियों की अधिक मृत्यु दर, लिपिड भण्डारण में कमी, तनाव के ख़िलाफ़ प्रतिरोध में कमी, और घटा हुआ प्रजनन आउटपुट वग़ैरह। यह इसलिए क्योंकि *ड्रॉसोफिला* के जीवन चक्र में परिवर्धन की अवधि अत्यन्त महत्त्वपूर्ण होती है। इल्ली के रूप में फ्रूट फ्लाई जमकर खा सकती है और साइज़ में बढ़ सकती है। लेकिन जब वह कायान्तरण के लिए प्यूपा खोल में क़ैद हो जाती है, तब उसके शरीर के पदार्थ में कुछ कमी आती है, और एक वयस्क के रूप में उसका सख़्त बाह्य-कंकाल साइज़ में और वृद्धि को रोक देता है। अर्थात, एक वयस्क मक्खी का साइज़ और शेष जीवन के लिए ऊर्जा की ज़रूरतें कमोबेश उस अवधि पर निर्भर करती हैं जो उसने इल्ली के रूप में भोजन करते बिताई है। यही कारण है कि तेज़तर परिवर्धित होती FEJ मक्खियों में वृद्धि तथा अण्डा उत्पाद समेत विभिन्न

कार्यों के लिए ऊर्जा की उपलब्धता कमतर होगी। इससे लगता है कि अन्य गुणधर्मों को प्रभावित किए बग़ैर किसी एक गुणधर्म को अधिकतम करना या बेहतर करना शायद सम्भव न हो। यह भी लगता है कि प्रकृति में परिवर्धन की जो औसत अवधि हमें नज़र आती है, वह किसी जीव के जीवन चक्र के कई गुणधर्मों के बीच एक सन्तुलन बनाती है। लिहाज़ा, अपेक्षा के विपरीत, प्राकृतिक चयन उन मक्खियों को शायद वरीयता न दे, जो इतनी तेज़ी-से परिवर्धित होती हैं कि अन्य गुणधर्मों पर असर पड़ता है।

रोचक बात यह रही कि FEJ का शारीरिक वज़न भी कम रहा। 70वीं पीढ़ी तक यह मक्खियाँ JB की तुलना में आधी साइज़ की थीं (देखें **चित्र-3**)। संकरण के एक सिलसिले ने दर्शाया कि FEJ और BJ आबादियाँ सफलतापूर्वक परस्पर प्रजनन करने में कम सक्षम थीं। चूँकि जीवों की किन्हीं दो आबादियों के बीच प्रजनन का अलगाव दो भिन्न प्रजातियों को परिभाषित करता है, इसलिए FEJ अध्ययन प्रयोगशाला में प्रजातिकरण (या, एक नई प्रजाति के निर्माण) की दिशा में प्रगति का एक दुर्लभ उदाहरण भी प्रस्तुत करता है।

चलते-चलते

प्रायोगिक उद्विकास से हमें इस प्रक्रिया को वास्तविक समय में देखने का अवसर मिलता है, और उद्विकास की विशिष्ट परिकल्पनाओं की तहक़ीक़ात के लिए दोहराने योग्य प्रयोगशाला आधारित प्रयोग डिज़ाइन करने में मदद मिलती है। साथ ही उद्विकास के पीछे के जेनेटिक कारकों को देखने में भी मदद मिलती है। व्यापक पर्यावरणीय उथल-पुथल, जैसे निर्वनीकरण, प्राकृतवास की क्षति और वैश्विक तापमान वृद्धि, के इस दौर में यह तरीक़ा प्रकृति में होने वाले परिवर्तनों को समझने और उनकी भविष्यवाणी करने का एक महत्त्वपूर्ण औज़ार हो सकता है।

मुख्य बिन्दु

- प्रायोगिक उद्विकास हमें प्रयोगशाला के अन्दर उद्विकास को वास्तविक समय में देखने का रोमांचक अवसर प्रदान करता है।
- इस तरीक़े में, उद्विकास का अध्ययन करने के लिए प्रयोगशाला में जीवों की एक आबादी पर कई पीढ़ियों तक चयन का विशिष्ट दबाव बनाया जाता है।
- इस तरीक़े में इस्तेमाल किए जाने वाले सबसे आम जन्तुओं में बैक्टीरिया, निमेटोड कृमि और फ्रूट फ्लाई हैं, हालाँकि अन्य छोटे जन्तुओं का उपयोग भी किया जा सकता है।
- यह तरीक़ा हमें विकसित प्रतिक्रियाओं (जेनेटिक परिवर्तनों समेत) का बारीकी से अध्ययन करने का मौक़ा देता है।
- इस तरीक़े से ऐसी फ्रूट फ्लाई का विकास हुआ जिनका जीवन काल लम्बा है और प्रयोगशाला में परिवर्धन तेज़तर है।

Note: Source of the image used in the background of the article title: https://www.pxfuel.com/en/free-photo-obrql. License: CC-0.

References:

1. Garland, T., and Rose M.R., Editors 2009. Experimental Evolution. University of California Press, Berkeley.
2. Kawecki, T.J., Lenski, R.E., Ebert, D., Hollis, B., Olivieri, I., and Whitlock, M.C. 2012. Experimental Evolution. Trends in Ecology and Evolution 27, 547–560.
3. Rose M.R. 1984. Laboratory evolution of postponed senescence in Drosophila melanogaster. Evolution 38, 1004–1010.
4. Rose M.R., Passananti, H.B., and Matos, M., Editors. 2004. Methuselah Flies: A Case Study in the Evolution of Aging. World Scientific Publishing, Singapore.
5. Prasad, N.G., and Joshi, A. 2003. What have two decades of laboratory life-history evolution studies on Drosophila melanogaster taught us? Journal of Genetics 82, 45–76.
6. Ghosh S. M. and Joshi, A. 2012 Evolution of reproductive isolation as a by-product of divergent life-history evolution in laboratory populations of Drosophila melanogaster. Ecology and evolution 2(12), 3214–3226.

शम्पा एम. घोष कलिंग इंस्टीट्यूट ऑफ़ इंडस्ट्रियल टेक्नॉलॉजी, भुवनेश्वर में सहायक प्राध्यापक हैं। उनकी प्रयोगशाला *ड्रॉसोफिला* का उपयोग करके प्रायोगिक उद्विकास और वैकासिक जीवविज्ञान के क्षेत्र में काम करती है। उनसे shampa.ghosh@kiitbiotech.ac.in पर सम्पर्क किया जा सकता है।

अनुवाद : सुशील जोशी **कॉपी एडिटर :** कविता तिवारी

एंटीबॉयोटिक
पदार्थों की उत्पत्ति

रोहिणी करन्दीकर और सुभोजीत सेन

क्या आप जानते हैं कि अलेक्जेन्डर फ्लेमिंग पेनिसिलिन की नोबेल पुरस्कार विजेता खोज में शामिल एकमात्र शोधकर्ता नहीं थे? या कि पेनिसिलिन को मनुष्यों के उपयोग में लाने में 13 साल लग गए थे? हम पेनिसिलिन की खोज की प्रक्रिया में विस्मृत तथा आश्चर्यचकित करने वाले तथ्यों पर प्रकाश डालने के लिए एक संवादात्मक संसाधन प्रस्तुत कर रहे हैं।

स्कूल की पाठ्यपुस्तकों में 'विज्ञान के इतिहास' को सीमित स्थान दिया जाता है। अकसर इसे तारीख़ों, वैज्ञानिकों के नाम, कुछ तस्वीरों, और कुछ पंक्तियों में समेट दिया जाता है। विद्यार्थी विज्ञान की रोमांचक 'प्रक्रिया' और उन खोजों को दिशा देने वाले यूरेका क्षणों से वंचित रह जाते हैं। खोज की कहानियों के साथ प्रयोग से सम्बन्धित विचारों को जोड़ने से विद्यार्थी विज्ञान की प्रकृति से परिचित हो सकते हैं। विद्यार्थियों को न केवल यह पता चलता है कि एक परिकल्पना को कैसे विकसित करके परीक्षण किया जाता है बल्कि वे यह भी समझ पाते हैं कि प्रयोगशालाओं में की गई खोजों को वास्तविक दुनिया में अनुप्रयोगों में, तब्दील करने में सावधानीपूर्वक अवलोकन, धैर्य और सहयोगी कार्य का कितना महत्त्व है। इस प्रकार की कड़ियाँ विद्यार्थियों को आकस्मिक खोजों में लगने वाले समय, प्रयास और गहनता को समझने का अवसर भी प्रदान करती हैं।

बॉक्स-1 : पाठ्यक्रम से जुड़ाव

यह संसाधन कक्षा-9 और इसके बाद की कक्षाओं के लिए उपयुक्त है। इसके पाठ्यक्रम से जुड़ाव निम्नानुसार हैं :

1. एनसीईआरटी की कक्षा-8 की पाठ्यपुस्तक में अध्याय-2 'सूक्ष्मजीव : मित्र और शत्रु'
2. एनसीईआरटी की कक्षा-9 की पाठ्यपुस्तक में अध्याय-13 'हम बीमार क्यों पड़ते हैं?'

हम अलेक्जेन्डर फ्लेमिंग की पेनिसिलिन की खोज के बारे में एक गतिविधि से जानने का प्रयत्न करेंगे। (**बॉक्स-1** देखें)। विज्ञान प्रतिभा अधिगम इकाई – 'संयोगवश होने वाली खोजें (The Accidental Discovery)' पर आधारित यह दृष्टिकोण एक प्रयोग (**गतिविधि शीट-1**) को एक इन्टरैक्टिव कहानी (**गतिविधि शीट-2**) से जोड़ता है।

गतिविधि-I : एक सूक्ष्म जीवविज्ञानी बनें!

सभी सूक्ष्मजीव हानिकारक नहीं हैं, इस विचार से परिचित कराए जाने के बाद विद्यार्थियों को इस गतिविधि से जुड़ने के लिए प्रोत्साहित करें। दही में लेक्टोबेसिली तथा ब्रेड में यीस्ट को मनुष्यों के लिए फ़ायदेमन्द सूक्ष्मजीवों के सामान्य उदाहरणों के रूप में पेश किया जा सकता है। क्या हम सूक्ष्मदर्शी की सहायता के बिना दही में सूक्ष्मजीवों की उपस्थिति को दर्शा सकते हैं? आपको हैरानी होगी कि ऐसा करने के लिए आपको प्रशिक्षित सूक्ष्म जीवविज्ञानी होने की ज़रूरत नहीं है। यह गतिविधि (देखें **गतिविधि शीट-1**) विद्यार्थियों को पके आलू की आड़ी स्लाइस (~ ठोस सब्सट्रेट) पर दही (~ बैक्टीरिया पदार्थ/बीज) से सूक्ष्मजीवों को पनपने का अवसर देती है; इस प्रकार से मानक सूक्ष्मजीव विज्ञानी तकनीकों (निर्जर्मीकरण, संवर्धन माध्यम बनाना, विशिष्ट उपकरण और कीटाणु नाशक परिस्थितियाँ) से बचा जा सकता है। ऐसा करने के लिए, दही की कुछ मात्रा को पके हुए आलू की स्लाइस पर समान रूप से फैलाया जाता है, और 24-48 घण्टे के लिए ऊष्मायित किया जाता है। यह अवधि पूर्ण होने पर विद्यार्थी आलू की स्लाइस पर कई छोटे-छोटे सफ़ेद बिन्दु देख सकते हैं – जिनमें से प्रत्येक एक लैक्टोबैसिलस कॉलोनी है (**चित्र-1क** देखें)। प्रत्येक कॉलोनी में लाखों बैक्टीरिया ढेरियों के रूप में विकसित होते हैं जो नग्न आँखों से दिखाई देती हैं। विद्यार्थी यह भी देख सकते हैं कि आकार (छोटी/बड़ी), रूप-रंग (कुछ पारभासी तथा कुछ अपारदर्शी) आदि मामलों में कॉलोनियों में काफ़ी विविधता होती है।

सूक्ष्मजीवों पर एंटीबॉयोटिक दवाओं के प्रभाव का निरीक्षण करने के लिए, आलू की प्रत्येक स्लाइस के केन्द्र में एक छोटा उथला गड्ढा बनाया जाता है। हर स्लाइस के गड्ढे में अलग सान्द्रता का एंटीबॉयोटिक विलयन डाला जाता है। केवल दही या केवल एंटीबॉयोटिक के साथ आलू की स्लाइसों को तुलना के लिए उपयोग कर सकते हैं। ऊष्मायन अवधि के अन्त तक, विद्यार्थी आलू के गड्ढे वाले हिस्से, जिसमें एंटीबॉयोटिक विलयन उपस्थित है, के चारों ओर एक स्पष्ट निषेधित क्षेत्र की उपस्थिति का अवलोकन कर पाएँगे। दूसरे शब्दों में इस क्षेत्र में बैक्टीरिया की कॉलोनी नहीं होंगी या कम संख्या में होंगी (**चित्र-1ख** देखें)। विद्यार्थी यह भी देख सकते हैं कि एंटीबॉयोटिक की सान्द्रता में वृद्धि के साथ निषेधित क्षेत्र का आकार भी बढ़ता है। निषेधित क्षेत्र के आकार में भिन्नता को प्रभावित करने वाले अन्य कारकों में, आलू की स्लाइस को सम्हालने और स्लाइस को काटने, पिपेट को उपयोग में लेने और बीज डालते समय होने वाली त्रुटियाँ भी शामिल हैं।

इस गतिविधि के माध्यम से, विद्यार्थियों

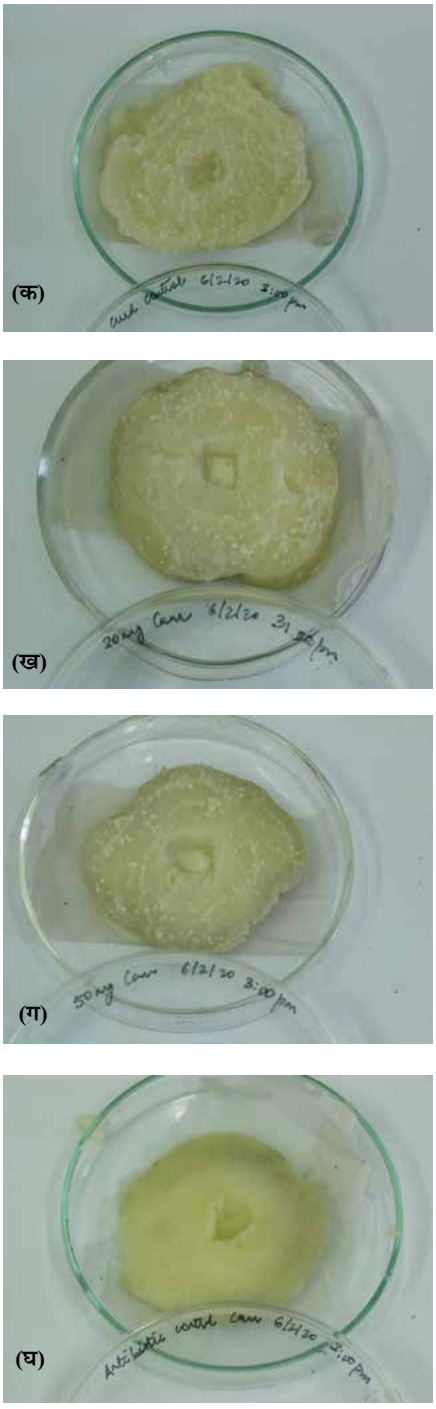

चित्र-1 : दही लेपित आलू की काटों पर क्लोरैम्फेनिकॉल (कैम) का प्रभाव। (क) दही नियंत्रण **(ख)** 20 मिलीग्राम कैम **(ग)** 40 मिलीग्राम कैम और **(घ)** एंटीबॉयोटिक नियंत्रण (20 मिलीग्राम कैम)। 20 और 50 मिलीग्राम कैम के युक्त आलू की काटों के गड्ढों के आसपास कालोनियों की कम संख्या को देखा जाता है।

Credits: Manohar Dange. License: CC-BY-NC.

बॉक्स-2 : विस्तारित गतिविधि

विद्यार्थी इस प्रयोग को निम्न बिन्दुओं को जाँचने के लिए भी कर सकते हैं –

1. मिट्टी में सूक्ष्मजीवों की उपस्थिति पता करने के लिए, आलू की स्लाइसों में दही की बजाय मिट्टी के नमूने डालकर, या
2. विभिन्न प्रतिजैविक दवाओं का उपयोग करके सूक्ष्मजैविक निषेध की प्रकृति में अन्तर करना।

बॉक्स-3 : शिक्षकों के लिए

1. शिक्षकों को विद्यार्थियों के सामने इस विचार को पेश करने की आवश्यकता हो सकती है कि मोल्ड कवक हैं जिनके बीजाणु हमारे चारों ओर हवा में मौजूद हैं। अधिकांश मृतोपजीवी सामान्य तापमान पर वृद्धि करते हैं (जैसे मशरूम 25°C पर), जबकि रोग पैदा करने वाले बैक्टीरिया 37°C (मानव शरीर का तापमान) में बेहतर तरीके से पनपते हैं।
2. पेनिसिलिन की खोज के लिए नोबेल पुरस्कार किसको मिलना चाहिए इस विषय के इर्द-गिर्द विद्यार्थियों के साथ एक अच्छी चर्चा की जा सकती है। हालाँकि यह पुरस्कार अलेक्जेन्डर फ्लेमिंग, हॉवर्ड फ्लोरेऔर अर्न्स्ट चैन को दिया गया था, लेकिन विद्यार्थियों का सुझाव हो सकता है कि इस प्रक्रिया में हीटली और 'पेनिसिलिन गर्ल्स' (ये छह महिलाएँ थीं, जिन्हें फ्लोरे ने पेनिसिलीन संग्रह करने के लिए नियुक्त किया था) योग्य थीं, फिर भी उन्हें इसका श्रेय नही मिला।
3. विश्वयुद्धों की वजह से अनुसन्धान के क्षेत्र में धन की कमी हो गई, फलस्वरूप कई वैज्ञानिकों को सीमित संसाधनों के साथ काम करना पड़ा। लेकिन पेनिसिलिन की खोज में शामिल वैज्ञानिक युद्ध में घायल सैनिकों को बचाने के लिए पर्याप्त एंटीबॉयोटिक दवाओं का उत्पादन करने की आवश्यकता से प्रेरित थे। इस प्रकार विद्यार्थी यह निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि एक तरह से युद्ध ने पेनिसिलिन के ज़्यादा मात्रा में उत्पादन के प्रयासों को प्रोत्साहित किया। यह चर्चा विद्यार्थियों को यह समझने में मदद कर सकती है कि राजनीति वैज्ञानिक खोजों को किस प्रकार प्रभावित करती है।
4. शिक्षकों को एंटीबॉयोटिक दवाओं की भूमिका के बारे में स्पष्टता प्रदान करने की आवश्यकता हो सकती है। पेनिसिलिन घावों को नहीं भरती है। संक्रमण के दौरान, बैक्टीरिया बहुत बड़ी संख्या में वृद्धि करते हैं, जो प्रतिरक्षा तंत्र पर हावी हो सकते हैं। पेनिसिलिन बैक्टीरिया की वृद्धि दर को धीमा कर अप्रत्यक्ष रूप से शरीर के प्रतिरक्षा तंत्र को संक्रमण से लड़ने का बेहतर मौका देती है।

को न केवल सूक्ष्मजीवों की वृद्धि देखने को मिलेगी, बल्कि वे सूक्ष्मजीव की एक कॉलोनी की दृश्य अवधारणा को भी समझ पाएँगे। चूँकि ये कालोनियाँ केवल दही के साथ आलू की स्लाइस पर दिखाई देती हैं, इसलिए विद्यार्थी यह अनुमान लगाने की स्थिति में होंगे कि वे दही के जीवाणु (बैक्टीरिया) से सम्बन्धित हैं। एंटीबॉयोटिक युक्त गड्ढों के आसपास एक स्पष्ट निषेधित क्षेत्र बनना विसरित होते एंटीबॉयोटिक द्वारा जीवाणुओं की वृद्धि में रुकावट का स्पष्ट प्रमाण देगा (**बॉक्स-2** देखें)। यह इस विचार को भी मज़बूती देने में मदद करेगा कि फ्लेमिंग ने पेनिसिलिन का निर्माण करने वाली फंगल कॉलोनी के आसपास सम्भवत: क्या देखा होगा।

गतिविधि-II : पेनिसिलिन की आकस्मिक खोज को दोहराना

यह एक परस्पर संवादात्मक कहानी-आधारित गतिविधि है (देखें **गतिविधि शीट-2**) जो आधुनिक पेनिसिलिन की खोज का वर्णन "समालोचनात्मक/समीक्षात्मक सोच" को बढ़ावा देने वाले सवालों के माध्यम से करती है। कहानी विद्यार्थियों को विज्ञान की प्रक्रिया से परिचित कराती है, जबकि प्रश्न खुली सोच और चर्चा के मार्ग उपलब्ध कराते हैं। विद्यार्थियों की अधिकतम भागीदारी सुनिश्चित करने के लिए, हम अनुशंसा करते हैं कि शिक्षक :

- सीधे जवाब देने से बचें, और इसके बजाय चर्चा को प्रोत्साहित करें।
- सही या गलत के रूप में वर्गीकृत किए बिना सभी विद्यार्थियों की प्रतिक्रियाओं पर विचार करें। कुछ सवालों का एक सही उत्तर होना आवश्यक नहीं है, विद्यार्थियों के विचारों पर बहुत आलोचनात्मक न होना या उन्हें अस्वीकृत करने से बचना उनकी खुली सोच को प्रोत्साहित करेगा।
- सभी विद्यार्थियों की प्रतिक्रियाओं/विचारों को बोर्ड पर सूचीबद्ध करें और विद्यार्थियों को उनके इर्द-गिर्द चर्चा करने को प्रोत्साहित करें। ऐसा करने से विद्यार्थियों को प्रत्येक विचार के साथ जुड़ने का और उससे सहमति/असहमति के कारणों पर विचार करने का अवसर मिलेगा।

इस गतिविधि से सम्बन्धित चर्चाओं को कई दिशाओं में ले जाया जा सकता है (**बॉक्स-3** देखें)। गतिविधि के एक प्रश्न पर विचार करें – ब्रेड पर उगने वाली फफून्द (मोल्ड) में ऐसा क्या है जो घावों को ठीक करने में मदद करता है? इस प्रश्न के इर्द-गिर्द विद्यार्थियों की चर्चा में एक और प्रश्न जोड़ा जा सकता है – क्या यह सम्भव है कि फफून्द ब्रेड पर कुछ रसायन छोड़ती है जो घावों में उपस्थित जीवाणुओं को मार सकते हैं या इनके विकास को रोक सकते हैं? एक बार जब विद्यार्थी इस सम्भावना का पता लगा लेंगे, तो शिक्षक यह तथ्य प्रस्तुत कर सकते हैं कि ब्रेड सभी प्रकार के फफून्दों को विकसित करने के लिए पोषक माध्यम के रूप में कार्य करती है। इस तरह से देखें तो अगर प्राचीन मिस्र के लोग घाव को ठीक करने में मदद करने के लिए 'तरीक़े' जानते भी थे, तो भी रोटी पर किस तरह की फफून्द बढ़ेगी, इस पर उनका नियंत्रण कम ही होता होगा। ऐसे में अगर घाव भरने के लिए इस्तेमाल किए जाने वाले ब्रेड के टुकड़े पर कुछ कवक या फफून्द गैर-लाभकारी या विषाक्त होते तो उनकी क्या हालत होती? गतिविधि के इस भाग के बारे में चर्चा से विद्यार्थियों को आधुनिक चिकित्सा में एंटीबॉयोटिक दवाओं तथा पारम्परिक चिकित्सा में उपयोग किए जाने वाले रोगाणुरोधक पदार्थों (एंटीसेप्टिक्स) के बीच अन्तर करने में मदद मिल सकती है। इसे एक उदाहरण के रूप में इस्तेमाल किया जा

इतिहास के झरोखे से
गतिविधि शीट-1 : बनें सूक्ष्म जीवविज्ञानी

आवश्यक सामग्री (3-4 विद्यार्थियों के समूह के लिए) :

मध्यम आकार के दो आलू

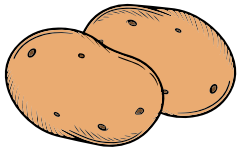

2-3 छोटे चम्मच दही

4 पेट्रीडिश/ वाचग्लास

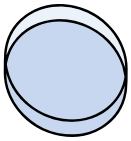

टिश्यू पेपर

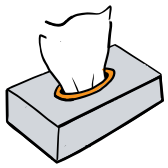

एमोक्सिसिलीन या व्यापक परास वाले एंटीबॉयोटिक पदार्थ (काम नहीं आने वाली दवाओं या किसी दवा की दुकान से प्राप्त किया गया) का विलयन (सान्द्रता 100 मिलीग्राम/मिली)

एक ड्रॉपर या ग्लास पिपेट (माप के निशान के साथ)

उबला हुआ पानी जिसे सामान्य तापमान पर ठण्डा किया गया हो

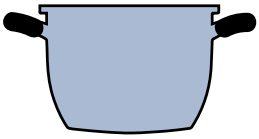

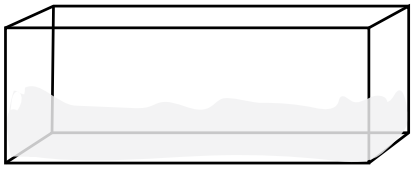

एक बन्द, नमीयुक्त कक्ष बनाने के लिए एक बड़ा प्लास्टिक का डिब्बा, जिसमें टिश्यू पेपर की परतों पर उबालकर ठण्डा किया हुआ पानी डाला गया हो।

क्या करें :

1. दो मध्यम आकार के आलुओं को लगभग 20 मिनट तक अच्छे से उबालकर ठण्डा होने के लिए छोड़ दीजिए।
2. पेट्रीडिश या वाचग्लास को साफ़ करें और उसकी तली में एक टिश्यू पेपर को तह करके रख दें। टिश्यू पेपर को उबले हुए पानी से गीला कर दें।
3. उबले आलुओं में से एक का छिलका हटाकर लम्बाई में लगभग 0.5-0.5 सेंटीमीटर मोटी स्लाइस लें। ध्यान रखें कि स्लाइस की मोटाई समान हो।
4. एक पेट्री-डिश में गीले टिश्यू पेपर पर आलू की एक स्लाइस रख दें। बाक़ी तीनों पेट्री-डिशों के लिए भी यही प्रक्रिया दोहराएँ।
5. तीनों स्लाइस के केन्द्र में ड्रॉपर या पिपेट की सहायता से एक मिलीलीटर दही/छाछ डालें। एक साफ़ चम्मच की सहायता से दही को पूरी स्लाइस की सतह पर अच्छी तरह से अवशोषित होने तक फैलाएँ। इन स्लाइस को निम्न प्रकार से नामांकित कीजिए-
   - दही कन्ट्रोल या CC
   - 20 मिलीग्राम; और
   - 50 मिलीग्राम
6. आलू की एक अन्य स्लाइस लें। इस पर दही नहीं डालना है। इसे एंटीबॉयोटिक कन्ट्रोल या AC नामांकित करें।
7. आलू की चारों स्लाइस के केन्द्र में चाकू की सहायता से एक उथला गड्ढा बनाएँ। गड्ढा बनाते समय ध्यान रखें कि इसकी तली में आलू की परत बनी रहे।
8. चारों पेट्री-डिशों को नमीयुक्त प्लास्टिक बॉक्स में रख दें।

9. मिलाएँ :

- '20 मिलीग्राम' नामांकित स्लाइस के गड्ढे में 0.2 मिलीलीटर एंटीबॉयोटिक विलयन।
- 50 मिलीग्राम या AC से नामांकित स्लाइस के गड्ढे में 0.5 मिलीलीटर एंटीबॉयोटिक विलयन।
- दही कन्ट्रोल या CC से नामांकित स्लाइस के गड्ढे में 0.5 मिलीलीटर उबला हुआ पानी।

10. पेट्री-डिशों को बिना हिलाए-डुलाए प्लास्टिक बॉक्स को बन्द करके इसे 24-48 घण्टे के लिए किसी गर्म जगह पर रख दें।

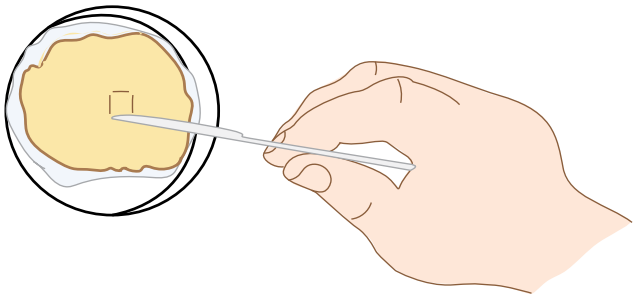

आलू की स्लाइस में गड्ढा बनाने का तरीक़ा

सावधानी सम्बन्धी नोट :

सड़े हुए आलू के टुकड़ों को छूने के बाद अपने हाथों को साबुन से अच्छी तरह धोएँ और खाने-पीने की चीज़ें उनके पास न लाएँ। प्रयोग पूरा होने के बाद, इस्तेमाल किए गए सभी आलू के टुकड़ों को एक बीकर में 10 मिनट तक उबालें, छान लें और गीले कचरे के रूप में फेंक दें। जिन विद्यार्थियों को पहले कोई एलर्जी हुई है, उन्हें अतिरिक्त सावधानी बरतनी चाहिए।

दर्ज करें : 24 घण्टे के बाद प्रत्येक पेट्रीडिश का निरीक्षण करें और नीचे दी गई तालिका में अपने अवलोकनों को दर्ज करें।

पेट्रीडिश	हमने क्या देखा	अपने अवलोकन से हम क्या निष्कर्ष निकालते हैं
CC		
AC		
20 मिलीग्राम		
50 मिलीग्राम		

चर्चा के बिन्दु :

1. क्या आपको 20 मिलीग्राम और 50 मिलीग्राम एंटीबॉयोटिक विलयन वाली स्लाइस में गड्ढों के आसपास दिखाई देने वाली कालोनियों की संख्या में कोई अन्तर दिखाई देता है? यदि हाँ, तो ऐसा क्यों हैं?

2. संक्रामक बैक्टीरिया का इलाज खोजने के लिए आप इस प्रयोग का उपयोग कैसे करेंगे?

रोहिणी करन्दीकर पूर्व में होमी भाभा सेन्टर फॉर साइंस एजुकेशन (HBCSE), TIFR, मुम्बई में पोस्टडॉक्टरल फेलो थीं। अब वह क्यूरियोसिटी जिम, मुम्बई में एक पाठ्यक्रम और नवाचार प्रबन्धक के रूप में काम करती हैं। रोहिणी से rohinimd25@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है।

सुभोजीत सेन स्कूल ऑफ़ बॉयोलॉजिकल साइंसेज, UM-DAE सेन्टर फॉर एक्सीलेन्स इन बेसिक साइंसेज, मुम्बई विश्वविद्यालय (कलिना कैम्पस), मुम्बई में डीबीटी रामलिंगस्वामी फेलो हैं। उनसे subhojit.sen@cbs.ac.in पर सम्पर्क किया जा सकता है।

लीना फड़के रामनारायण रुइया कॉलेज, माटुंगा, मुम्बई में एसोसिएट प्रोफ़ेसर रही हैं।

अनुवाद : यशोधरा कनेरिया **पुनरीक्षण :** सुशील जोशी

i wonder... Rediscovering school science

Azim Premji University

इतिहास के झरोखे से

गतिविधि शीट-2 : एंटीबॉयोटिक्स की खोज को दोहराएँ

क्या आप जानते हैं कि पहले एंटीबॉयोटिक की खोज एक संयोग से हुई थी? पेनिसिलिन बनाने वाले कवक (*पेनिसिलियम नोटेटम*) की खोज 1928 में की गई थी, लेकिन आम आदमी के लिए पहली बार इसका उपयोग 1941 में ही किया जा सका था। इतनी महत्त्वपूर्ण खोज को आम आदमी तक पहुँचने में इतना लम्बा समय क्यों लगा? आइए पेनिसिलिन की खोज को दोहराते हुए यह समझने का प्रयास करते हैं कि यह किस प्रकार एक जीवन-रक्षक एंटीबॉयोटिक बन गया। यह गतिविधि आपको अपनी सोच और विचारों का उपयोग करते हुए इस कहानी को उजागर करने में मदद करेगी!

यह कहानी कई भागों में है, और हर भाग के अन्त में प्रश्न हैं। अगले भाग पर जाने से पहले भाग के अन्त में दिए गए सभी प्रश्नों के उत्तर देने का प्रयास करें। यदि आप प्रत्येक भाग के अन्त में दिए गए प्रश्नों को छोड़ देते हैं, तो आप सारा मज़ा गँवा देंगे।

अब कहानी का पहला हिस्सा।

आज अगर किसी को जरा-सी चोट या चीरा लग जाए तो कोई गम्भीर बात नहीं लगती है। कई सारी एंटीसेप्टिक क्रीम, लोशन, और पाउडर की मदद से छोटे-मोटे दर्द या परेशानी की सहजता से देखभाल की जा सकती है। लेकिन क्या आप जानते हैं कि एंटीबॉयोटिक्स की उपलब्धता से पहले, मामूली चीरा लगने, जलने या चोटों से भी लोगों की मृत्यु हो जाती थी? ऐसा इसलिए था क्योंकि उनके घावों में बैक्टीरिया का संक्रमण हो जाता था, जिससे गम्भीर संक्रमण, विषैला आघात या मौत भी हो सकती थी। बहुत सारे लोग घातक संक्रमण का शिकार हो जाते थे। अतः उस समय भारतीय लोगों की औसत आयु मात्र 32 वर्ष हुआ करती थी। दुनिया भर के अस्पतालों, डॉक्टरों और वैज्ञानिकों के लिए ऐसे मरीजों का इलाज करना एक चुनौती थी। वास्तव में, यहाँ तक कि लगभग 90 साल पहले तक, घावों का उपचार एक बड़ी चुनौती थी।

प्रश्न : आप एक एंटीबॉयोटिक को कैसे परिभाषित करेंगे?

प्राचीन भारत में, हल्दी का उपयोग घावों के इलाज के लिए किया जाता था। लेकिन, हल्दी को एक रोगाणुरोधक या आयुर्वेदिक दवा माना जाता है, न कि एंटीबॉयोटिक। आप 'एंटीबॉयोटिक' को कैसे परिभाषित करेंगे? एक सुराग - एक प्रकार के सूक्ष्मजीव इसे अन्य प्रकार के सूक्ष्मजीवों के खिलाफ़ पैदा करते हैं।

दिलचस्प बात यह है कि यद्यपि प्राचीन मिस्र के लोगों को एंटीबॉयोटिक दवाओं के बारे में नहीं पता था, लेकिन वे संक्रमित घावों को जल्दी ठीक करने के लिए उन पर फन्फूद युक्त ब्रेड का एक टुकड़ा रख दिया करते थे।

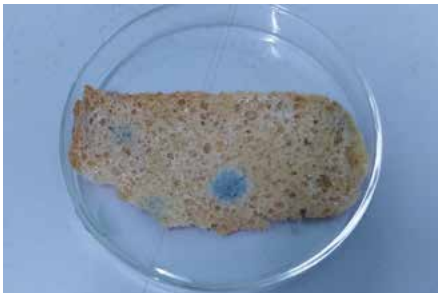

प्राचीन मिस्त्र के लोग संक्रमित घावों को भरने के लिए उन पर पर फन्फूद वाली ब्रेड का एक टुकड़ा रख देते थे।

सोचो फफून्द युक्त ब्रेड में ऐसा क्या होगा जो घावों को भरने में मदद करता होगा?

फ्लेमिंग की नज़र से

हम जानते हैं कि कुछ बैक्टीरिया और कवक ऐसे यौगिकों का उत्पादन करते हैं जो अन्य सूक्ष्मजीवों को मार सकते हैं। ये रसायन प्रतिस्पर्धी वातावरण में बैक्टीरिया और कवक को जीवित रहने में मदद करते हैं। यह खोज सबसे पहले 1928 में वैज्ञानिक सर अलेक्जेंडर फ्लेमिंग ने की थी।

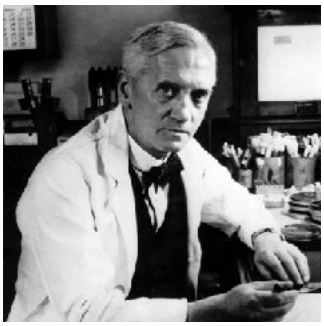

अलेक्जेंडर फ्लेमिंग को एंटीबॉयोटिक दवाओं की खोज का श्रेय दिया जाता है।

फ्लेमिंग लन्दन के एक अस्पताल में *स्टैफिलोकोकस* नामक एक संक्रामक बैक्टीरिया का अध्ययन कर रहे थे (चलो इसे स्टेफ कहते हैं)। स्टेफ कई प्रकार के संक्रमणों का कारक होता है - इनमें मुँहासे, गले में ख़राश से लेकर निमोनिया और मूत्र मार्ग के मुख्य संक्रमण तक शामिल हैं। फ्लेमिंग ने अपनी प्रयोगशाला में पेट्री डिश में स्टेफ का सम्वर्धन किया। एक दिन, फ्लेमिंग ने ग़लती से एक खिड़की के पास पेट्री डिश छोड़ दी। और वह अगले दिन छुट्टी पर चले गए। छुट्टी से लौटने पर, फ्लेमिंग ने देखा कि

क्या आप जानते हैं कि प्रयोगशाला में बैक्टीरिया को कैसे विकसित किया जाता है?

हमारी तरह बैक्टीरिया को भी भोजन की ज़रूरत होती है। वैज्ञानिक पेट्री डिश पर बैक्टीरिया को पोषक माध्यम के रूप में भोजन प्रदान करते हैं। प्रत्येक डिश को बन्द करने के लिए ढक्कन होता है। पोषक माध्यम वाले पेट्री डिश को नियंत्रित तापमान वाले बन्द कक्ष में रखा जाता है, जिसे इनक्यूबेटर कहा जाता है। इनक्यूबेटर में तापमान को इस तरह समायोजित किया जा सकता है कि वह उन विशिष्ट बैक्टीरिया या अन्य सूक्ष्मजीवों के अनुकूल हो, जिनको पनपाने का हम प्रयास कर रहे हैं।

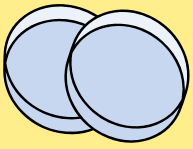

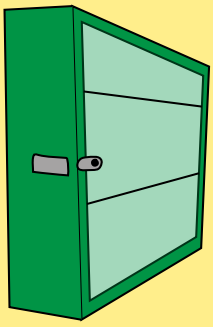

खिड़की में रखी पेट्री डिश पर एक संदूषक हरी फफून्द (स्टेफ के अलावा) उग आई थी। हैरानी की बात थी कि स्टेफ की वे कालोनियाँ आकार में बहुत छोटी थीं जो फफून्द के आसपास थीं। कुछ मरती हुई प्रतीत हुईं, जैसे कि फफून्द ने अपने आसपास के क्षेत्र में कुछ छोड़ा हो!

क्या आप एकल बैक्टीरिया कोशिका को नग्न आँखों से देख सकते हैं?

शायद नहीं, है ना? क्या होगा अगर लाखों बैक्टीरिया कोशिकाएँ एक समूह बना लें? हाँ तब आप उन्हें नग्न **आँखों** से देख सकते हैं! जब एक बैक्टीरिया कोशिका लाखों कोशिकाओं में विभाजित होकर एक समूह बना लेती है, तो इस समूह को नग्न आँखों से देखा जा सकता है, और इसे 'कॉलोनी' कहा जाता है। बैक्टीरिया की कॉलोनी का आकार एक पिन के सिरे से लेकर छोटे बटन तक का हो सकता है।

सोचो

प्रश्न : फ्लेमिंग अपनी प्लेटों पर बैक्टीरिया विकसित करने की कोशिश कर रहे थे। लेकिन, अन्त तक आते-आते उन्हें कुछ फफून्द भी मिलीं।

- आपके अनुसार फफून्द प्लेट पर किस प्रकार आई होंगी?

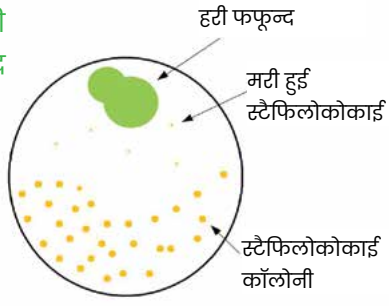

- यह फफून्द है या बैक्टीरिया?

- आपको क्या लगता है कि फफून्द के आस–पास बैक्टीरिया क्यों नहीं पनप पाए?

प्रश्न : संदूषित प्लेट को एक खिड़की के पास छोड़ दिया गया था। क्या होता अगर फ्लेमिंग ने याद से प्लेट को एक इनक्यूबेटर के अन्दर (विकसित होते हुए स्टेफ के लिए चाहे गए तापमान पर) रख दिया होता? आपको क्या लगता है कि तब क्या होने की सम्भावना थी? तब क्या फफून्द धीरे-धीरे विकसित हुई होती (क्योंकि प्लेट में ब्रेड पर फफून्द सामान्य तापमान पर पनपती है)?

प्रश्न : कल्पना कीजिए कि आप फ्लेमिंग होते और प्लेट को अजीब अवान्छित फफून्द के साथ देखते तो आप क्या करते?

संदूषित प्लेट ने फ्लेमिंग को सोचने पर मजबूर कर दिया : फफून्द के आस-पास वाले क्षेत्र में बैक्टीरिया पनपने में क्यों असमर्थ थे? उन्होंने पहचाना कि यह फफून्द पेनिसिलियम नोटेटम है, और सोचा कि हो-न-हो, यह फफून्द प्लेट में कोई बैक्टीरिया रोधी रसायन छोड़ रही है। इसकी जाँच के लिए, उन्होंने पोषक तत्वों से भरपूर तरल पदार्थ में फफून्द को विकसित किया। तरल पदार्थ ने भी बैक्टीरियारोधी प्रवृत्ति दर्शाई। फ्लेमिंग ने पोषक तत्व वाले माध्यम में उपस्थित बैक्टीरियारोधी रसायन को 'पेनिसिलिन' नाम दिया।

फ्लेमिंग ने विचार किया कि क्या पेनिसिलिन का इस्तेमाल मनुष्यों में बैक्टीरिया के संक्रमण को नियन्त्रित करने के लिए किया जा सकता है। इसका जवाब पता करने में दो चुनौतियाँ थीं। जिस पोषक तरल माध्यम में फफून्द को विकसित किया गया था, उसकी बैक्टीरियारोधी प्रवृत्ति अल्पकालिक थी। मनुष्यों के लिए उपयोग में लाने हेतु पोषक तरल माध्यम से उस रसायन को अलग करने की आवश्यकता थी। अगले 10 वर्षों तक, फ्लेमिंग ने फफून्द के पोषक माध्यम से पेनिसिलिन के एक सक्रिय रूप को शुद्ध रूप में प्राप्त करने के लिए कई अलग-अलग तरीक़े आजमाए, लेकिन उन्हें सफलता नहीं मिली।

सोचो

यदि आप फ्लेमिंग की जगह होते, तो आप इस समस्या को कैसे हल करते?

पेनिसिलिन का पहला मानव उपयोग

फ्लेमिंग ने 1939 में, ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय के वैज्ञानिकों, हॉवर्ड फ्लोरे और अर्न्स्ट चैन के साथ इस समस्या को साझा किया। उन दोनों ने एक अन्य वैज्ञानिक - नॉर्मन हेतली के साथ मिलकर इस पर काम किया। उन्होंने फ्लेमिंग द्वारा काम में लिए गए तरीक़ों से इतर अन्य तरीक़े अपनाए और उसी वर्ष पेनिसिलिन के एक 'सक्रिय' रूप को प्राप्त करने में कामयाब रहे।

पेनिसिलिन का यह सक्रिय रूप संक्रमणों के खिलाफ़ कितना प्रभावी था यह जाँचने के लिए तीनों वैज्ञानिकों ने प्रयोगशाला में काम आने वाले कुछ चूहों को एक अत्यधिक संक्रामक बैक्टीरिया से संक्रमित किया और उनमें से आधे चूहों को पेनिसिलिन दिया।

सोचो

प्रश्न : आपके अनुसार वैज्ञानिकों ने संक्रमित चूहों में से केवल आधे चूहों को ही पेनिसिलिन क्यों दिया?

प्रश्न : आपके अनुसार संक्रमित चूहों के साथ क्या हुआ होगा :

- जिनको पेनिसिलिन दिया गया?
- जिनको पेनिसिलिन नहीं दिया गया?

प्रश्न : आपके अनुसार वैज्ञानिकों ने पहले चूहों पर पेनिसिलिन के सक्रिय रूप की जाँच करने का प्रयास क्यों किया?

सुराग : क्या वे जानते थे कि पेनिसिलिन मनुष्यों के लिए सुरक्षित था?

जिन संक्रमित चूहों को पेनिसिलिन नहीं मिली, उनकी मृत्यु हो गई। शुक्र है कि जिन चूहों को पेनिसिलिन मिली, वे संक्रमण से बच गए। इससे पुष्टि होती है कि पेनिसिलिन का सक्रिय रूप चूहों के लिए न केवल क्रियाशील और हानिरहित रहा, बल्कि बैक्टीरिया के संक्रमण को नियंत्रित करने में भी मददगार रहा।

अगला कार्य मनुष्यों के उपयोग के लिए पर्याप्त मात्रा में पेनिसिलिन का उत्पादन करना था। एक तरफ, फ़्लोरे ने छह महिलाओं को रोज़गार दिया, जो कि 'पेनिसिलिन गर्ल्स' के रूप में प्रसिद्ध हुईं, जिन्होंने फफून्द से 'पेनिसिलिन' प्राप्त करने के लिए प्रति सप्ताह 2पाँउड कमाए। दूसरी ओर, हीटली ने फफून्द विकसित करने के लिए हर खाने के डिब्बे, शय्या मलपात्र (बेड पैन), और बोतलों का इस्तेमाल किया। उन्होंने इस उद्देश्य के लिए 500 ऐसे सिरेमिक बेड पैन भी डिज़ाइन किए जिन्हें थप्पी बनाकर रखा जा सकता था।

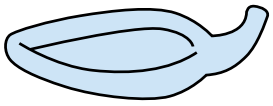

हीटली ने स्टेफ को विकसित करने के लिए 500 स्टैकेबल सिरेमिक बेडपैन तैयार किए।

कड़ी मेहनत और फफून्द को विकसित करने के लिए हज़ारों लीटर पोषक माध्यम का उपयोग करने के बावजूद, तीनों वैज्ञानिक पेनिसिलिन के सक्रिय रूप का केवल कुछ मिलीग्राम प्राप्त करने में सफल रहे।

हमने इस कहानी की शुरुआत इतिहास के उस दौर से की थी जब मामूली चोटों के कारण भी मृत्यु हो जाया करती थी। इस तरह का एक उदाहरण 1941 में सामने आया, जब अल्बर्ट नाम के एक व्यक्ति को मुँह पर गुलाब के काँटों से खरोंचें लग गईं। इन खरोंचों ने जल्द

ही भयावह संक्रमण का रूप ले लिया। अल्बर्ट को पेनिसिलिन दिया गया था और उसमें सुधार के कुछ लक्षण दिखाए दिए थे। लेकिन, उसके तुरन्त बाद उसकी मृत्यु हो गई क्योंकि उसे पूरी तरह से ठीक करने के लिए पेनिसिलिन पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध नहीं थी। इससे पता चलता है कि उस समय मामूली घावों के लिए भी पेनिसिलिन की कितनी अधिक ज़रूरत थी।

चमत्कारी दवा

द्वितीय विश्वयुद्ध के कारण ब्रिटिश विश्वविद्यालयों में अनुसन्धान बुरी तरह प्रभावित हुआ था। पेनिसिलिन के पर्याप्त मात्रा में सक्रिय उत्पादन के अपने प्रयासों को जारी रखने के लिए फ्लोरे और हीटली ने अमेरिका का रुख़ किया। यहाँ आकर उन्होंने एक अप्रत्याशित खोज की। उनका एक सहायक एक फल लेकर आया जिस पर एक 'सुनहरी फफून्द' उग रही थी। जाँच करने पर पता चला कि यह फफून्द (पेनिसिलियम क्राइसोजेनम) पेनिसिलियम नोटेटम (फ्लेमिंग की हरी फफून्द) की क़रीबी रिश्तेदार थी। जब फ्लोरे और हीटली ने पाया कि सुनहरी फफून्द फ्लेमिंग की हरी फफून्द की तुलना में 200 गुना अधिक पेनिसिलिन उत्पन्न करती है, तो उनकी ख़ुशी का ठिकाना नहीं था!

क्या आप सुनहरी फफून्दयुक्त फल के नाम का अनुमान लगा सकते हैं?

(सुराग : यह एक गर्मियों का फल है)

ख _ _ जा

आख़िरकार, ये वैज्ञानिक बड़ी मात्रा में सक्रिय पेनिसिलिन का उत्पादन करने में सफल रहे। एंटीबॉयोटिक ने युद्ध के दौरान घायल हुए सैकड़ों सैनिकों को बैक्टीरिया के संक्रमण से होने वाली मौत से बचाया। यह चमत्कारिक दवा तब से हज़ारों वर्षों की सबसे महत्त्वपूर्ण खोजों में से एक बन गई है!

प्रश्न : आपके अनुसार युद्ध ने पेनिसिलिन की खोज की प्रक्रिया को किस प्रकार प्रभावित किया होगा?

प्रश्न : आपके अनुसार क्या पेनिसिलिन ने युद्ध के दौरान लाखों लोगों को बचाने में मदद की? क्या यह घावों को भरने में कारगर रही?

प्रश्न : मान लीजिए कि आप उस कमेटी के सदस्य हैं, जिसे पेनिसिलिन की खोज के लिए नोबेल पुरस्कार विजेताओं का चयन करना है। आप इस पुरस्कार को देने के लिए केवल तीन लोगों को चुन सकते हैं। अब जब आपने पूरी कहानी पढ़ ली है, तो आप किन लोगों को चुनेंगे? क्यों?

प्रश्न : तीर के निशानों का उपयोग करते हुए नीचे दिए गए शब्दों को जोड़िए। प्रत्येक तीर के ऊपर दोनों शब्दों को जोड़ता एक उपयुक्त कथन लिखें। आप निम्न जुमलों में से चयन कर सकते हैं - "अगर छोड़ दिया गया", "अग्रसर हो सकता है", "परिणाम स्वरूप हो सकता हैं", "यदि इलाज किया जाए तो" या आप कोई अन्य कथन चुन सकते हैं जो आपको उपयुक्त लगे। आपके लिए उदाहरण स्वरूप एक कथन चित्र में भर दिया गया है।

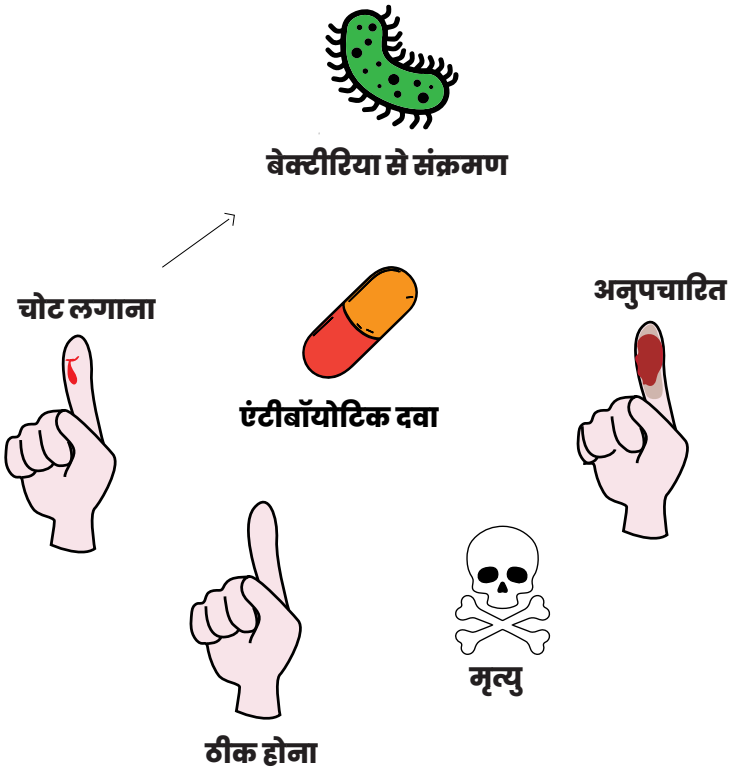

Image credits: for the image of Alexander Fleming on Pg. 2: Calibuon at English Wikibooks, Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Alexander_Fleming_3.jpg. License: Public Domain. All other images have been provided by: Rohini K.

रोहिणी करन्दीकर पूर्व में होमी भाभा सेन्टर फॉर साइंस एजुकेशन (HBCSE), TIFR, मुम्बई में पोस्टडॉक्टरल फेलो थीं। अब वह क्यूरियोसिटी जिम, मुम्बई में एक पाठ्यक्रम और नवाचार प्रबन्धक के रूप में काम करती हैं। रोहिणी से rohinimd25@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है।

सुभोजीत सेन स्कूल ऑफ़ बॉयोलॉजिकल साइंसेज, UM-DAE सेन्टर फॉर एक्सीलेन्स इन बेसिक साइंसेज, मुम्बई विश्वविद्यालय (कलिना कैम्पस), मुम्बई में डीबीटी रामलिंगस्वामी फेलो हैं। उनसे subhojit.sen@cbs.ac.in पर सम्पर्क किया जा सकता है।

लीना फड़के रामनारायण रुइया कॉलेज, माटुंगा, मुम्बई में एसोसिएट प्रोफ़ेसर रही हैं।

अनुवाद : यशोधरा कनेरिया **पुनरीक्षण :** सुशील जोशी

सकता है कि आधुनिक वैज्ञानिक सिद्धान्तों द्वारा मिस्र की उपचार तकनीक में शामिल सक्रिय घटक की पहचान हमें किस प्रकार अप्रभावी या जहरीली फफून्दों के उपयोग से होने वाली दुर्घटनाओं को कम करने का अवसर देती है। इसका उपयोग यह बताने के लिए भी किया जा सकता है कि किस प्रकार बड़े पैमाने पर उत्पादन और शोधन तकनीकों ने पेनिसिलिन का उपयोग सबसे प्रभावी खुराक में करना सम्भव बनाया है।

चर्चा का समापन करने से पहले, शिक्षक विद्यार्थियों को निम्न खुले प्रश्नों के बारे में सोचने के लिए प्रोत्साहित करने के लिए कोष्ठक में दी गई थीम्स का उपयोग कर सकते हैं :

- आपने इस अभ्यास से कौन-सी नई चीज़ें सीखीं? (थीम : संयोग की भूमिका, आकस्मिक खोजें, सहयोग, टीमों में काम करने का प्रभाव)।
- वर्तमान समय में 'एंटीबॉयोटिक्स के इतिहास' के बारे में जानना किस प्रकार सार्थक है? (थीम : दवा की खोज को आज भी इसी तरह से जानवरों पर और इंसानों पर परीक्षणों की समय-खपाऊ व गहन प्रक्रियाओं से गुज़रना पड़ता है। उसके बाद ही उनके लाभ रोगियों तक पहुँचते हैं।)
- बैक्टीरिया और कवक पूरे मानव इतिहास में मौजूद रहे हैं। वह क्या था जिसने 1928 में पेनिसिलिन की खोज को गति दी थी? (थीम : एक ही प्लेट पर बैक्टीरिया और कवक की वृद्धि का आकस्मिक अवलोकन जिससे उनका परस्पर विरोध उजागर हुआ।)
- यदि पेनिसिलिन की खोज में इतने सारे वैज्ञानिक और सहायक शामिल थे, तो केवल फ्लेमिंग का नाम ही क्यों लोकप्रिय हुआ है? (थीम : मुख्य खोजकर्ता)।

चलते-चलते

विद्यार्थियों को वास्तव में कभी भी वैज्ञानिक प्रक्रिया का अनुभव नहीं दिया जाता है। प्राकृतिक विश्व के अवलोकनों से विचार कैसे प्रभावित होते हैं? प्रेक्षित परिघटनाओं की वैज्ञानिक व्याख्याओं के लिए किस प्रकार हम तुलना (कन्ट्रोल) और तर्कसंगत सोच के वैज्ञानिक सिद्धान्तों का उपयोग करते हैं? इन गतिविधियों का उद्देश्य विद्यार्थियों को वर्णनात्मक और प्रायोगिक साक्ष्य दोनों प्रकार के अनुभव से रूबरू करवाना है। ये गतिविधियाँ सूक्ष्मजीवों की दुनिया से परिचय भी प्रदान करती हैं और विद्यार्थियों को यह समझने में मदद करती हैं कि कुछ सूक्ष्मजीव उपयोगी होते हैं और कुछ हानिकारक। अन्त में, ये गतिविधियाँ विद्यार्थियों को यह समझने में मदद करती हैं कि विज्ञान में किसी भी विचार के फलने-फूलने में कई लोग शामिल होते हैं, हालाँकि केवल कुछ ही भाग्यशाली लोगों को मान्यता मिलती है या उनके योगदान के लिए उन्हें नोबेल पुरस्कार से सम्मानित किया जाता है।

मुख्य बिन्दु

- फ्लेमिंग द्वारा पेनिसिलिन की आकस्मिक खोज को फिर दोहराना विद्यार्थियों को विज्ञान में पैने अवलोकनों और आकस्मिक खोजों में इसकी भूमिका को समझने के अवसर प्रदान करेगा।
- मानव उपयोग के लिए आवश्यक मात्रा में पेनिसिलिन उत्पन्न करने के संघर्ष की समझ विद्यार्थियों को यह समझने में मदद करेगी कि आकस्मिक अवलोकन एक जटिल (वैज्ञानिक) प्रक्रिया की शुरुआत भर है जो समय, धैर्य और गहनता की माँग करती है।
- हावर्ड फ्लोरे, अर्नस्ट चैन, नॉर्मन हीटली और 'पेनिसिलिन गर्ल्स' के द्वारा पेनिसिलिन को प्रयोगशाला से लोगों के लिए उपलब्ध करवाने की प्रक्रिया के बारे में बातचीत विद्यार्थियों को आधुनिक विज्ञान की अत्यधिक सहयोगी प्रकृति से परिचित कराने में मदद करेगी।
- युद्ध की भूमिका और पेनिसिलिन की कहानी में शामिल कई लोगों के अनसुने योगदान पर चिन्तन, विद्यार्थियों को विज्ञान के राजनीतिक और मानवीय आयामों की बेहतर समझ प्रदान करने का अवसर देंगे।
- एंटीबॉयोटिक दवाओं की उपस्थिति में सचमुच सूक्ष्मजीवों का संवर्धन करने से, विद्यार्थी फ्लेमिंग के प्रारम्भिक अवलोकन की सराहना करने में सक्षम होंगे। वे रसोई में मिलने वाली सामान्य चीज़ों का उपयोग करके उनके आसपास के सूक्ष्मजीवों की दुनिया की जाँच-पड़ताल करने का एक नया तरीक़ा सीखेंगे।

आभार :

लेखकगण लीना फड़के, एसोसिएट प्रोफ़ेसर (सेवानिवृत्त) रामनारायण रुइया कॉलेज, मुम्बई को आलू की स्लाइस प्रयोग और पेनिसिलिन की खोज पर वर्णन के विकास के लिए धन्यवाद देना चाहते हैं। हम भारत सरकार के, परमाणु ऊर्जा विभाग के तहत, विज्ञान प्रतिभा परियोजना (सं. R & D-TFR-0650) के आभारी हैं। हम डीबीटी रामलिंगस्वामी फैलोशिप; इन गतिविधियों के लिए क्षेत्र परीक्षण का हिस्सा रहे सभी विद्यार्थियों और इन गतिविधियों के विकास के दौरान अपने सुझाव प्रदान करने के लिए विज्ञान प्रतिभा के सभी सदस्यों का भी धन्यवाद करते हैं।

टिप्पणियाँ :

1. यह लेख विज्ञान शिक्षा के लिए वर्तमान में होमी भाभा केन्द्र द्वारा, TIFR, मुम्बई, विज्ञान प्रतिभा परियोजना (https://vigyanpratibha.in/index.php/the-accidental-discovery/) की अधिगम इकाई 'द एक्सीडेन्टल डिस्कवरी' पर आधारित है। विज्ञान प्रतिभा केन्द्रीय विद्यालय, जवाहर नवोदय विद्यालय और परमाणु ऊर्जा केन्द्रीय विद्यालयों के आठवीं-बारहवीं कक्षा के विद्यार्थियों के लिए केन्द्र सरकार की एक पहल है। इस विज्ञान पोषण कार्यक्रम का उद्देश्य विविध पृष्ठभूमि के विद्यार्थियों को स्कूली विज्ञान और गणित सीखने के लिए गतिविधि आधारित दृष्टिकोण में संलग्न कर उनमें समीक्षात्मक/समालोचनात्मक कौशल विकसित करना है।
2. Source for the image used in the background of the article title: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Three_tubes_of_penicillin_powder,_two_of_International_Stand_Wellcome_L0059014.jpg. Credits: Wellcome Images (https://wellcomeimages.org/indexplus/image/L0059014.html), a website operated by Wellcome Trust, Wikimedia Commons. License: CC-BY

References:

1. Douglas Allchin (2002) Scientific Myth-Conceptions, Fourth International Seminar on the History of Science and Science Education: Issues and Trends, Stephen Norris (Section Ed.) URL: http://douglasallchin.net/papers/myth.pdf.
2. Alexander Fleming biography: https://www.biography.com/people/alexander-fleming. Last updated: Jun 26, 2019.
3. Discovery and Development of Penicillin. International Historic Chemical Landmark. URL: https://www.acs.org/content/acs/en/education/whatischemistry/landmarks/flemingpenicillin.html.
4. Howard Markel. The Real Story Behind Penicillin. PBS Newshour. URL: https://www.pbs.org/newshour/health/the-real-story-behind-the-worlds-first-antibiotic.
5. Alexander Fleming (1929). On the bacterial action of a culture of Penicillium with special reference to their use in the isolation of B. influenzae. British Journal of Experimental Pathology, 10(3): 226–236.
6. Kelly Swain (2017). The Penicillin girls (and guys). The Lancet, Vol 389, pp.1507.

रोहिणी करन्दीकर पूर्व में होमी भाभा सेन्टर फॉर साइंस एजुकेशन (HBCSE), TIFR, मुम्बई में पोस्टडॉक्टरल फेलो थीं। अब वह क्यूरियोसिटी जिम, मुम्बई में एक पाठ्यक्रम और नवाचार प्रबन्धक के रूप में काम करती हैं। रोहिणी से rohinimd25@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है।

सुभोजीत सेन स्कूल ऑफ़ बॉयोलॉजिकल साइंसेज, UM-DAE सेन्टर फॉर एक्सीलेन्स इन बेसिक साइंसेज, मुम्बई विश्वविद्यालय (कलिना कैम्पस), मुम्बई में डीबीटी रामलिंगस्वामी फेलो हैं। उनसे subhojit.sen@cbs.ac.in पर सम्पर्क किया जा सकता है।

अनुवाद : यशोधरा कनेरिया **पुनरीक्षण :** सुशील जोशी

अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन फॉर डेवलपमेंट की ओर से मनोज पी. द्वारा मुद्रित और प्रकाशित।

सुप्रभा कलरग्राफ़िक्स (प्रा.) लिमिटेड, नम्बर 10, 11, 11-ए, जे.सी. औद्योगिक क्षेत्र, येलाचेनहल्ली, कनकपुरा रोड, बेंगलूरु 560062 में मुद्रित।

अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय, पिक्सेल बी ब्लॉक, पीईएस कॉलेज ऑफ़ इंजीनियरिंग कैम्पस, इलेक्ट्रॉनिक्स सिटी, बेंगलूरु 560100 से प्रकाशित। सम्पादक : रामगोपाल वल्लत और चित्रा रवि

मोना या मोनू?

रोहिणी चिन्ता

मिट्टू अभी सो ही रहा था कि उसकी माँ ने चुपके से उसके कमरे में आकर उसका तोहफ़ा मेज़ पर रखा और उसके लिए 'हैप्पी बर्थडे' गाने लगी। मिट्टू अपनी आँख मलते हुए एक बड़ी-सी मुस्कान के साथ उठा और बोला, ''शुक्रिया!" एक क्षण बाद मिट्टू की आँखें फैल गईं। ''अरे वाह! क्लाउन फ़िश। मुझे बहुत अच्छी लगती हैं। शुक्रिया।"

मिट्टू अपने बिस्तर से कूदकर माँ के गले लगकर बोला, ''माँ, मैं जानता हूँ आपके तोहफ़े हमेशा अनोखे होते हैं, इस क्लाउन फ़िश में क्या ख़ास बात है?"

माँ ने मुस्कराते हुए जवाब दिया, ''यह क्लाउन फ़िश अलग-थलग पड़ी मिली थी तो मैंने इसकी देखभाल की ज़िम्मेदारी ले ली। पता है क्लाउन फ़िश के समूह की मुखिया एक इकलौती बड़ी मादा होती है।"

"आपकी तरह, माँ?" मिट्टू ने शरारत से कहा।

माँ ने बात आगे बढ़ाई, ''और, क्लाउन फ़िश उन कुछ प्रजातियों में से हैं जो अपना लिंग बदल सकते हैं। है न अद्भुत बात?"

"पर कैसे? क्यों? मतलब...वाह!" मिट्टू हैरान रह गया।

"इस पर नाश्ते पर चर्चा करें?" माँ ने सुझाव दिया।

मिट्टू बिना समय गँवाए फटाफट तैयार हो गया। अपना पसन्दीदा गरम-गरम डोसा खाते हुए उसने माँ से अनुरोध किया, ''अब बताओ न।"

माँ मिट्टू के पास की कुर्सी पर बैठते हुए बोलीं, ''क्लाउन फ़िश पानी के अन्दर चट्टानों के बीच छोटे-छोटे समूहों में रहती हैं, अपने शिकारियों से छुपी हुई। समूह की सारी मछलियाँ निष्क्रिय जननांगों के साथ जन्म लेती हैं। उनका सिर्फ़ एक ही काम होता है कि वह एक-दूसरे से खाने के लिए प्रतिस्पर्धा करती रहें। जो मछली प्रतिस्पर्धा में बाक़ी मछलियों को पछाड़ दे, वह बाक़ी सबसे ज़्यादा तेज़ी से बढ़ने लगती है। जब यह मछली एक निश्चित आकार की हो जाती है, तब उसमें एक विशिष्ट हार्मोन्स सक्रिय हो जाते हैं। इन हार्मोन्स से नर जननांग विकसित होते हैं। और जल्दी ही समूह की सबसे सक्षम युवा मछली नर में तब्दील हो जाती है।"

"क्या बड़ी होकर सभी मछलियाँ नर मछली में बदल जाती हैं?"

"नहीं। जब उनमें से एक नर में तब्दील हो जाती है तो वह बाक़ी सब युवा मछलियों पर हावी होने लगती है और वे सब इतने तनाव में आ जाती हैं कि बढ़ ही नहीं पातीं।"

"मतलब जो समूह में सबसे सक्षम मछली नर बन जाती है वह बाक़ी सब मछलियों पर दादागिरी करके उन्हें बढ़ने ही नहीं देती?" मिट्टू ने दोहराया।

"दूसरी सबसे सक्षम। हर समूह की मुखिया एक मादा होती है, याद है?" माँ ने कहा।" वह सबसे सक्षम, सबसे बड़ी व सबसे आक्रामक होती है। पूरे समूह में एक ही मादा होती है। वह अपने बड़े आकार के दम पर नर मछली को क़ाबू में रखती है ताकि वह मादा के आकार तक न बढ़ पाए।"

"कैसे?"

"उसी तरह जैसे नर मछली बाक़ी सब मछलियों को क़ाबू में रखती है। वह नर मछली के चट्टानों में आने-जाने की जगह पर नियंत्रण रखती है और इस बात पर भी नियंत्रण रखती है कि वह कितना खाए। अगर नर उसकी दादागिरी को झेल जाता है और मादा के साथ बन्धन बना पाता है, तो वे दोनों जीवन भर साथ रहते हैं। लेकिन मादा हमेशा हावी रहती है।" माँ ने समझाया।

"सचमुच?"

लिंग-निरपेक्ष क्लाउनफ़िश

सक्षम युवा नर में बदलते हुए...

मुखिया मादा

...और देख-भाल करने वाला भी

मादा की जगह लेते हुए

"हाँ। तुम वाक़ई नर को मादा के आगे-पीछे घूमते देख सकते हो। इतना ही नहीं मादा के दिए गए अण्डों को निषेचित करने के बाद नर उनकी देखभाल भी करता है, जब तक कि अण्डे से क्लाउन फ़िश की अगली पीढ़ी नहीं निकल आती।"

"वाह!" मिट्टू ताज्जुब से बोला।

"और जब प्रमुख मादा की मौत हो जाती है, तब नर अपने आप को मादा में तब्दील करके समूह का मुखिया बन जाता है।"

"क्या?" मिट्टू ने हैरानी से कहा।

"इस दौरान समूह का सबसे बड़ा युवा अगले नर में तब्दील हो जाता है", माँ ने आगे बताया। "इससे यह सुनिश्चित हो जाता है कि क्लाउन फ़िश बिना अपनी रीफ़ की सुरक्षा को छोड़े प्रजनन करती रहे।"

"क्या मादा फिर से नर में बदल सकती है?"

"नहीं। मादा हमेशा मादा ही रहेगी। और चूँकि यह लिंग परिवर्तन क्रम में होता है — युवा से नर और नर से मादा — क्लाउन फ़िश को क्रमिक उभयलिंगी कहते हैं।"

"वे ऐसा कैसे करते हैं, माँ?"

"हर क्लाउन फ़िश के डीएनए में नर और मादा दोनों हार्मोन के 'जीन्स' होते हैं। जब तक मादा मछली आस-पास हो, नर मछली सिर्फ़ नर हॉर्मोन का उपयोग करती है। लेकिन मादा मछली के मर जाने पर नर मछली बग़ैर किसी अंकुश के भोजन प्राप्त कर करती है। जब वह एक उचित आकार की हो जाती है, तब वह नर हॉर्मोन का उपयोग रोककर मादा हार्मोन्स का उपयोग करने लगती है। ये हार्मोन्स मादा जननांगों के विकास में सहायक होते हैं और इस प्रकार नर आगे चलकर मादा में तब्दील हो जाता है।"

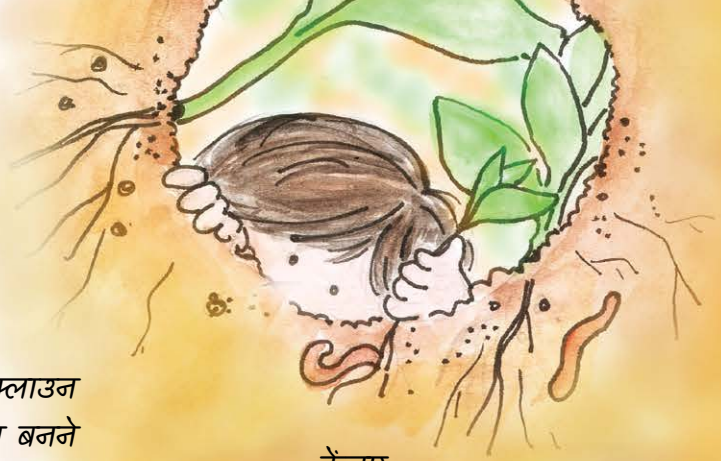

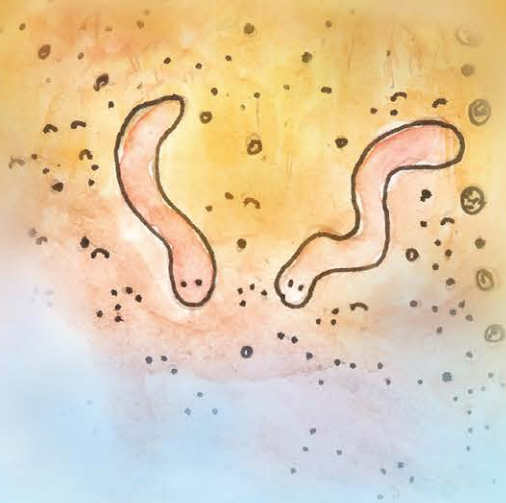

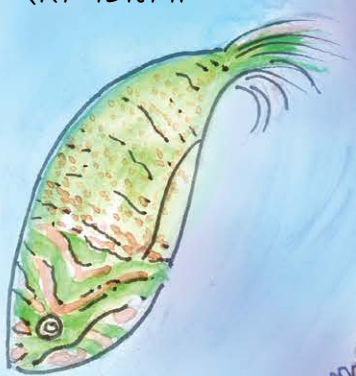

मिट्टू कुछ समय के लिए सोच में पड़ गया, "तो, क्लाउन फ़िश ऐसा अपने आप को बड़ी मछलियों का खाना बनने से बचाने की कोशिश में करती हैं? क्या और मछलियाँ भी इस तरह से विकसित हुई हैं?"

"मुझे रासे और गप्पी के बारे में मालूम है।"

"और केंचुए?"

"केंचुए थोड़े अलग होते हैं। हर केंचुए में नर और मादा दोनों जननांग होते हैं। इसीलिए उन्हें समक्षणिक उभयलिंगी कहते हैं।"

"तो केंचुए एक ही समय पर नर और मादा दोनों होते हैं।" मिट्टू ने मन में सोचा। "माँ, क्या बैक्टीरिया भी ऐसे ही होते हैं?"

"बैक्टीरिया अलैंगिक होते हैं।"

"माँ, इसे और अच्छे से समझाओ।"

"ठीक है। सारे सजीव जनन करते हैं। इससे सुनिश्चित होता है उनकी प्रजाति जीवित रहेगी। जीवाणु, पौधे, पशु, इन्सान सब..."

मिट्टू ने सर हिलाते हुए कहा, "और मछलियाँ भी।"

"पहले नर या मादा नहीं थे, कोई नर पौधा या मादा पौधा नहीं थे। सिर्फ़ सजीव होते थे। जैसे बैक्टीरिया।"

"अच्छा!"

केंचुए

गप्पी मछलियाँ

रासे मछलियाँ

"इन बैक्टीरिया ने अलैंगिक रूप से सन्तान पैदा की। अर्थात एक जनक कोशिका दो पुत्री कोशिकाओं में विभाजित हो गई। या यह कह सकते हैं कि इन्होंने ख़ुद की नक़ल (प्रतिकृति) बना ली।" माँ ने मिट्टू के सामने मिट्टी की एक गेंद बनाकर, उसे दो बराबर हिस्सों में बाँट दिया। "कुछ इस तरह। प्रतिकृति। लेकिन इसके लिए बैक्टीरिया का पहले ख़ुद एक निश्चित आकार का होना ज़रूरी है ताकि वह दो कोशिकाओं के रूप में अलग-अलग हो सके। इस कारण सभी पीढ़ियों में सन्तान अपने जनक के आकार के समान ही होती हैं, उनसे छोटी नहीं।" माँ ने दिखाकर समझाते हुए कहा।

"समझ आ गया", मिट्टू बोला, "इन सब गेंदों को भी दो हिस्सों में बाँट सकते हैं?"

"बहुत अच्छे।" माँ ने मुस्कराते हुए पूछा, "क्या तुम्हें इन चार सन्तानों के बीच कोई अन्तर दिख रहा है?"

मिट्टू ने चारों को बड़े ध्यान से देखा और कहा "हाँ माँ, कुछ में बाक़ी सबसे ज़्यादा दरारें हैं। यह वाला बाक़ी सबसे छोटा है और यह वाला ज़्यादा नरम दिख रहा है।"

माँ ने उसकी बात सुनकर अपना सिर हिलाया और कहा, "जिस पर्यावरण में बैक्टीरिया विकसित होते हैं वह निरन्तर बदलता रहता है, तो जब जीवाणु अपनी प्रतिकृति बनाते हैं तब उन प्रतिकृतियों में कुछ अन्तर आ जाता है। हर बार जब मातृ कोशिका विभक्त होती है, उसके द्वारा बनी कोशिकाओं में ज़्यादा अन्तर होते हैं। ये अन्तर वंशानुगत परिवर्तन के कारण आते हैं जिन्हें 'उत्परिवर्तन' कहते हैं। और ये उत्परिवर्तन विभिन्न बैक्टीरिया के क्रमिक विकास के लिए उत्तरदायी होते हैं। सभी प्रकार के बैक्टीरिया के डीएनए में कुछ-न-कुछ अलग ज़रूर होता है। इसी प्रकार से नए जीवन का विकास होता है, समझ आया?"

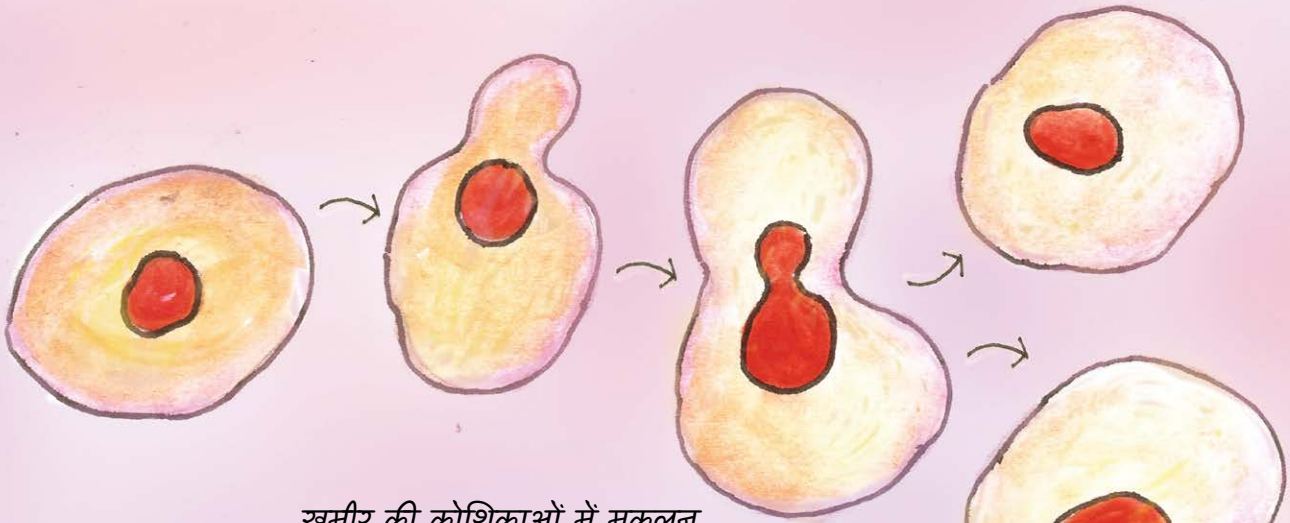

ख़मीर की कोशिकाओं में मुकुलन

"ऐसा होता है कि इनमें से कुछ बैक्टीरिया अपने डीएनए को मिश्रित कर लेते हैं। यह जान-बूझकर नहीं होता। यह मिश्रण या पुनर्संयोजन आनुवंशिक सामग्री के कुछ और परिवर्तनों को सम्भव बनाते हैं। बैक्टीरिया की आबादी में जितनी अधिक विविधता होगी, उतनी ही ज़्यादा इस बात की अपेक्षा होगी कि इनमें से कुछ बैक्टीरिया बदलते पर्यावरण में जीवित रह पाएँगे। दूसरे शब्दों में, हर एक पीढ़ी में, पर्यावरण उस पुनर्संयोजित बैक्टीरिया को चुनेगा जिसका डीएनए मिश्रित हुआ था और उसकी संख्या बढ़ेगी। इस प्रक्रिया को प्राकृतिक चयन की प्रक्रिया कहते हैं।"

"किस तरह का डीएनए मिश्रण बैक्टीरिया की मदद करता है?"

"बहुत प्रकार का; उदाहरण के लिए, मान लो कि एक बैक्टीरिया है जो बहुत अधिक तापमान में जी पाता है और वह अपने डीएनए का मिश्रण किसी ऐसे बैक्टीरिया से कर ले जो एंटीबायोटिक्स का प्रतिरोध करने में सक्षम हो और एक ऐसी सन्तान पैदा करे जिसमें ये दोनों गुण हों। इस पुनर्संयोजन की वजह से दोहरा फ़ायदा हुआ, देखा? लेकिन कभी-कभी यह पुनर्संयोजन बैक्टीरिया की मृत्यु का कारण भी बन जाता है।"

"माँ, क्या दूसरे जीव भी अपना डीएनए एक-दूसरे से मिलाते हैं?" मिट्टू ने पूछा।

"हाँ सभी यूकेरियोट ऐसा करते हैं। जैसे ख़मीर भी अपना प्रतिलिपिकरण अलैंगिक क्रिया द्वारा करता है जिसे मुकुलन कहते हैं। लेकिन बैक्टीरिया के विपरीत ख़मीर का डीएनए उसके नाभिक के अन्दर होता है जो कि एक छड़ी के आकार का होता है, जिसे गुणसूत्र कहते हैं।"

मिट्टू ने माँ को टोकते हुए कहा, "तो क्या जीवाणु अपने डीएनए के सिर्फ़ एक सूत्र का ही पुनर्संयोजन करते हैं और ख़मीर अपने गुणसूत्रों के पूरे समूह का?"

"एकदम सही। हो सकता है कि ख़मीर के डीएनए में विविधता ने दो अलग-अलग जनन-रूपों का विकास किया जिन्हें ए और अल्फ़ा कहा जाता है। ए क़िस्म के ख़मीर का मिश्रण केवल अल्फ़ा क़िस्म की कोशिका के साथ हो सकता है, दूसरे ए स्ट्रेन के साथ नहीं", माँ ने बताया।

"तो क्या ए और अल्फ़ा, नर और मादा जैसे हैं?"

"कुछ-कुछ वैसे ही..." माँ ने बताया।

"तो पहले एक अलैंगिक जीवाणु थे, फिर ए और अल्फ़ा प्रकार के ख़मीर के स्ट्रेन आए।" मिट्टू ने कहा।

माँ ने मिट्टू को शाबाशी देते हुए कहा, "बहुत अच्छे!"

मिट्टू ने पूछा, "फिर?"

"फिर बहु-कोशिकीय जीवों का विकास हुआ और इन सभी बहु-कोशिकीय जीवों में हरेक कार्य विशेष कोशिकाओं व अंगों द्वारा किया जाता है। तो बहु-कोशिकीय जीवों में सन्तान पैदा करने के लिए अलग प्रजनन अंग व कोशिकाएँ होती हैं।"

"और हमारे अन्दर?"

"मानव में एक प्रकार की प्रजनन कोशिका जो लम्बी और गोल होती है, उसे अण्डाणु कहते हैं। और दूसरी प्रकार की प्रजनन कोशिका छोटी, अण्डाकार होती है और जिसकी पूँछ होती है, उसे शुक्राणु कहते हैं। जो अण्डाणु का उत्पादन करती हैं, उन्हें मादा और जो शुक्राणु उत्पादित करते हैं, उन्हें नर कहा जाता है। जब इन अण्डाणु और शुक्राणु का निषेचन होता है तब युग्मनज का निर्माण होता है। मानव में यह युग्मनज शिशु की पहली कोशिका होती है। यह कोशिका आगे विभिन्न कोशिकाओं में विभाजित व विकसित होकर बच्चे का निर्माण करती है।"

मिट्टू सोचने लगा और बोला, "तो क्या मोर और शेर भी हमारी तरह हैं?"

"हाँ। मानव, मोर और शेर सभी एकलिंगी जीव हैं। इन सभी में नर मादा से अलग दिखते हैं। मादा और नर के दिखने में जो अन्तर होता है उसे यौन द्विरूपता कहते हैं।"

मिट्टू ने मछली के टैंक में दो दाने डाले। "लेकिन आपने कहा था कि जब मेरी मछली पैदा हुई तो वो न ही नर थी, न ही मादा थी।"

शेर और शेरनी

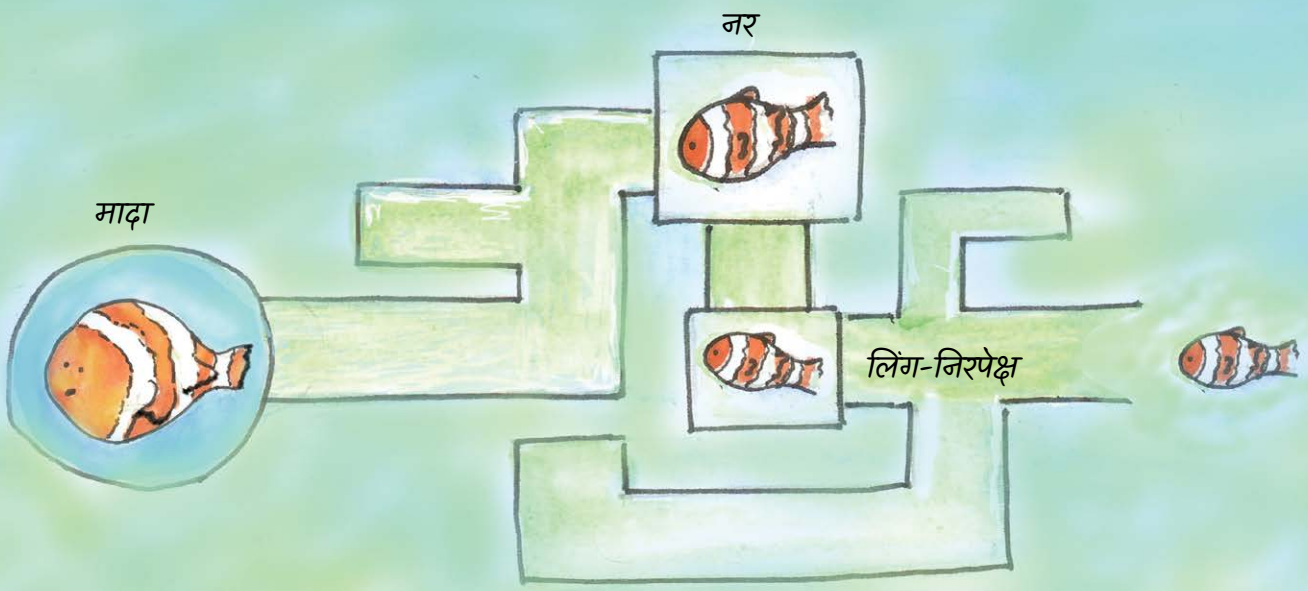

"हाँ। वह नर या मादा में बदल सकती है", माँ ने समझाते हुए कहा, "लेकिन याद रखना कि यह अपने जीवन काल में कभी भी इन तीनों में एक ही होगी — नर मादा या अलैंगिक। कभी भी वह तीनों एक साथ नहीं हो सकती।"

"क्या द्विलिंगियों का विकास एकलिंगी जीवों से हुआ है?"

"हम ऐसा कह सकते हैं। भिन्न-भिन्न लिंगों के माध्यम से गुणों का मिश्रण होना बैक्टीरिया में पाए जाने वाले डीएनए पुनर्मिश्रण की अपेक्षा एक बेहतर तरीक़ा है। अधिक पुनर्मिश्रण का मतलब है कि उनके गुणों में अधिक विविधता होगी। जितनी अधिक विविधता होगी उतनी अधिक सम्भावना होगी कि जीव अपने बदलते पर्यावरण में जीवित रह पाएँगे। लेकिन अगर क्लाउन फ़िश एकलिंगी रहेगी तो उन्हें अपने साथी के तलाश में ज़्यादा घूमना पड़ेगा। यह उनके जीवन के लिए बड़ा ख़तरा हो सकता है क्योंकि बड़ी मछलियाँ उनका शिकार कर सकती हैं। इसलिए जो क्लाउन फ़िश अपनी रीफ़ के किसी नुक्कड़ में ही रहती है, उसके जीवित रहने और प्रजनन करने के मौक़े बढ़ जाते हैं लेकिन अगर एक ही समय पर सारी क्लाउन फ़िश नर हों तो किसी नई मछली का जनन नहीं हो सकता।"

मिट्टू ने पूछा, "अगर सारी मछली मादा हों तो?"

"फिर भी कोई नई मछली पैदा नहीं होगी। लेकिन मछली के डीएनए में कुछ परिवर्तन उसे द्विलिंगी बना दें तो अपनी रीफ़ की सुरक्षा को छोड़े बग़ैर नई मछलियों के जनन की सम्भावना बढ़ जाएगी। ऐसी प्रजातियों में ज़्यादा सम्भावना है कि द्विलिंगी जीवित रहेंगे और प्रजनन करेंगे, है न?"

"ऐसा ही लगता है", सोच में डूबे मिट्टू ने कहा।

"तो ऐसा लगता है कि सबसे पहले अलैंगिक बैक्टीरिया का विकास हुआ था, फिर आगे बढ़ते हुए एकलिंगी जीवों का और द्विलिंगी का विकास सबसे अन्त में हुआ।"

मिट्टू ने माँ से एक आख़िरी प्रश्न पूछा, "क्या आपने पार्टी के बाद गतिविधि की कोई योजना बनाई है?"

माँ ने कहा, "अभी तक तो नहीं।"

"तो मत बनाइएगा। मेरे पास एक खेल की योजना है जो पूरी शाम चलेगा।" मिट्टू ने अपनी क्लाउन फ़िश की तरफ़ इशारा करते हुए कहा, "बताओ — मोनू या मोना? अच्छा लगा?"

माँ ने हँसते हुए कहा, "बहुत अच्छा लगा।"

लेखक के बारे में

रोहिणी चिन्ता यूनिवर्सिटी कॉलेज फ़ॉर वूमेन, हैदराबाद के जेनेटिक्स और बॉयोटेक्नोलॉजी विभाग में असिस्टेंट प्रोफ़ेसर (सी) हैं। उन्हें बच्चों के लिए लिखने का शौक़ है और उनका मानना है कि "एक ख़ुशहाल बचपन एक ख़ुशहाल समाज का निर्माण करता है।" वे तेलुगू और अँग्रेज़ी में लिखती हैं। बच्चों के लिए उनकी लगभग 75 कहानियाँ विभिन्न पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुकी हैं।

अनुवाद : सात्विका ओहरी **पुनरीक्षण :** सुशील जोशी **कॉपी एडिटर :** अनुज उपाध्याय

चित्रांकन एवं डिज़ाइन : विद्या कमलेश

i wonder...
Rediscovering school science

Azim Premji University

Azim Premji University

Other Magazines of Azim Premji University

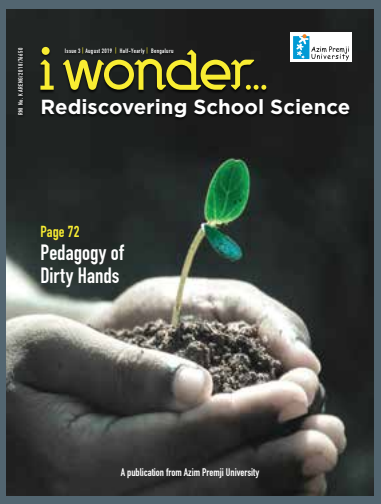

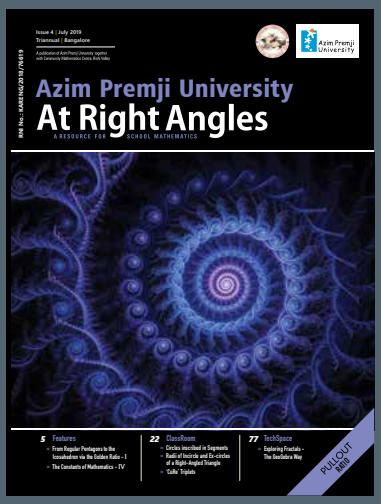

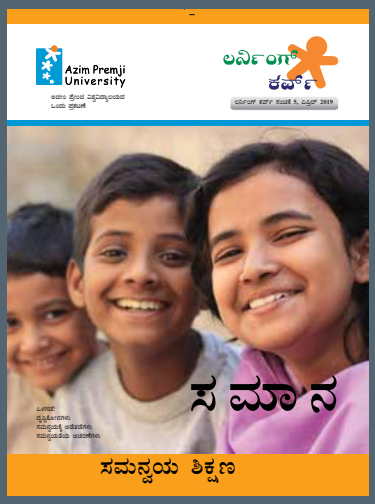

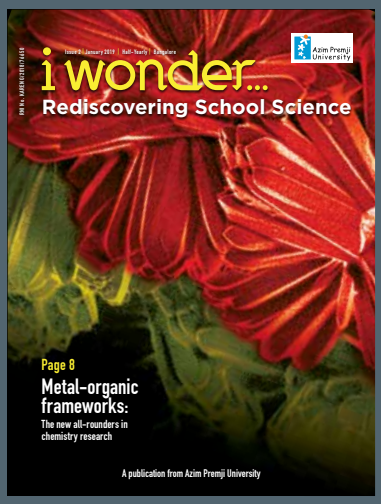

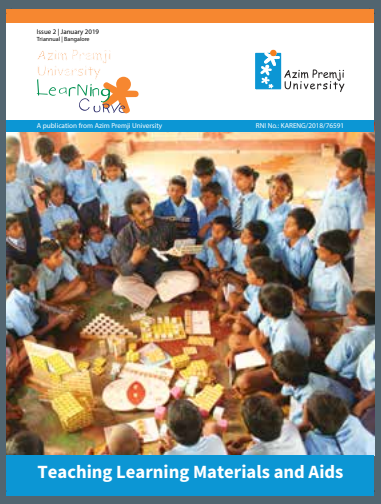

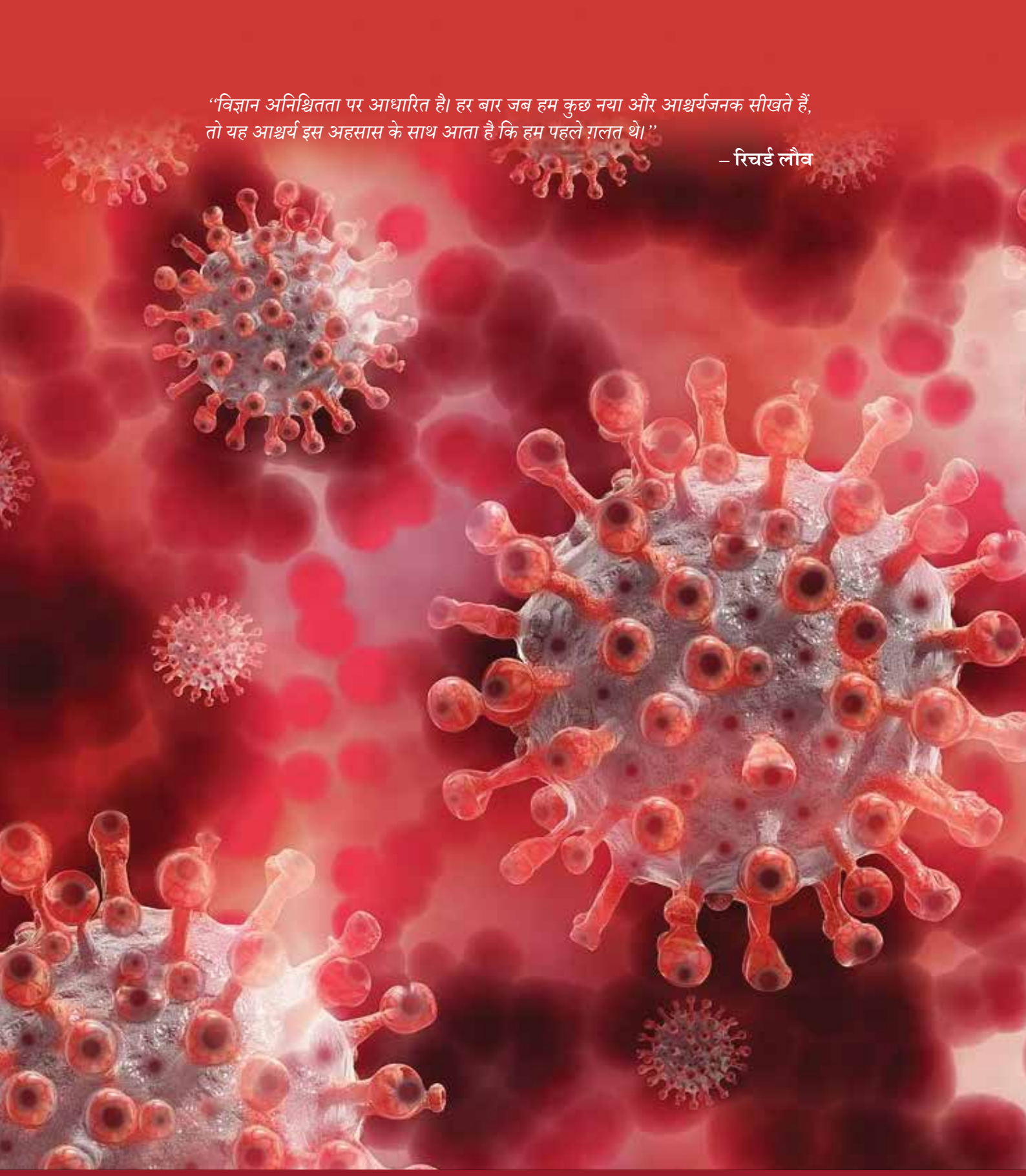

“विज्ञान अनिश्चितता पर आधारित है। हर बार जब हम कुछ नया और आश्चर्यजनक सीखते हैं, तो यह आश्चर्य इस अहसास के साथ आता है कि हम पहले ग़लत थे।”

– रिचर्ड लौव

आई वंडर... का अगला अंक ‘महामारी की खोज-पड़ताल’

Azim Premji University
Pixel Park, PES Campus, Electronics City, Hosur Road,
Bangalore - 560100
080-6614 5136
www.azimpremjiuniversity.edu.in
Facebook: /azimpremjiuniversity
Instagram: @azimpremjiuniv
Twitter: @azimpremjiuniv